भाकृअनुप
ICAR

उत्कृष्टता की ओर बढ़ते कदम

इक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 7 अंक 1
जनवरी–जून 2018

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

माननीय प्रधान मंत्री महोदय द्वारा पंडित दीन दयाल उपाध्याय कृषि विज्ञान प्रोत्साहन पुरस्कार जोन–III, 17 मार्च, 2018 को प्रदान किया गया।

माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार द्वारा महिंद्रा समृद्धि कृषि पुरस्कार 06 मार्च, 2018 को प्रदान किया गया।

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
वर्ष 7 : अंक 1
जनवरी–जून, 2018

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक
अश्विनी दत्त पाठक

सम्पादक
अजय कुमार साह

सह–सम्पादक
आदित्य प्रकाश द्विवेदी
ब्रह्म प्रकाश
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन
विपिन धवन
योगेश मोहन सिंह
अवधेश कुमार यादव

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं।
संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :

संपादक, इक्षु एवं
प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002
ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2018 : संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक	अध्यक्ष
डॉ. सुधीर कुमार शुक्ल	सदस्य
डॉ. डी.आर. मालवीय	सदस्य
डॉ. वी.पी. सिंह	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) राधा जैन	सदस्य
डॉ. महाराम सिंह	सदस्य
डॉ. ए.के. सिंह (कृषि अभियंत्रण)	सदस्य
डॉ. वी.के. गुप्ता	सदस्य
डॉ. एस.आई. अनवर	सदस्य
डॉ. ए.पी. द्विवेदी	सदस्य
श्री ऋषि राम	सदस्य
श्री अतुल सचान	सदस्य
श्रीमती आशा गौर	सदस्य
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. अजय कुमार साह	सदस्य सचिव

प्रकाशक
निदेशक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002
फोन : 0522–2961318 फैक्स : 0522–2480738
ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in
वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : आर्मी प्रिंटिंग प्रेस, 33, नेहरू रोड, सदर कैण्ट, लखनऊ–226002, फोन : 0522–2481164

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

निदेशक की लेखनी से.....

मुझे यह सूचित करते हुये अपार हर्ष एवं आनन्द की अनुभूति हो रही है कि वर्ष 2017–18 के पेराई सत्र में भारत ने 320 लाख टन चीनी उत्पादन कर इतिहास रच दिया और इस ऐतिहासिक उपलब्धि में उत्तर प्रदेश का उल्लेखनीय योगदान रहा। उत्तर प्रदेश ने इसी सत्र में 120.5 लाख टन चीनी उत्पादन कर नया कीर्तिमान रच दिया। इस गौरवमयी उपलब्धि में संस्थान द्वारा विकसित तकनीकों तथा निरंतर रूप से क्रियान्वित किये जा रहे प्रसार कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

विभिन्न शोध संस्थानों, राज्यों के गन्न विकास विभागों तथा गन्ना किसानों के अथक एवं समन्वित प्रयासों ने हमें इस गौरव को प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया। उत्तर प्रदेश में विगत तीन वर्षों में गन्ने की उत्पादकता एवं चीनी परता में भी सार्थक वृद्धि दर्ज की गयी है। चीनी उद्योग द्वारा कुशल प्रबंधन के मार्गदर्शन में चीनी प्रसंस्करण की उच्चतर प्रौद्योगिकी के उपयोग से चीनी परता में उत्साहजनक सुधार हुआ है। यद्यपि श्रमिकों की कमी, उत्पादन लागत में वृद्धि, अधिक चीनी उत्पादन तथा बाजार में चीनी के कम मूल्य होने के कारण चीनी मिलों द्वारा गन्ना किसानों को उनके द्वारा उपलब्ध कराए गए गन्ने का समय पर भुगतान न दे पाने के कारण बढ़ती बकाया राशि आज भी चीनी उद्योग की ज्वलंत समस्या है, जिनका शीघ्र निदान करना समय की आवश्यकता के साथ किसानों को गन्ने की खेती से जोड़े रखने के लिए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुना करने की महत्वाकांक्षी लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में गन्ना क्षेत्र में निहित अपार संभावनाओं के दोहन के लिए संस्थान ने डीसीएम श्रीराम लिमिटेड (डीएसएल), नई दिल्ली से वर्ष 2017 में चार चीनी मिलों के अधीनस्थ क्षेत्रों में पब्लिक–प्राइवेट–पार्टनरशिप (पीपीपी) मोड में एक समझौता पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य उत्तर प्रदेश के दो जिलों (लखीमपुर एवं हरदोई) के आठ गाँवों में सभी 5500 कृषक परिवारों की आय को वर्ष 2021 तक दोगुना करना है। इसके लिए गन्ना उत्पादन, अन्य फसल उत्पादन तथा अन्य सहयोगी कृषि क्षेत्रों जैसे डेरी, पशु–पालन, मुर्गी–पालन, मत्स्य–पालन, शहद उत्पादन तथा ग्रामीण उद्यमिता विकास इत्यादि क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी एवं विकास हस्तक्षेपों का प्रयोग किया जा रहा है। इनके प्रयोग से आशातीत परिणाम प्राप्त भी होने लगे हैं। आधार वर्ष 2015–16 की तुलना में गन्ना उत्पादन से प्राप्त आय ₹ 1.10 लाख/हे. की तुलना में वर्ष 2017–18 में गन्ना से प्राप्त शुद्ध आय ₹ 2.00 लाख/हे. हो गयी।

मुझे यह सूचित करने हुए भी अपार हर्ष हो रहा है कि संस्थान परिसर में 26–28 अक्टूबर, 2018 को कृषि कुंभ 2018 का आयोजन प्रस्तावित है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय व राज्य स्तर के विभिन्न शोध संस्थानों, निवेश निर्माताओं, सेवा प्रदाताओं व उद्यमियों द्वारा उत्तर प्रदेश के किसानों को नवीनतम प्रौद्योगिकी एवं सूचनाओं से अवगत कराया जाएगा। इसमें कृषक भाई अवश्य सहभागिता करें जिससे उनको नवीनतम कृषि ज्ञानगंगा में डुबकी लगाकर पुण्य कमाने का लाभ मिलेगा और इस लाभ से वे अपनी आय में भी वृद्धि कर सकेंगे।

मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि इक्षु पत्रिका का यह अंक भी कृषि विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में नवीनतम उपलब्धियों के बारे में अत्यंत सरल एवं सुबोध भाषा–शैली में किसान भाईयों को सूचनापरक एवं लाभप्रद जानकारी प्रदान करेगा। जिसे वे अपनाकर अपनी आय में वृद्धि कर सकेंगे जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार होगा, साथ ही उनके चेहरे पर मधुर मुस्कान भी आएगी।

स्थान : लखनऊ
दिनाँक : 2 जुलाई, 2018

(अश्विनी दत्त पाठक)

डॉ. अजय कुमार साह
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, प्रसार व प्रशिक्षण
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी, राजभाषा प्रभाग प्रकोष्ठ

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002
ISO 9001 : 2015

'इक्षु–सार'

'इक्षु' का अंक 7 (1) आप सभी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अति हर्ष की अनुभूति हो रही है। हमेशा की तरह यह अंक भी ज्ञान के अनेक रंगों को अपने अंदर समाहित कर आपके सामने प्रस्तुत है। 'इक्षु' के प्रत्येक अंक को प्रकाशित करने में मेरा यह प्रयास होता है कि इसमें आलेखों का चुनाव एवं समायोजन इस प्रकार किया जाए जिससे पाठकों को कृषि, गन्ना खेती, राजभाषा तथा व्यवहारिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर वैज्ञानिक एवं उपयोगी जानकारी से परिचित कराया जा सके। मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि इस प्रयास में मुझे सफलता प्राप्त हुई है। राष्ट्रीय स्तर पर इस पत्रिका को प्राप्त सम्मान/पुरस्कार तथा पाठकों के बीच इसकी बढ़ती लोकप्रियता इस कथन को प्रमाणिकता प्रदान करता है। एक बार पुनः 'इक्षु' में आलेख लिखने वाले सभी लेखकों तथा सम्पादन मण्डल के सदस्यों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। सभी पाठकों को भी इस पत्रिका को मनोभाव से पसंद करने के लिए साधुवाद देता हूँ।

'इक्षु' के इस अंक में राजभाषा, ज्ञान–विज्ञान, आरोग्य एवं संजीवनी, आमोद–प्रमोद, शब्दकोश, आपके पत्र तथा समाचार प्रभाग के अंतर्गत विभिन्न रंगों के ज्ञान रूपी फूलों को अलग–अलग पुष्पगुच्छ में सजाकर रोचक तरीके से प्रस्तुत किया गया है। राजभाषा प्रभाग में प्रकाशित भारत का भाषायी परिदृश्य; वैश्विक बाजारवाद में उभरती भाषाई चुनौतियाँ; विज्ञान प्रसार में भाषा की भूमिका; भिन्न–भिन्न अर्थ वाले हिंदी के शब्द जैसे आलेख निश्चित रूप से पाठकों को राजभाषा हिंदी के अनछुए पहलुओं से परिचित कराएगा। ज्ञान–विज्ञान प्रभाग के अंतर्गत समाहित आलेख जैसे नैनो–टेक्नोलॉजी द्वारा किसान का विकास; समेकित प्रबंधन द्वारा गन्ना बीज उत्पादन; गन्ने की खेती में जीवामृत; गन्ना खेती यंत्र; रबी प्याज की खेती; नदी परिस्थितिकी पर रसायनिक कृषि का दुष्प्रभाव; मृदा स्वास्थ्य कार्ड, वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन; जैविक खेती में रोग व कीट नियंत्रण; बकरी पालन इत्यादि किसानों तथा कृषि से जुड़े अन्य वर्गों के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। मानव स्वास्थ्य पर उचित सलाह व जानकारी के लिए आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग में गन्ने के रस के फायदे और नुकसान; केला में पोषक तत्व एवं औषधिक गुण; पेट के रोग जैसे विषयों पर सम्मानित लेखकों द्वारा तैयार आलेख समाहित किए गए हैं। पाठकों का मनोरंजन करते हुए ज्ञान प्रदान करने के लिए हमेशा की तरह आमोद–प्रमोद प्रभाग में प्रस्तुत रोचक जानकारी इस अंक को समग्रता प्रदान करती है। शब्द कोश में समाहित शब्द ज्ञान, प्रतिष्ठित संस्थानों से प्राप्त पत्र एवं विभिन्न आयोजनों पर प्रस्तुत समाचार पत्रों की झलकियों ने इस अंक को रोचक एवं आकर्षक बनाने में अपना सार्थक योगदान दिया है।

समय–समय पर आपका मार्गदर्शन हमें मिलता है जिससे हमें इस पत्रिता को और बेहतर स्वरूप में प्रस्तुत करने की प्रेरणा मिलती है। मैं विद्वत पाठकों तथा लेखकों को 'इक्षु' के अगले अंकों में रोचक व नवीन जानकारी पर आलेख लिखने के लिए आमंत्रित करता हूँ। मुझे विश्वास है कि 'इक्षु' के आने वाले अंकों में भी हम विभिन्न विषयों पर आधुनिक तथा वैज्ञानिक ज्ञान प्रस्तुत करते रहेंगे।

स्थान : लखनऊ
दिनाँक : 2 जुलाई, 2018

(अजय कुमार साह)

इक्षु: राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष 7 : अंक 1
जनवरी–जून, 2018

विषय वस्तु

राजभाषा प्रभाग 1–9

भारत का भाषायी परिदृश्य 1
सूर्य प्रसाद दीक्षित

विज्ञान प्रसार में भाषा की भूमिका 6
सुरेश कुमार

समान प्रतीत होते हुए भी भिन्न–भिन्न अर्थ वाले हिंदी के कुछ शब्द 8
अभिषेक कुमार सिंह, अजय कुमार साह, ब्रह्म प्रकाश, अतुल कुमार सचान एवं आशीष सिंह यादव

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग 10–75

नैनोटेक्नोलॉजी का साथ : किसान का समग्र विकास 10
राघवेन्द्र कुमार एवं संगीता श्रीवास्तव

कृषि में समय की उपयोगिता एवं महत्व 14
सी.पी. सिंह एवं देवेन्द्र सिंह

समेकित प्रबंधन द्वारा उत्पादित स्वस्थ बीज से गन्ने की उपज व शर्करा बढ़ाएँ 17
राम जी लाल

गन्ने में पेड़ी का प्रबंधन कैसे करें? 21
मोहन सिंह एवं आर.के. सिंह

गन्ने की खेती में डि–ट्रैशिंग, मृदुकरण, होइंग एवं प्रोपिंग का महत्व 22
आशुतोष कुमार मल्ल, वरूचा मिश्रा, मुकेश कुमार, बी.डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक

बिहार में गन्ने की बंधाई का महत्व एवं विधियां 24
मुकेश कुमार, ए.के. मल्ल, वरूचा मिश्रा, बी.डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक

गन्ने की खेती में जीवामृत : एक जैविक विकल्प 26
राजीव कुमार, अंशु सिंह, अमरेश चंद्रा, सी.पी. सिंह एवं राधा जैन

ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का आर्थिक विश्लेषण 27
सुखबीर सिंह एवं अखिलेश कुमार सिंह

गन्ना बुवाई यंत्र – जनशक्ति का प्रयोग कम 29
संजय कुमार, अमित कुमार एवं मानवेन्द्र सिंह

बाजरा की खेती 34
ए.के. मल्ल, ऋतु मावर एवं एस.आर. कांटवा

उत्तर मैदानी क्षेत्र में रबी प्याज की खेती से लाभ कमाएँ 36
नीतू कुमारी

करेला की खेती की नवीनतम विधियाँ 39
शीशपाल सिंह, बी.पी. शाही, विवेकानन्द सिंह, दीपक राय एवं मयंक कुमार राय

नदी परिस्थितिकी पर रसायनिक कृषि का दुष्प्रभाव 42
ए.पी. द्विवेदी, अश्विनी दत्त पाठक, सुधीर कुमार शुक्ल, वेद प्रकाश सिंह, संजीव कुमार, मनोज कुमार त्रिपाठी, एस.आर. सिंह, विनय कुमार सिंह एवं अभिषेक कुमार सिंह

मृदा स्वास्थ्य कार्ड : टिकाऊ कृषि का मुख्य आधार 45
ओम प्रकाश, अजय कुमार साह, अश्विनी दत्त पाठक, ब्रह्म प्रकाश एवं पल्लवी यादव

स्वरोजगार सृजन हेतु करें वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन 48
नरेन्द्र सिंह

बहुफसली कृषि प्रणाली में एलीलोपैथी का प्रभाव एवं उसका निराकरण 49
सत्यम चौरिहा, आदित्य कुमार सिंह, नरेन्द्र सिंह एवं धीरेन्द्र कुमार

समंवित पीड़क पक्षी प्रबंधन विधि द्वारा कृषि उपज का हानिकारक पक्षियों से बचाव 51
यीतेश कुमार, अभिषेक कुमार सिंह, पंकज भार्गव एवं अनुप्रिया चंद्राकार

सरसों की फसल में समेकित कीट प्रबंधन 57
विनोद कुमार सिंह, ऋचा सिंह एवं सुरेश सिंह

जैविक खेती में रोग एवं कीट नियंत्रण के लिए स्वीकृत खनिज पदार्थ 61
दीक्षा जोशी, एस.एन. सुशील एवं एस.के. अवस्थी

मटर में लगने वाले प्रमुख रोग तथा उनके समेकित प्रबंधन 63
राहुल कुमार, शिखा यादव एवं फौजिया बारी
बकरी पालन : एक लाभप्रद व्यवसाय 66
अतुल कुमार सचान, आर.के. सिंह, अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं नीलम कुमार सिंह
केंचुआ खाद उत्पादन की विधि 69
ऋतु मावर, ए.के. मल्ल एवं एस.आर. कांटवा
किसानों की आय बढ़ोतरी के सुझाव 70
आद्यांत कुमार, बबलू शर्मा एवं प्रभात कुमार सिंह
कृषकों की आय दुगुना करने के लिए कृषि विज्ञान केंद्र, दहिगाँव, अहमदनगर के प्रयास 73
एस.एस. कौशिक एवं प्रकाश हिंगे
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के सतह–चिन्ह 74
अशोक कुमार श्रीवास्तव

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग 76–86
गन्ने के रस के फायदे और नुकसान 76
दिव्या साहनी, संगीता श्रीवास्तव, अश्विनी दत्त पाठक एवं राघवेन्द्र कुमार
सिरका : एक बहुपयोगी उत्पाद 79
मिथिलेश तिवारी, नेहा प्रधान, त्रिशला साहू, एस.आई. अनवर एवं ए.के. सिंह
केला–पोषक तत्व की मात्रा एवं औषधीय गुण 82
एस.डी. पाण्डेय, सी.के. नारायन, राजीव रंजन राय एवं अमरेन्द्र कुमार
पेट के रोग 85
कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'

आमोद–प्रमोद प्रभाग 87–96
बरमूडा त्रिकोण (ट्राइंगल) – एक रहस्यमय स्थान 87
वरूचा मिश्रा, एस.पी. शुक्ला, आर.एस. चौरसिया एवं गणेश नेगी
ई–मेल करते समय अवश्य ध्यान रखें 88
ब्रह्म प्रकाश, अतुल कुमार सचान, मोहम्मद अशफ़ाक एवं आशीष सिंह यादव
फोटोग्राफी करते समय ध्यान रखने योग्य कुछ बातें 90
योगेश मोहन सिंह, ब्रह्म प्रकाश, अवधेश कुमार यादव, विपिन धवन एवं मोहम्मद अशफ़ाक
विचलित मन 92
प्रवीण कुमार सिंह
परिश्रम 93
मैकू कन्नौजिया एवं आर.एस. चौरसिया
महान वैज्ञानिक मैरी क्यूरी 93
प्रशांत कमल श्रीवास्तव एवं आर.एस. चौरसिया
आशा–निराशा 94
आर.एस. चौरसिया
बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ 94
कुलप्रीत सिंह
माटी की ये अदभुद् गाथा 95
ओम प्रकाश
मृदा संरक्षण 95
ब्रह्म प्रकाश
वक्त नहीं 96
आर.एस. चौरसिया
गन्ने का पौधा 96
सुनील कुमार मिश्रा

नराकास प्रभाग 97
नगर राजभाषा कार्यन्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ छमाही प्रगति 97
शब्द कोष 98
आपके पत्र 102
समाचार प्रभाग 103

राजभाषा प्रभाग

Hkkjr dk Hkk"kk;h ifjn';

l|;! i!lkn nhf{kr

iol ik/;kid] fgnh foHkkx] y[kuÅ fo'ofo|ky;] y[kuÅ

भारत एक संस्कृतिक बहुल और बहुभाषी राष्ट्र है। यहाँ लगभग साढ़े सोलह सौ भाषायें हैं, चौबीस भाषायें हैं, जिनमें बाईस को संविधान से मान्यता प्राप्त हैं। चौबीस भाषाएँ साहित्य अकादमी द्वारा अनुमन्य हैं। इन भाषाओं में रचित साहित्य में देशकाल परक यत्किंचित अंतर भी है तो उनकी आत्मा अभेद्य है। अधिकतर विद्वानों की मान्यता है कि भारतमाता भिन्न-भिन्न भाषाओं में बोलती है, पर उसका स्वर अभिन्न अर्थात एक जैसा है। कुछ विद्वानों का कुतर्क है कि भारत में राष्ट्रीयता का सन्निवेश विगत इन्हीं दो सदियों में हुआ है, जो मुझे तथ्याश्रित नहीं लगता; क्योंकि "अहं राष्ट्री संगमनी बसूनाम" का नारा यहाँ हजारों वर्षों से प्रचलित है। यह सही है कि भारतीय इतिहास, भूगोल और संस्कृति बोध में काफी विविधता है, किन्तु राष्ट्रवाणी में इस अनेकता में एकता का अन्तः सूत्र स्थापित करना असंभव नहीं है।

अस्तु भारतीय भाषा परिवार को इन चार अंचलों में विभाजित करके देखना समीचीन होगा -

- पूर्वोत्तर की भारतीय भाषाएं जैसे - बांग्ला, असमिया, उड़िया, मणिपुरी, संथाली, नेपाली, बोडो।
- पश्चिमोत्तर भारत की भाषाएं - कश्मीरी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, कोंकणी, डोगरी, सिन्धी।
- दक्षिणात्य भाषाएं - तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़।
- मध्य हिंदी देश अर्थात् उत्तरी हिंदी उर्दू पट्टी के दस राज्य।
- देशान्तरी भाषाएं जैसे - मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद, नेटाल, ताज्जुकी, रोमा आदि के हिंदी रूप, श्रीलंका की तमिल तथा बांग्लादेश की बंगाली।

विदेशी भाषाविदों ने अपने निहित उद्देश्य से इस देश के जो भाषा-परिवार स्थिर किये, उनसे आर्य और द्रविड़ का अनावश्यक भेद-भाव पैदा हो गया। वस्तुतः दक्षिण की भाषायें उसी तरह संस्कृत मूल से जुड़ी हुई हैं, जैसे अन्य भाषाएँ भारोपीय परिवार में रखी जा सकती हैं तो भारतीय भाषाओं को आर्य-द्रविड़ा परिवारों में विभाजित करने का कोई औचित्य नहीं है।

बहरहाल, इन भाषाओं में रचित साहित्य की अंतवर्ती एकता का मुद्दा महत्वपूर्ण है। इसे तुलनात्मक भारतीय साहित्य का नाम भी दिया गया है, जबकि मेरा आग्रह है कि इस भारतीय साहित्य को स्वतंत्र अनुशासन के रूप में स्थापित किया जाये और यथासम्भव इसे देवनागरी लिपि में लिखा जाये।

यह अभियान शारदाशरण मित्र जी ने "एक लिपि विस्तार परिषद्" की स्थापना करते हुए सौ वर्ष पूर्व शुरू किया था। उसके पुनरारम्भ की आवश्यकता है। यह भी जरूरी है कि विभिन्न भारतीय साहित्येतिहासों को मिलाकर एक समेकित इतिहास निर्मित किया जाये। भारतीय भाषाओं में संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश के अतिरिक्त तमिल रचनाकार उनका समर्थन नहीं करते। इससे स्पष्ट है कि अब वे सहअस्तित्व के कायल हैं और अखण्ड भारत की प्रभुसत्ता से प्रतिबद्ध भी। यही कारण है कि भारत, पाक विभाजन पर दुःख दर्द व्यक्त करती हुई दर्जनों रचनाएँ भारतीय भाषाओं में प्रकाशित हुई हैं।

भारतीय साहित्य का केन्द्रीय विषय

समाज सुधार अथवा नव जागरण। यह जागरण एक बार पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में भक्ति आन्दोलन के रूप में समस्त भारतीय भाषाओं में तब शुरू हुआ था, जब पूजा स्थलों को ध्वस्त करके बलात् धर्मान्तरण कराते हुए इस्लामेत्तर जनता का उत्पीड़न किया गया था। दूसरी बार यह नवजागरण उन्नीसवीं सदी में अंग्रेजों के आर्थिक शोषण की प्रतिक्रिया में आरम्भ हुआ। पहला जागरण मुख्यतः धार्मिक था और दूसरा आर्थिक। शेष कालखण्डों में भारतीय जनता निरपेक्ष रही है। पिछले दशकों में आपातकाल की प्रतिक्रिया में लोकतंत्र की बहाली के लिए हर साहित्य ने एकजुट होकर मिलीजुली आवाज उठाई। इससे सिद्ध होता है कि भारतीय साहित्य सदैव अनय के प्रतिरोध हेतु सक्रिय रहा है।

पिछले दशकों में साहित्य पद्य लेखन के केंद्र में आ गया। लोक मंगल और युग प्रबोधन को सुरूचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करते हुए उपन्यास यानि कथा कहानी-शिल्प को अपेक्षाकृत अधिक प्रश्रय मिला। पहले जिस उपन्यास विधा को गल्प या गप्पा माना जाता था, वह हर साहित्य में इस बीच नये समाज शास्त्र के रूप में प्रतिष्ठित हो गई है। मुख्य विषय हो गये- सामंती शोषण, स्त्री-उत्पीड़न, दलित संवेदना, छुआछूत, दहेज, पर्दा प्रथा, नशाखोरी, सती प्रथा, भ्रूण हत्या, साम्प्रदायिकता, मुनाफाखोरी, प्रशासनिक

भ्रष्टाचार, माफियातंत्र आदि। असमिया की नलिनी वाला, तेलुगु के वीरेशलिंगम, विश्वनाथ सत्य नारायण, उड़िया के हरेकृष्ण महताब, कालिन्दी चरण पाणिग्रही, गुजराती के के.एम. मुंशी, उमाशंकर जोशी, बांग्ला के तारा शंकर बन्द्योपाध्याय, मराठी के कुसुमाग्रज, केशवसुत आदि की रचनाओं में यही युगबोध प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है। हिंदी कथाकारों में प्रेमचन्द्र की परम्परा में जैनेन्द्र, राहुल सांकृत्यायन, इलाचन्द्र जोशी, भगवतीचरण वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, अमृतलाल नागर, राहुल, यशपाल आदि का यही मुख्य प्रतिपाद्य रहा है। कवियों, नाटककारों और निबंधकारों ने नव मानवतावाद, आदर्शवाद, यथार्थवाद, सुधारवाद, युग विद्रोह आदि के नाम पर इन्हीं बिन्दुओं को मुख्यतः उजागर किया है।

चिंतन का एक महत्वपूर्ण पक्ष रहा है

भारतीय इतिहास की पुनर्रचना। अंग्रेज लेखकों ने हमारे इतिहास को विरूपित करने का जो षड्यंत्र किया था, उससे प्रतिक्रिया प्रेरित होकर कई रचनाकारों ने नाटकों, लेखों, जीवनियों एवं उपन्यासों के माध्यम से कई चरितनायकों की स्थापना की और घटनाओं पर पक्षापक्ष-विमर्श किया। हिंदी में जो प्रयास, नाटक के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद, डॉ. रामकुमार वर्मा, लक्ष्मीनारायण मिश्र आदि ने किया, उपन्यास क्षेत्र में जो प्रयोग वृन्दावन लाल वर्मा, रांगेय राघव, राहुल सांकृत्यायन, चतुरसेन शास्त्री, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि ने किया, लगभग वैसा ही प्रयास उड़िया में जगन्नाथ दास, मराठी के कृष्णाजी प्रभाकर खाडिलकर, खांडेलकर मामा बरेरकर, गुजराती के के.एम. मुंशी और तेलुगु के मोटूरी सत्यनारायण आदि ने भी किया है। राष्ट्रीय संस्कृति को गरिमा मण्डित करने में संस्कृत की कमला रत्नम, मलयालम के केसरी बालकृष्ण पिल्लै, उड़िया के सीताकांत महापात्र और कन्नड़ के कुवेंपु के प्रयासों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

भारतीय साहित्य की एक मिली-जुली प्रवृत्ति है, प्रकृति-प्रेम अथवा देश के विभिन्न पहाड़ों, नदियों, ऋतुचक्रों और भौगोलिकी तथ्यों का चित्रण। शायद ही कोई भाषा हो, जिसमें देश को तीन ओर घेरे हुए समुद्रों का, हिमालय की श्रृंखलाओं का, गंगा, यमुना, गोदावरी, नर्मदा, कृष्णा, कावेरी, महानदी आदि का भाव भीना वर्णन न हुआ हो। हिंदी में जो श्रेय सुमित्रानंदन पन्त जी को दिया जाता है, वहीं मलयालम के बल्लेतोल, जी. संकर कुरूप, उल्लूर, कुमारान आसान और गुजराती के सुन्दरम को भी देय है। प्रत्येक अंचल की वनस्पतियाँ, जीव-जन्तु यानी वाह्य परिदृश्य कुछ भिन्नता के बावजूद प्रायः उष्ण कटिबंधीय जलवायु से जुड़ा हुआ है। हमारा साहित्य प्रकृति के उन विविध रूपों को पहचानाता रहता है। यही स्थिति प्रेम और सौन्दर्यबोध की है। उससे प्रेरित कुछ रचनाकार स्वच्छंदवादी प्रतीत होते हैं और कुछ अध्यात्म के स्तर तक पहुँचे हुए।

निष्कर्ष यह है कि भारतीय समाज में भौतिक प्रगति के सम-विषम कई स्तर दिखाई देते हैं।

एक समेकित भारतीय साहित्य

भारतीय साहित्य की मूलभूत एकता अनेक भाषाओं में दिखाई देती है। हिंदी का भक्ति काव्य और तमिल में रचा गया सांक्रतायन भक्तों का साहित्य एक दूसरे के बहुत निकट है। भागवत में 'वर्णित' कृष्ण कथा और 'तमिल प्रबंधम' में बड़ा भाव साम्य है। इस दृष्टि से दोनों भाषाओं का भक्ति काव्य परस्पर पूरक है। दक्षिणी भाषाओं के अनेक कवि हिंदी कवियों से तुलनीय हैं। जैसे-कबीर और बेमना, सूरदास और महाकवि पोतना, मीरा और आन्डाल, सन्त कवि और तिरूवल्लवर, सुब्रमाणीया भारती और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला। गुजरात के सन्तों का विशेषतः नरसी मेहता और अखा का बड़ा साम्यभाव हिंदी कवियों से दिखता है। गुजरात के कच्छ क्षेत्र, मुख्यतः भुज में वर्षों तक ब्रज भाषा काव्य-प्रशिक्षण की पाठशाला चलती रही है। गुजरात में दयाराम, गोविन्द गिल्ला भाई जैसे अनेक साहित्यकार हुए हैं, जिनका हिन्दी-गुजराती में प्रायः समान योगदान है। मराठी के ज्ञानेश्वर तथा नामदेव की हिन्दी रचनाएँ, तुकाराम के अभंग और काका कालेलकर तक की परम्परा का हिन्दी से संबंध है। 'भावार्थ' रामायण' और समर्थ गुरू रामदास का 'दासबोध' हिंदी राम काव्य परम्परा तथा सन्त परम्परा से अभिन्न है। पंजाब में गुरू नानक देव, बाबा फरीद, भाई संतोख सिंह, गोबिंद सिंह आदि से लेकर आधुनिक युग के अनेक कवियों, कथाकारों, नाटककारों, पत्रकारों और समीक्षकों के साथ हिंदी का गहरा सरोकार रहा। यही स्थिति तमिल की कंबन रामायण, बांग्ला की कृतिवासी-रामायण, असमिया के शंकर देव, माधव जी की रामायण एवं अंकिया नाट की है। बांग्ला में चैतन्य को कृष्णावतार कहा गया है। वहाँ चण्डीदास, जयदेव और विद्यापति में भेद कर पाना कठिन है। इधर कुछ स्फुट हिंदी रचनाएं चैतन्य, जयदेव, आदि की मिली हैं। गुरूदेव रवीन्द्र तक कबीर के रहस्यवाद से प्रेरित रहे हैं। बंगाल में प्रचलित ब्रजबुली का साहित्य इसका प्रमाण है। इसी प्रकार बंगाली के चर्या गीत, बाउल, कीर्तन तथा वैष्णव पदावली एक ही सांस्कृतिक धारा से उद्भूत हैं।

वस्तुस्थिति यह है कि प्रत्येक भारतीय भाषा का आरम्भिक युग मुख्यतः लोक चेतना पर आधारित रहा है। मध्यकाल प्रायः वैष्णव भक्ति आन्दोलय से ओत-प्रोत है। उत्तरवर्ती युग सामन्ती संस्कृति से उद्भूत है और आधुनिक काल नव जागरण तथा भूमण्डलीकरण से प्रोद्भासित है। 19वीं शती में माइकल मधुसूदन

कृत 'मेघनाद वध' की नवचरित्र-परिकल्पना, बंकिम चन्द्र और शरद चन्द्र चटोपाध्याय की नई सामाजिक संचेतना और गुरूदेव रवीन्द्रनाथ की वैश्विक चेतना समूचे भारतीय साहित्य में समाहित हो गई। यही प्रवृत्ति भारतेन्दु और द्विवेदी के समकालीन हिंदी लेखन में सक्रिय हुई और इसी ने कन्हैयालाल मानेकलाल मुन्शी, प्रेमचन्द, प्रसाद, निराला, पन्त, गिरीश, गिरिश चन्द्र घोष, आरिग पूड़ि, बालशैरि रेड्ड, प्रभाकर माचवे, अज्ञे, रांगेत राघव, देवराज दिनेश आदि को एक साथ प्रेरित और प्रभावित किया। इसी समन्वित भारतीय संस्कृति के कारण मुक्तिबोध और माचवे मराठी के बजाय हिंदी रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

भाषायी सौहार्द का यह रूप 200 वर्ष पूर्व त्रिवेन्द्रम के राजा स्वाति तिरूनाल राम वर्मा द्वारा रचित ब्रजभाषा छन्दों में दिखाई देता है, जिन्होंने लगभग 100 पद-रचनाएँ हिंदी में की। यथा-

विश्वेश्वर दरसन कर चल मन तुम कासी।

विश्वेश्वर दरसन जप कीन्हों जब प्रेम सहित

काटे करूणा निधान जनम मरण फाँसी।

पदुमनाभ कमलनयन त्रिनयन सभों महेश

भज ले इन दो स्वरूप रहित अबिनासी।

सम्प्रति अनेक भाषाओं से सम्बद्ध विभिन्न क्षेत्रों के निवासी हिंदी में रचना कर रहे हैं। या यह कहें कि प्रत्येक भाषा एक दूसरे का रूपान्तरण कर रही है। हर भाषा का रचना-संसार लगभग एक जैसा ही है, क्योंकि वह एक ही देशकाल और व्यवस्था की उपज है। हम भारतीयों का संकल्प यही है कि भारत की भारती एक है, जो निराला जी के शब्दों में, कोटि-कोटि कण्ठों द्वारा मिली जुली अनुभूतियों को शब्द दे रही है। चाहे प्रगति हो या प्रयोग, दलित साहित्य हो या जन-साहित्य, आधुनिकता, आक्रोश और मंगलाशा का स्वर लगभग एक साथ गुंजरित होता रहा है।

भारतीय उपमहाद्वीप में, प्रवासी भारतीयों में और भारतवंशियों के बीच सांस्कृतिक सम्बन्ध को जीवित रखने का विशेष श्रेय हिंदी भाषा और साहित्य को है। मारीशस और फिजी में भोजपुरी, अवधी लोकगीतों और रामचरित मानस जैसे ग्रंथ का जो प्रचलन है, वह इन देशों के वैदेशिक अथवा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का सेतु है। परराष्ट्र-नीति का सेतु भी भारतीय भाषा साहित्य ही हो सकता है, न कि व्यापारिक और राजनयिक सम्बन्ध।

भारत के समक्ष इस समय जो पृथकतावाद, आतंकवाद, उग्र सम्प्रदायवाद आदि की समस्यायें चल रही हैं, उनका एक निराकरण भाषा और साहित्य के पास भी है। इन भाषाओं में जो सांस्कृतिक समन्वय से सूत्र भरे हुए हैं, उन्हें उजागर करने की आवश्यकता है। भारतीय साहित्य के माध्यम से यदि एक समेकित संस्कृति की पहचान करा दी जाए तो विघटन की प्रक्रिया काफी कुछ रोकी जा सकती है।

भारतीय भाषिक परिवेश

भारत संस्कृति बहुल देश है। प्रसिद्ध उक्ति है - 'तीन कोस में पानी बदले, पाँच कोस में बानी।' यही भारत की विविध भारती है। निरालाजी के शब्दों में भारत माता-''शतमुख शतरव मुखरे'' है।

भारत में अनेक देशी-विदेशी एवं प्रांतीय समृद्ध भाषाएँ हैं। उनमें हिंदी को जनभाषा-राजभाषा-राष्ट्रभाषा स्वीकार किया गया है। साहित्यिक समृद्धि की दृष्टि से संस्कृत भाषा का साहित्य संसार की प्राचीन भाषाओं में सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। अरबी, फारसी की गणना संसार की मुख्य भाषाओं में की जाती है। दक्षिण भारत की भाषाएँ साहित्यिक समृद्धि की दृष्टि से कम नहीं हैं। भारतीय भाषाओं में मराठी, गुजराती, उड़िया, बंगला साहित्यिक समृद्धि की दृष्टि से अग्रगण्य है, फिर भी हिंदी को ही पूरे राष्ट्र की भाषा स्वीकार किया गया है। इसके पुरोधा रहे हैं - लोकमान्य तिलक और गाँधी जी। इस स्वीकृति के मूल में प्राचीन भारतीय राष्ट्रभाषा की वह परम्परा कार्य कर रही है, जिसने हिंदी को यह महत्वपूर्ण पद प्रदान किया है। बहुभाषिकता उसकी सबसे बड़ी शक्ति है।'

ज्ञातव्य है कि भारतीय भाषाओं का व्यवस्थित स्वरूप प्रथम बार ग्रियर्सन के *'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया'* से स्पष्ट हुआ। इससे कुछ भ्रांतियां भी उत्पन्न हो गई। इससे पूर्व जॉन बीम्स ने अपनी पुस्तक *'आउटलाइन्स ऑफ दांडियन फिलोलॉजी'* में भारतीय भाषाओं का विभाजन किया था, जिसके अनुसार आर्यवर्ग में 11 भाषाएँ, ईरानी वर्ग में 5 भाषाएं, तूरानी परिवार के तीन वर्गों में 56 भाषाएँ, कोल वर्ग में 9 भाषाएँ तथा द्रविड़ वर्ग में 12 भाषाएँ, परिगणित की गई थी। उस समय भारत का मानचित्र आज से भिन्न था।

संप्रति संविधान की अष्टम अनुसूची में जिन्हें स्थान प्राप्त हुआ है, वे हैं -

आर्य परिवार- असमिया, कश्मीरी, गुजराती, उड़िया, पंजाबी, बंगला, मराठी, संस्कृत, सिंधी, उर्दू, मणिपुरी, संथाली, मैथिली, गोरखली, लेपाली, बोडो।

द्रविड़ परिवार - कन्नड़, तमिल, तेलुगु और मलयालम।

यह बहुमान्य है कि भाषा मनुष्य की एक सांस्कृतिक उपलब्धि है। सांस्कृतिक रचना होने के कारण उसके अनेक रूप मिलते हैं। मुख उच्चारण-यंत्र तथा सामान्य उत्पाद्य ध्वनियों की दृष्टि से भाषा का यह आधार मूलतः प्राकृतिक है, किन्तु इन ध्वनियों से

निर्मित शब्दों की विभिन्न प्रयुक्तियाँ संबद्ध भाषा में सांस्कृतिक रचना का रूप धारण कर लेती है, भारतीय भाषाओं में वर्ग-विधान और वर्णों के योग से शब्दों का निर्माण होता रहता है। यह निश्चित है कि वैदिक संस्कृति का जो रूप मंत्र-संहिताओं में सुरक्षित है, उसकी ध्वनि-व्यवस्था वर्ण-विवेक पर आश्रित है। संस्कृतेत्तर भारतीय भाषाओं में जहाँ संस्कृत के अनेक शब्द ज्यों के त्यों तत्सम रूप में विद्यमान हैं। अर्वाचीन भारतीय भाषाओं का रूप संस्कृत से पहले स्थानीय लोक-भाषाओं में था। इन लोक-भाषाओं की वर्या-ध्वनिया संस्कृत के समतुल्य स्पष्ट नहीं थी। ध्वनियों की अस्पष्टता का प्रभाव इन भाषाओं के देशज शब्दों में दिखाई देता है।

भाषिकी के अनुसार भारतीय भाषाओं में संज्ञा, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम आदि विभिन्न व्याकरण-भेदों के अनुसार शब्द बने हैं। इन शब्दों के रूप-संस्कार और इतिहास में जीवन के चित्र समाहित है। भारतीय भाषाओं में एक विचित्रता यह है कि इनमें संस्कृत, अरबी, फारसी आदि अनेक भाषाओं के शब्द ज्यों के त्यों ग्रहण कर लिए गए हैं। भाषा की आत्मा के अनुसार शब्दों के परिवर्तन का उदाहरण ब्रज भाषा के तद्भव शब्दों में मिलता है, किन्तु खड़ी बोली में तत्सम शब्द का प्रयोग निर्बाध रूप से लिया जा सकता है। तत्सम शब्द संस्कृत धातुओं से बने हैं। ब्रज के तद्भव शब्दों के स्थान पर भी खड़ी बोली में तत्सम शब्दों का प्रयोग हिंदी साहित्य में प्रचुरता से प्राप्य है। खड़ी बोली हिंदी का प्रचार इस समय समस्त भारत में है।

भाषावेत्ताओं के मतानुसार ध्वनियों की दृष्टि से भारतीय भाषाओं में अपनी-अपनी कई विशेषताएँ हैं। इस कारण भारतीय भाषाओं के कुछ लक्षण एक-दूसरे से भिन्न हैं। भारतीय भाषाओं का विकास अपनी मौलिक आत्मा की शक्ति तथा अपने मूल संस्कारों के अनुसार हुआ है। इसी कारण भारतीय भाषाएँ अपने-अपने रूपों में विकसित हुई हैं। खड़ी बोली को छोड़कर अन्य भाषाएँ इसकी उदाहरण हैं। खड़ी बोली हिंदी के विकास की कहानी भिन्न है। यह भारत में उसी प्रकार फैली, जिस प्रकार अंग्रेजी। आज तो भारत में कुल बाईस भाषाओं को मान्यता प्राप्त है। प्राचीन भारत में लगभग 150 भाषाएं या बोलियाँ थीं। इन बोलियों का रूप समय-परिवर्तन के साथ बदलता रहा है।

विदेशी शासन के आते ही यहां अंग्रेजी, फ्रेंच आदि भाषाएँ अस्तित्व में आई। परिणाम यह हुआ कि भारतवासियों को अपनी मातृभाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी सीखनी पड़ी। स्वतंत्रता के पश्चात् विदेशी भाषा के स्थान पर एक देशी भाषा को प्रतिष्ठित करना आवश्यक हो गया। इसके लिए वही भाषा उपयुक्त हो सकती थी, जो देश के सबसे बड़े भाग में बोली जाती हो। इनमें हिंदी ही ऐसी भाषा है, जो अंग्रेजी का स्थान ले सकती है। एक तो यह देश के सबसे बड़े क्षेत्र में बोली जाती है, दूसरे उत्तरी और पश्चिमी भारत की सभी भाषाएँ हिंदी से मिलती-जुलती हैं।

वर्तमान भारतीय भाषाओं का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार है- जिसे हिंदी के संदर्भ में समझना आवश्यक है-

असमी या असमिया : यह सुदूर उत्तर-पूर्वी भारत के असम राज्य की भाषा है। इस प्रदेश का प्राचीन नाम आर्यभाषा होने के कारण इसमें संस्कृत की तत्सम शब्दावली पर्याप्त मात्रा में देखने को मिलती है।

उड़िया : यह उड़ीसा राज्य में बोली जाने वाली यह प्रधान भाषा है। इस भाषा की दक्षिणी सीमा द्रविड़-परिवार की प्रमुख भाषा तेलुगु से लगी होने के कारण इसकी लिपि का व्यापक प्रभाव है। वर्ष 1961 की जनगणना के आधार पर इसमें 24 बोलियाँ परिगणित की गई हैं, जिनमें से मुइया, भुयन, कटकी, गंजायी तथा संभलपुरी उल्लेखनीय हैं।

उर्दू : इसकी व्याप्ति दक्षिण के साथ उत्तर भारत के सभी हिंदी भाषी राज्यों में है। उर्दू को हिंदी से भिन्न भाषा मान लेने पर भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि खड़ी बोली हिंदी से उसका मेल-मिलाप अत्यधिक है। अतएवं जहाँ कहीं हिंदी बोली जाती है, वहाँ उर्दू भी समझ ली जाती है।

कन्नड़ : यह कर्नाटक राज्य में मुख्यतः बोली जाने वाली भाषा है जो प्राचीनता की दृष्टि से तमिल के बाद आती है। आर्यभाषाओं का भी कन्नड़ पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। कन्नड़ की 32 बोलियाँ मानी जाती हैं।

कश्मीरी : यह जम्मू-कश्मीर राज्य में बोली जाने वाली भाषा है। इस समय कश्मीरी भाषा का क्षेत्र समस्त कश्मीर घाटी है, जिसमें इस भाषा के तीनों क्षेत्र कमराज, मराज तथा यमराज सम्मिलित हैं। यह भाषा राज्य के अतिरिक्त, आस-पास के इलाकों में भी बोली जाती है। इसी का एक रूप डोंगरी है।

गुजराती : पश्चिमी क्षेत्र की प्रधान भाषा गुजराती है, जो गुजरात राज्य में बोली जाती है। गुजराती का विकास गुर्जर अपभ्रंश से माना जाता है। गुजराती की लिपि देवनागरी का ही एक रूप है, जिसमें शिरोरेखा नहीं लगाई जाती। गुजराती वर्णमाला देवनागरी के समान है, पर ध्वनियों की दृष्टि से इसमें कुछ भिन्नता पाई जाती है। गुजराती की 27 बोलियों में से कोल्ची, पारसी, सौराष्ट्री मुख्य हैं। यह एक ओर राजस्थानी, तो दूसरी ओर मध्य प्रदेश की मालवी बोली से भी काफी साम्य रखती है।

तमिल : भारतीय भाषाओं में तमिल काफी प्राचीन है। आज यह

तमिलनाडु तथा श्रीलंका के कई क्षेत्रों में बोली जाती है। द्रविड़ परिवार की प्राचीनतम भाषा होने के नाते इसका दक्षिण भारत में सांस्कृतिक दृष्टि से भी महत्व है। तमिल की 22 बोलियां मानी जाती हैं। इसमें बड़ा समृद्ध साहित्य है।

तेलुगू : द्रविड़ परिवार की एक महत्वपूर्ण भाषा तेलुगू है। यह भाषा आंध्र-प्रदेश में बोली जाती है। भाषाई आधार पर बनने वाला प्रथम राज्य था 'आंध्र-प्रदेश'। इसकी 36 बोलियाँ पायी जाती हैं। इसमें बड़ा समृद्ध साहित्य है।

पंजाबी : पंजाब राज्य में बोली जाने वाली भाषा पंजाबी के नाम से अभिहित की जाती है। प्राचीनता की दृष्टि से यह भाषा वैदिक भाषा से संबंधित है। पंजाबी की मुख्य उपभाषा लहंदा के अतिरिक्त, माझा-जलन्धर-दुआब की बोली, पुवाधी, राठी, मतलई, मट्टियानी आदि इसकी अन्य बोलियाँ हैं।

बंगला : भारत में बोली जाने वाली भाषाओं में संख्या, साहित्यिक परम्परा तथा प्राचीनता - सभी दृष्टियों से पश्चिम बंगाल की भाषा बंगला (बांग्ला) का महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के पूर्व वर्ग की यह प्रमुख भाषा है। इसकी 15 बोलियां हैं, जिनमें से किशनगंजिया, राबंगसी प्रधान हैं। बंगाली भाषा का नया साहित्य काफी सम्पन्न है।

मराठी : भारतीय आर्यभाषा की दक्षिण-पश्चिम शाखा ही आज मराठी नाम से जानी जाती है। यह महाराष्ट्र राज्य में बोली जाती है। 1961 की जनगणना के अनुसार इसकी 65 बोलियाँ हैं।

मलयालम : केरल राज्य में बोली जाने वाली भाषा मलयालम कहलाती है। क्षेत्र की दृष्टि से छोटा होते हुए शिक्षा-प्रचार, व्यापार, संस्कृति, साहित्य राष्ट्रीय जागरण - आदि दृष्टियों से यह राज्य महत्वपूर्ण है। इसकी 14 बोलियां मानी जाती हैं।

संस्कृत : यह सबसे प्राचीन भाषा है। इसका भारतीय भाषा परिवार में विशेष महत्व है। यह एक ऐसी भाषा है, जिसमें प्राचीन आर्यभाषा के सभी तत्व विद्यमान हैं। इसकी तुलना समकालीन ग्रीक, लैटिन, जर्मन से की जा सकती है। इसका प्रयोग 400-500 वर्ष ईसा पूर्व भी किया जाता था। वैसे इसके वैदिक रूप का इतिहास और भी प्राचीन है, जिसका प्राचीनतम ग्रंथ 'ऋग्वेद' है। सभी भारतीय भाषाएँ - आर्य तथा द्रविड़' संस्कृत से प्रभावित और अनुप्राणित हैं।

सिंधी : यह भारत की प्राचीन परम्परा से विकसित हुई है। आर्य जब बिलोचिस्तान और राजस्थान के मध्य स्थित हो गए तो उस क्षेत्र में जो भाषा विकसित हुई, वही सिंधी कहलाई। सिंधी आर्य परिवार की प्रमुख भाषा है। इसका क्षेत्र अब पाकिस्तान में है, पर भारत में यह कच्छ तथा सौराष्ट्र में अब भी बोली जाती है। हिंदी शब्द की उत्पत्ति उसी से कही गयी है।

हिंदी : शब्दार्थ की दृष्टि से हिन्द या भारत में बोली जाने वाली भाषा हिंदी कही जाती है। मोटे तौर पर दिल्ली के आसपास की की बोली' देहलवी' या उसके निकटवर्ती क्षेत्र की बोलियों पर आधारित यह हिन्दू-मुसलमानों की समान भाषा रही है जिसके अन्तर्गत प्राचीन-नवीन सभी रूप हिंदी, हिंदुस्तानी, दक्खिनी, रेखता, उर्दू आदि समाहित हो जाते हैं।

इनके अलावा और कई भाषाओं को संविधान में स्थान दिया गया है। उनमें महत्वपूर्ण हैं।

मणिपुरी : यह भाषा मणिपुर राज्य मे बोली जाती है। इसमें कुछ साहित्य भी है।

नेपाली : यह भाषा पूर्वोत्तर भारत एवं नेपाल में बोली जाती है। नेपाली भाषाओं की संख्या अधिक होने के कारण इसे मान्यता दी गई है। इस भाषा को भारत में गोरखा, गोरखाली, गोरखी, खसकुरा, आदि नामों से भी जाना जाता है।

कोंकणी: दक्षिण क्षेत्र की दूसरी प्रधान भाषा कोंकणी है, जो प्रमुख रूप से गोवा में बोली जाती है। इसकी भी अनेकों बोलियाँ है।

उपयुक्त सभी भारतीय भाषाओं में हिंदी का विशिष्ट स्थान है। हिंदी की बोलियों की संख्या भी काफी बड़ी है। फिर भी पूर्वी छोर से लेकर पश्चिमी छोर तक हिन्दी की बोधगम्यता अक्षुण्ण है। राष्ट्रभाषा बनाने से पूर्व ही हिंदी को प्राचीन काल से ही संपर्क भाषा के रूप में स्वीकार किया गया है। राजभाषा बनने के बाद उसकी व्यापकता और प्रचार स्वाभाविक ढंग से आगे बढ़ा। उसमें भारत के अनेक राज्यों ने अपना योगदान दिया।

foKku çlkj esa Hkk"kk dh Hkwfedk

lqjs'k dqekj
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

विज्ञान या कोई और विषय हो उस के प्रसार में भाषा की अहं भूमिका होती है। अधिकांश प्रसिद्ध वैज्ञानिक अंग्रेजी भाषी थे फलतः वैज्ञानिक खोजों के शोध पत्रों व पुस्तकों को प्रायः अंग्रेजी भाषा में ही लिखा गया है। वर्तमान में भी जो वैज्ञानिक शोध व आविष्कार हो रहे हैं, भारतीय वैज्ञानिक भी इनके लेखन में अंग्रेजी को ही महत्त्व दे रहे हैं।

विज्ञान वास्तव में एक ऐसा विलक्षण दृष्टिबोध एवं विशिष्ट अध्ययन पद्धति है जो मनुष्य के सभी विषयों से सम्बंधित सभी प्रश्नों का उत्तर सरलतापूर्वक प्रयोगों द्वारा प्रमाणिक तौर पर देने में सक्षम है।

विज्ञान व वैज्ञानिकता के अभाव में समाज में व्याप्त अंधविश्वास और रूढ़ियों को दूर करना असंभव है क्योंकि यह क्षमता वैज्ञानिक सोच में ही निहित है। मनुष्य में वैज्ञानिक सोच जगाने के लिए विज्ञान की उपलब्धियों को उसी की मातृभाषा में पहुंचाने पर यह काम आसान हो सकता है।

हमारा भारत देश बहुभाषा-भाषी है तथा संवैधानिक मान्यतानुसार 23 मातृ भाषाएं हैं। फिर भी विज्ञान लेखन की भाषा अंग्रेजी ही है। फलतः विद्यार्थियों से लेकर जनसाधारण तक को विज्ञान समझने में कठिनाई होती है क्योंकि विज्ञान के साथ-साथ उन्हें अंग्रेजी भाषा को भी आत्मसात् करना पड़ता है।

वैज्ञानिकों और शिक्षाविदों के अनुसार इतने व्यापक भाषाई परिवेश में विज्ञान को किस भाषा में लिखा व पढ़ाया जाए जिससे विज्ञान को विद्यार्थियों के साथ ही जनमानस तक सफलतापूर्वक पहुंचाया जा सके। इस पर गहन मंथन के पश्चात तय हुआ कि चूँकि भारत में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा हिंदी है। अतः हिंदी को ही लेखन और प्रसार का माध्यम् बनाकर वैज्ञानिकता को सर्व सुलभ कराया जा सकता है।

अपने देश में इस गंभीर समस्या को ध्यान में रखकर कुछ अंग्रेज विद्वानों ने सन् 1835 के पूर्व ही भारतीय भाषाओं का प्रयोग लेखन कार्य में शुरू कर दिया था। सन् 1819 ई. में फैनालिक्स महोदय ने शरीर विज्ञान पर एक पुस्तक लिखी तथा कुछ अन्य शिक्षा शास्त्रियों ने भारतीय भाषाओं में विज्ञान की पुस्तकों का अनुवाद करना प्रारंभ किया। वर्ष 1815 में वैज्ञानिक पुस्तकों का अनुवाद मराठी में शुरू हो गया था तथा हिंदी में वैज्ञानिक पुस्तकों के लेखन व अनुवाद का कार्य बहुत समय बाद में शुरू हुआ। मिशनरियों ने जब हिंदी भाषी क्षेत्रों में अपने स्कूल खोलना शुरू किया तब हिंदी में पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता को समझकर पुस्तकें लिखवाना प्रारंभ किया। मध्यमवर्गीय कक्षाओं के लिए विज्ञान, गणित तथा अन्य विषयों की किताबें राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद (1860), लक्ष्मी शंकर मिश्र (1873 से 1885) तथा मुंशी रतन लाल (1887) ने हिंदी में लिखना प्रारंभ किया। पश्चिमोत्तर भारत में शिक्षा का माध्यम् हिंदी था जिसे ध्यान में रखकर राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद जो भारतेंदु हरिश्चंद्र के समकालीन थे, उन्होंने प्रारंभिक पाठ्य पुस्तकों को हिंदी में लिखा।

सन् 1900 ई. में प्रयाग से 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन से एक युगांतरकारी परिवर्तन की शुरूआत हुई। पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी को ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। उत्तर भारत के हिंदी भाषी, जो हिंदी काव्य में हिलोरे ले रहे थे, अचानक विज्ञान की तरंगों में बहने लगे। फलतः हिंदी विज्ञान संचारिका बन गयी। पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा 20 वर्षों में इतना अधिक विज्ञान साहित्य हिंदी भाषा में प्रदान किया गया कि पठन-पाठन करने वालों को पूर्ण विश्वास हो गया कि अब ऐसे युग का सूत्रपात हो गया है, जिसमें विज्ञान जन सामान्य को सुलभ होगा।

राष्ट्रभाषा हिंदी के माध्यम से विज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु इलाहाबाद के डॉक्टर गंगा प्रसाद (संस्कृत), प्रोफेसर हमीमुद्दीन (अरबी), श्री सालिग राम भार्गव (भौतिक शास्त्र) तथा श्री रामदास गौड़ (रसायन शास्त्र) ने मिलकर सन् 1913 में इलाहाबाद में विज्ञान परिषद नामक संस्था की स्थापना की और अप्रैल 1915 में "विज्ञान" नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। वर्ष 1948 में कृषि विज्ञान विषयक पत्रिका 'खेती' तथा सन 1950 में "विज्ञान प्रगति" नामक दो हिंदी पत्रिकाएं सरकार द्वारा निकाली गयीं।

विज्ञान प्रसार हेतु हिंदी विज्ञान लेखन के इस दीर्घ अवधि में हिंदी के लोकप्रिय विद्वान लेखकों ने विविध विज्ञान विषयों पर उत्कृष्ट साहित्य सृजन कर अंग्रेजी साहित्य का विकल्प प्रदान किया है, जो हर्ष का विषय है।

जनसामान्य में विज्ञान प्रसार हेतु राष्ट्रभाषा हिंदी में कुछ विज्ञान संबंधी पत्रिकाएं अग्रणी भूमिका निभा रही हैं। वैज्ञानिक एवं औद्योगिक परिषद ने वर्ष 1983 में एक "विज्ञान निर्देशिका" प्रकाशित करके विज्ञान प्रसार में हिंदी को विशिष्ट स्थान प्रदान किया है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से 'ज्ञान गंगा' और उत्तराखंड से 'विज्ञान परिचर्चा' (त्रैमासिक) हिंदी में प्रकाशित हो रही हैं। विज्ञान विषयक शोध पत्रिका 'विज्ञान परिषद अनुसंधान पत्रिका' (त्रैमासिक) का प्रकाशन विज्ञान परिषद, प्रयाग द्वारा सन् 1958 से हो रहा है। सन् 1973 से "भारतीय कृषि अनुसंधान पत्रिका" (त्रैमासिक) का प्रकाशन करनाल से हो रहा है तथा भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान लखनऊ से "इक्षु" नामक पत्रिका राजभाषा हिंदी में प्रकाशित हो रही है। इसके साथ ही कृषि अनुसंधान परिषद के अन्य संस्थानों से विज्ञान सार हेतु हिंदी भाषा में पत्र-पत्रिकाएं निकाली जा रही हैं।

विज्ञान जन-सामान्य तक पहुंचे इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर जापान, चीन, रूस, फ्रांस, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, थाईलैंड, फिजी, अर्जेंटीना, चिली, इंडोनेशिया, वेनेजुएला, तथा दक्षिण कोरिया आदि देशों में अपनी मातृभाषा में अंग्रेजी को साथ रखकर विज्ञान प्रौद्योगिकी की शिक्षा का प्रसार व निर्माण का कार्य किया। इन सभी देशों की अपनी मातृभाषा है। जिसका प्रयोग वहां के वैज्ञानिक, साहित्यकार, जन-सामान्य तथा नेता बड़े गर्व से करते हैं। आज विश्व के वैज्ञानिक हर क्षेत्र में नित्य नवीन खोजों में संलग्न है। हमारे देश में भी विज्ञान व वैज्ञानिकता के प्रसार के लिए अन्य भारतीय भाषाओं के साथ मातृभाषा हिंदी में उच्चतर प्रौद्योगिकी के साथ मानव जीवन से संबंधित अनेकानेक विषयों में एक प्रयोजपरक भाषा में प्रतिष्ठित किया जाना आवश्यक है अन्यथा इस वैज्ञानिकता की दौड़ में हम बहुत पीछे छूट जाएंगे। समग्र प्रगति हेतु विज्ञान को जन-सामान्य तक पहुंचाने में भाषा के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। हम कह सकते हैं कि विज्ञान के प्रसार में देश की मातृभाषा का योगदान विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि जनसाधारण की सर्व ग्राह्य भाषा होती है हमारे देश में विज्ञान प्रसार में मातृभाषा हिंदी की भूमिका महत्वपूर्ण है।

"अपनी भाषा अपना देश।
फलित होय वैज्ञानिक परिवेश।।"

राजभाषा प्रभाग

leku çrhr gkr g, Hkh fHkUu&fHkUu vFk oky fgnh d dN 'kCn

vfHk"kd dekj flg] vt; dekj lkg] cã çdk'k] vrry dekj lpku ,o vk'kh"k flg ;kno
Hkkdvui&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku lLFkku] y[kuÅ

हिंदी भाषा के अनेक शब्द ऐसे होते हैं जो सुनने में एक सी ध्वनि उत्पन्न करते हैं, परंतु इनके अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं। प्रस्तुत हैं हिंदी भाषा के ऐसे ही कुछ शब्द जो लोगों में जानकारी के अभाव में अस्पष्ट व भ्रामक प्रतीत होते हैं :

आसन्न और आसन

ये दोनों शब्द सुनने में समान प्रतीत होते हैं, परंतु दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। "आसन्न" शब्द का अर्थ होता है बिलकुल निकट या समीप आया हुआ। 'आसन' वह जिस पर या आसन ग्रहण किया जाए जैसे चटाई। योग के अनुसार, बैठने और विभिन्न अंगों के व्यायाम की विधियाँ आसन कहलाती हैं, जैसे पद्मासन, सुखासन आदि।

प्रणय और परिणय

ये दोनों शब्द सुनने में समान प्रतीत होते हैं, परंतु दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। प्रेम अथवा प्रीति का नाम 'प्रणय' है जबकि 'परिणय' विवाह को कहते हैं। उदाहरणार्थ-उनके प्रणय की परिणति परिणय में हुई।

अवलंब और अविलंब

ये दोनों शब्द सुनने में समान प्रतीत होते हैं, परंतु दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। अवलंब का अर्थ है सहारा, जबकि अविलंब का अर्थ है बिना विलंब के अर्थात शीघ्र।

असित और अशित

'असित' का अर्थ होता है काला, अंधेरा। वहीं 'अशित' अर्थात जो धारदार या नुकीला न हो उदाहरणार्थ बिना धार या नोंक वाला चाकू।

कुल और कूल

ये दोनों शब्द सुनने में समान प्रतीत होते हैं, परंतु दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं। दोनों में सिर्फ एक मात्रा का अंतर है। 'कुल' शब्द का अर्थ वंश या खानदान होता है, जबकि 'कूल' शब्द का अर्थ तट या किनारा होता है।

चसक तथा चषक

'चसक' शब्द का अर्थ होता है हल्का दर्द अथवा कसक। जबकि 'चषक' शब्द का मतलब होता है प्याला।

श्रम और परिश्रम

'श्रम' शब्द का तात्पर्य शारीरिक श्रम से होता है, जैसे श्रमिक या मजदूर द्वारा किया गया श्रम। 'परिश्रम' अर्थात जिसमें शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के श्रम सम्मिलित हों, जैसे मोहन परीक्षा में अपने परिश्रम से सफल हुआ।

अनिष्ट और अनिष्ठ

'अनिष्ट' शब्द का अर्थ होता है अवांछित अथवा हानिकारक। अहित या हानि होने की आशंका। जबकि 'अनिष्ठ' का मतलब होता है, जिसमें निष्ठा न हो अर्थात निष्ठा रहित, उदाहरणार्थ रोहित एक अनिष्ठ व्यक्ति है।

कांति और क्रांति

कांति और क्रांति जैसे शब्द यद्यपि सुनने में एक समान प्रतीत होते हैं, परंतु दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न हैं। 'कांति' शब्द का अर्थ होता है चमक अथवा आभा जैसे स्वर्णिम कांति। जबकि 'क्रांति' का अर्थ होता है उलटफेर या पूर्ण परिवर्तन उदाहरणार्थ हरित क्रांति, श्वेत क्रांति, नीली क्रांति।

अवधि तथा अवधी

प्रायः लोग 'अवधि' तथा 'अवधी' शब्द को एक जैसा समझकर उच्चारण भी एक जैसा कर देते हैं। दोनों के अर्थ भिन्न हैं। एक तरफ जहां 'अवधि' का अर्थ निश्चित अथवा सीमित समय होता है, वहीं 'अवधी' एक भाषा है जो मूलतः उत्तर प्रदेश के अवध भाग में प्रमुखता से बोली जाती है।

छात्र एवं क्षात्र

'छात्र' एवं 'क्षात्र' बोलने में एक से लगते हैं लेकिन दोनों शब्दों के अर्थ में अत्यंत विभिन्नता है। 'छात्र' शब्द का अर्थ होता है विद्यालय या विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थी। वहीं दूसरी और "क्षात्र' का अर्थ होता है क्षत्रिय अर्थात जो दूसरों को क्षत से बचाए।

अलि और अली

'अलि' और 'अली' सुनने में अत्यंत समान लगने के बावजूद दोनों शब्दों के अर्थ अलग-अलग होते हैं। 'अलि' शब्द का अर्थ

भौरा होता है जबकि 'अली' शब्द का अर्थ सखी, सहेली, पंक्ति व कतार होता है।

कृति एवं कृती

'कृति' शब्द का अर्थ होता है किसी के द्वारा किया गया कार्य अथवा रचना। वहीं 'कृती' शब्द का अर्थ किसी चीज में निपुण, कुशल अथवा दक्ष होना होता है।

गण एवं गण्य

'गण' शब्द का अर्थ होता है समूह या भीड़। जबकि 'गण्य' शब्द का अर्थ गिना जा सकने वाला होता है।

चिर एवं चीर

चिर का अर्थ होता है पुराना। जैसे मोहन अपने चिर-परिचित अंदाज में सबसे मिला। जबकी चीर का अर्थ कपड़ा होता है।

समान तथा सामान

समान का अर्थ होता है बराबर। जैसे भारत में कानून सबके लिए समान है। सामान का अर्थ वस्तु होता है।

क्षति और क्षिति

क्षति का अर्थ हानि अथवा नुकसान होता है। जैसे राम को व्यापार में भारी क्षति हुई अथवा प्राचीन बिल्डिंग गिरने से जान-माल की काफी क्षति होती है। जबकि क्षिति का अर्थ पृथ्वी होता है।

परिणाम एवं परिमाण

परिणाम का अर्थ होता है 'नतीजा'। जैसे बारिश के कारण भारत-पाकिस्तान टेस्ट मैच का परिणाम निकलना मुश्किल है। जबकि परिमाण का अर्थ नाप-तौल होता है।

शोक तथा शौक

शोक का अर्थ होता है 'विलाप'। जैसे उनके निधन के समाचार से सारे गाँव में शोक की लहर दौड़ गई। जबकि शौक का अर्थ रुचि होता है।

बाग और बाघ

बाग का अर्थ होता है 'बगीचा'। जैसे बसंत ऋतु में आम के बाग में बौर दिखाई देने लगते हैं। जबकि बाघ शब्द का अर्थ 'जंगली जानवर' होता है। जैसे भारत का राष्ट्रीय पशु बाघ है।

शर तथा सर

शर का अर्थ 'तीर' होता है। जैसे दशरथ के एक शर ने श्रवण कुमार की जान ले ली थी। जबकि सर शब्द का अर्थ तालाब होता है।

आदि एवं आदी

कई बार एक छोटी सी मात्रा वाक्य के अर्थ को बदल सकती है जैसे आदी एवं आदी। आदि का अर्थ आरंभ अथवा प्राचीन होता है। जबकि आदी का अर्थ अभ्यस्त होता है।

आचार एवं अचार

ये दो ऐसे शब्द हैं जिसमें जरा सी गलती अर्थ को अनर्थ कर सकती है। आचार का अर्थ व्यवहार होता है। जबकि अचार एक भारतीय खाद्य व्यंजन है।

आवास एवं आभास

आवास का अर्थ बसेरा होता है, जैसे निदेशक महोदय का आवास संस्थान परिसर में ही है जबकि आभास का अर्थ अनुभूति होता है।

दैव तथा देव

'दैव' तथा 'देव' शब्द सुनने में समान लगते हैं, लेकिन इनके अर्थ भिन्न हैं। 'देव' का अर्थ है भाग्य जबकि देव का अर्थ होता है 'देवता।

अभिराम और अभिमान

अभिराम का अर्थ सुंदर होता है जैसे अभिराम राम को देख सीता मंत्रमुग्ध हो गयीं। जबकि अभिमान शब्द का अर्थ गर्व होता है। जैसे अभिमानी व्यक्ति का अभिमान एक दिन चूर होकर रहता है।

गाड़ी तथा गाढ़ी

गाड़ी का अर्थ होता है यातायात का साधन जैसे गाड़ी चार घंटे देरी से आ रही है। जबकि गाढ़ी का अर्थ अधिक घनत्व वाला द्रव होता है।

कक्षा, कच्चा एवं कच्छा

कक्षा का अर्थ होता है घेरा, परिधि, दर्जा, काँख व बगल, जबकि कच्चा का अर्थ होता है जो पका न हो (जैसे कच्चा आम), जो आग में तपा न हो (जैसे कच्ची ईंट), शुद्ध न किया हुआ (जैसे कच्चा तेल)। इसी प्रकार कच्छा शब्द का अर्थ जांघिया अथवा विशाल नौका होता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

uSukVsDuksykWth dk lkFk % fdlku dk lexz fodkl

jk?kosUnz dqekj ,oa laxhrk JhokLro
HkkÑvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

संसार के विविध रूप, रंग, आकार तथा भौतिक घटनाओं में पदार्थ का महत्वपूर्ण योगदान होता है। सामान्यतः पदार्थ के तीन मूल स्वरूप ठोस, द्रव तथा गैस में देखे जाते हैं किन्तु, जब कभी इनके अति सूक्ष्म नैनो कणों, जिन्हें सामान्यतयाः नंगी आँखों से कतई नहीं देखा जा सकता, में परिवर्तित होता है तो उसके स्वभाव तथा प्रकृति में विशिष्ट रोचक बदलाव देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए चाँदी तत्व की एक ग्राम मात्रा को किसी विशेष तकनीक की सहायता से अति सूक्ष्म नैनो कणों में विभक्त किया जाए तो उसकी सम्पूर्ण लम्बाई करोड़ों किलो मीटर में फैल जाएगी। इस अवस्था में इनके नैनो कण किसी भी संक्रमणकारी सूक्ष्मजीवी जैसे विषाणु, जीवाणु, कवक इत्यादि से लड़ने में कामयाब होते हैं। सामान्य अवस्था में कुचालक सिलिकॉन का कोई विशेष उपयोग कम होता है जबकि आए दिन इलेक्ट्रानिक उपकरण में अर्द्धचालक होने की वजह से यह अत्यन्त लोकप्रिय हो रहा है। एल्युमिनियम सामान्यतः अदहनशील होता है जबकि इसके नैनो कण घोर दहनशील प्रकृति के होते हैं।

प्राचीन काल से ही नैनो कणों के विषय में मानव की जिज्ञासा बढ़ती गई और इनके व्यापक उपयोग व्यावसायिक तथा चिकित्सा जगत में हुए हैं। चौथी सदी में रंगहीन काँच के बर्तनों को रंगीन तथा आकर्षक बनाने में सोने तथा चाँदी के नैनो कणों का उपयोग किया जाता था। पदार्थ के अतिसूक्ष्म कणों के निर्माण तथा लाभकारी उपयोगिता के आधार पर विज्ञान की एक नई तकनीक विकसित की गई है जिसे नैनोटेक्नोलॉजी (अति सूक्ष्म प्रौद्योगिकी) के नाम से सम्बोधित करते हैं। इस तकनीक की मदद से व्यावहारिक भौतिकी, पदार्थ विज्ञान, अर्द्धचालक भौतिकी, अनुकणिका रसायन विज्ञान, रासायनिक अभियांत्रिकी, चिकित्सा विज्ञान, कृषि विज्ञान के क्षेत्र में भरपूर लाभ मिल रहे हैं। साथ ही, नैनो प्रौद्योगिकी में शोध की अपार सम्भावनाओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

पदार्थ के अजैविक तथा जैविक अति सूक्ष्म कणों को जानने तथा समझने के लिए एक विशेष प्रकार के पैमाना का इस्तेमाल किया जाता है, जिसे *'नैनो स्केल'* कहते हैं। इस स्केल में 1 से 100 तक के नैनोमीटर (nm) दर्ज होते हैं। एक मीटर का सौ करोड़वाँ भाग यानी 10^{-9} एक नैनोमीटर कहलाता है। व्यावहारिक जीवन में तुलना करें तो अगर एक कंचा एक नैनोमीटर हो तो पृथ्वी की तुलना में एक मीटर में देखा जा सकता है। स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की मदद से 40-50 माईक्रॉन से भी छोटे कणों के अध्ययन तथा तकनीकी का विकास वर्ष 1981 के बाद आरम्भ हुआ है। बाद में सन् 1986 में परमाण्विक बल सूक्ष्मदर्शी तथा टनलिंग सूक्ष्मदर्शी यंत्र के साथ इलेक्ट्रॉन किरण अश्वलेखन और आण्विक किरण एपिटैक्सी जैसी विधियों की सहायता से नैनो विन्यासों के प्रकलन का विकास हुआ। इसके माध्यम से सर्वप्रथम अर्द्धचालक नैनो क्रिस्टल के संश्लेषण से कम्प्यूटर क्रान्ति में जबरदस्त बदलाव आए हैं।

कृषि के क्षेत्र में नैनो टेक्नोलॉजी का भरपूर उपयोग किया जा रहा है। पौधों के समग्र विकास, सुधार, सुरक्षा तथा उत्पादन में इनकी अहम भूमिका होती है। जल संकट की दशा में सिंचाई के लिए इन दिनों नैनो कणों की मदद से जल की संतुलित अल्प मात्रा पौधों को प्रदान की जाती है। जहाँ पौधों के लिए नैनो उर्वरक अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुए हैं तो वहीं बीमारी तथा नाशीकीटों को नियंत्रित करने में इनकी अहम भूमिका है। इस तकनीक से रेगिस्तान जैसी बंजर जगह भी हरियाली की चादर में लिपटी नजर आएगी।

पौधों के लिए उपयोगी उर्वरक तथा कृषि रसायनों को लक्ष्य तक पहुँचाने में कार्बन नैनो ट्यूब्स तथा नैनो तकनीकी की मदद से जल के माध्यम से दाखिल होने वाले अति सूक्ष्मजीवियों (कवक, विषाणु, जीवाणु, इत्यादि) का त्वरित तथा समूल नाश होता है। इस क्रिया से पर्यावरण की सुरक्षा का ख्याल रखते हुए पारम्परिक कृषि के लागत खर्च में व्यापक कटौती की जा सकती है। इन दिनों इस तकनीक की सहायता से वानस्पतिक जगत की अनेक असाध्य व्याधियों के पनपने तथा सम्बंधित दवा की सुपुर्दगी तथा असर के बहुआयामी निगरानी को सुलभतापूर्वक किया जाता है, जिसे *'नैनो सेन्सर'* कहते हैं।

दूसरी तरफ गन्ना से निकलने वाले अपशिष्ट तथा अवशेष जो विशेष रूप से सेल्यूलोज होते हैं, उनसे ऊर्जा तथा अन्य जरूरी उत्पादों के निर्माण किया जाता है। जीवाश्म ईंधन में आ रही कमी को पूरा करने में कृषि में नैनोटेक्नोलॉजी का समावेश जन साधारण के लिए अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

विविध नैनो कणों से कृषि शोध योगदान

नैनो सिल्वर

ये चाँदी के अति सूक्ष्म कण होते हैं जिसे वैज्ञानिक नैनो सिल्वर के नाम से सम्बोधित करते हैं। सामान्य चाँदी की तुलना में इन नैनो कणों का सतही एवं एंटी-माइक्रोबियल प्रभाव अधिक होता है। इन कणों के कोलाइडल घोलों का छिड़काव सूक्ष्मजीवियों के जीवन-चक्र में घातक रूकावट डाल देते हैं, अतः उच्च मारक क्षमतावान नैनो सिल्वर के छिड़काव से पौधों की ऊपरी कोमल सतह को आर्थिक रूप से नुकसान पहुँचाने वाले व्याधिजन्य सूक्ष्मजीवियों के समूलनाश अत्यन्त अल्प अवधि में होता है।

नैनो एल्युमिनो-सिलीकेट

उच्च क्षमता वाले एल्युमिनो-सिलीकेट के नैनो ट्यूब्स की सहायता से पर्यावरण के दृष्टिकोण से सुरक्षित कीटनाशक रासायनिक दवाओं को पौधों की लक्षित सतह पर छिड़काव कर दिया जाता है। इनकी सतह के कीटों के सम्पर्क में आते ही ट्यूब्स से सिलिका के अतिसूक्ष्म कण पौधों के डीएनए स्तर तक सक्रिय होने के फलस्वरूप कीटनाशक अत्यन्त तेज गति से फैलने लगते हैं। इस तीव्र गति से नाशीकीटों की दैहिक कार्य प्रणाली विशेष रूप से श्वसन तंत्र अवरूद्ध हो जाता है। कीट नियंत्रण की नैनो विकसित ट्यूब्स इन दिनों काफी लोकप्रिय हो रही हैं।

नैनो टाईटेनियम डाई ऑक्साइड

टाईटेनियम डाईऑक्साइड का उपयोग प्रायः सफेद रंग के पेन्ट, स्याही, चमड़ा तथा अन्य कॉस्मेटिक वस्तुओं के उत्पादन में किया जाता है। इनका कीटाणुनाशक के रूप में प्रयोग क्लोरीन तथा ओज़ोन की तुलना में अधिक तेज और असरकारी होता है। इनके नैनो कणों को फोटोकैटलिस्ट तकनीक से पौधों के अंदर प्रवेश कर देने से रोगजनित सूक्ष्मजीवियों, विशेष रूप से विषाणु, जीवाणु, कवक इत्यादि के संक्रमण से हो रहे नुकसान से आसानी से बचाया जा सकता है। नैनो वैज्ञानिकों ने पौधों को रोगमुक्त करने के लिए नैनो टाईटेनियम की पतली फिल्म की क्षमता को विशेष तकनीक तथा रंगों की सहायता से कई गुना बढ़ाकर एक नई विधि की खोज कर ली गयी है। संक्रमण की रोकथाम में नैनो टाईटेनियम डाईऑक्साइड का भरपूर लाभ उठाया जा सकता है।

कार्बन के नैनो ट्यूब्स

नैनो तकनीकी के आधार पर कार्बन के विशेष नैनो स्वरूप, जिन्हें बक्मिनिस्तर फुल्लरीन (C_{60}) कहते हैं। उनसे अनेक नैनो ट्यूब्स बनाए गए हैं जिसमें एकल भित्तिक कार्बन नैनो ट्यूब्स, बहु-भित्तिक कार्बन नैनो ट्यूब्स, बकिबॉल, ग्रेफाइट इत्यादि प्रमुख हैं। इनका व्यापक उपयोग जैव तकनीकी तथा अन्य अभियांत्रिक महत्व के कार्य-कलापों में हो रहा है। यह सर्वविदित है कि पौधों के विकास जैसे प्रकाश संश्लेषण में कार्बन अणु की भरपूर सहभागिता होती है। फसलों को प्रायः सी$_4$ (खरीफ जैसे गन्ना) तथा सी$_3$ (रबी जैसे गेहूँ) में वर्गीकृत किया जाता है। फसलों के उत्पाद में गुणवत्ता सम्बन्धित मापदंडों के लिए इन दिनों माइक्रोजीनोमिक्स तथा नैनो टेक्नोलॉजी का परस्पर मेल कृषि के लिए क्रांतिकारी सिद्ध हुआ है। इस प्रकार नैनो कार्बन प्रयोग करने से पौधों में कार्बन अणु की आपूर्ति थोड़े से प्रयास से संतुलित होने के फलस्वरूप फसलों की पैदावार में भरपूर लाभ प्राप्त हो सकता है।

चुम्बकीय नैनो कणों से सुरक्षा कवच

विविध प्रकार के लाभकारी अतिसूक्ष्म कणों जैसे एकल तथा बहु भित्तिक नैनो कार्बन को खास तरह से चुम्बकीयकृत कर देने से पौधों के विशिष्ट दैहिक तंत्र पर जबरदस्त तरीके से असर होता है। चूँकि इनके साथ अन्य लाभकारी रोगनाशी दवाएँ साथ में संप्रेषित की जाती है इसलिए पौधों को रोग से लड़ने में विशेष सुरक्षा कवच का निर्माण होता है। इस विधि में चुम्बकीय तरंगों से बीमारी के कीटाणुओं का स्वतः नाश होता चला जाता है।

कृषि में नैनोटेक्नोलॉजी के महत्व

कृषि जगत् में अति सूक्ष्म कणों के व्यापक उपयोग हो रहे हैं। पौधों के लिए पोषक तत्व, लाभकारी रासायनिक खाद, कीटनाशक दवाएँ तथा सिंचाई में उपयोगी जल के अत्यन्त सूक्ष्म कणों को कैप्सूल में सुरक्षित रखकर सीधे लक्ष्य पर छिड़काव करने से धन तथा समय की बचत होती है। इस कड़ी में पादप कोशिका के आनुवांशिक रूपांतरण में सहायक अति सूक्ष्म नैनो कणों को डीएनए तथा आरएनए के माध्यम से दैहिक अभिक्रिया में उपयोग किया जाता है। ऐसे अति सूक्ष्म नैनो कणों में जीओलाइट्स का प्रमुख स्थान है, जिसके द्वारा मिट्टी में जल के माध्यम से लाभकारी कृषि रसायनों को संजोए रखने में मद्द मिलती है।

पादप रोग तथा नाशीकीट नियंत्रण में नैनो तकनीक का योगदान

प्रायः ऐसा देखा गया है कि पौधों में विषाणुजनित रोग तथा नाशीकीटों का प्रकोप अत्यन्त तीव्र गति से फैलने लगता है। इनके नियंत्रण में क्षमतावान रसायनों के समय पर असर नहीं होने के फलस्वरूप अल्प अवधि में फसलों पर व्यापक नुकसान देखने को मिलता है। कृषि रसायनों की बढ़ती लागत खर्च से किसानों को भारी नुकसान का सामना करना पड़ता है। इन परिस्थितियों में कार्बन, चाँदी तथा एल्युमिनियम सिलीकेट के अति सूक्ष्म कणों को

सिंचाई के माध्यम से प्रयोग करने से पौधों के विकास में आने वाले जैविक तथा अजैविक बाधाओं के निराकरण में अभूतपूर्व सफलता मिली है। इनके विशेष जाँच किट विकसित कर लेने से कृषि वैज्ञानिकों को पौधों की वृद्धि तथा उनके भरपूर विकास की तमाम जरूरी सूचनाएँ प्राप्त करने में सफलता हासिल हुई है। नैनो तकनीक से विकसित किए गए सूक्ष्म संयंत्र को पादप दैहिकी के अन्दर स्थापित कर देने से विषाणु, जीवाणु तथा कवक से उत्पन्न होने वाले बीमारियों की स्थिति की बराबर निगरानी रखी जा सकती है।

नैनो फॉरम्यूलेशन

अधिकांशतः पादप रोग नियंत्रण में उपयोगी रासायनिक दवाओं को मशीन की मद्द से बुरकाव छिड़काव विधि से प्रभावी स्थानों पर फैलाया जाता है। इस प्रक्रिया में अधिक मात्रा में दवाओं के मूल असरकारी स्वरूप बिखरकर लुप्त हो जाते हैं। दूसरी ओर लक्षित पौधों को बचाने में आर्थिक विफलता हाथ लगती है। इस दशा में पौधों के ऊपर पनप रहे रोग पर दवाओं का स्थाई असर नहीं के बराबर होता है। इस स्थिति से निपटने के लिए इन दिनों असरकारी दवाओं को नैनो फॉरम्यूलेशन विधि से सुरक्षित करके खेत में प्रयोग किया जाता है।

जैव संश्लेषित नैनो कण

जैव नियंत्रण विधि से नाशी रोग तथा कीटों की रोकथाम में जैविक सूक्ष्मजीवी कारक जैसे जीव-जंतुओं के प्रति मारक स्वभाव रखने वाले कवक, जीवाणु, विषाणु इत्यादि का उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए गन्ना में नाशीरोग (लाल सड़न) तथा नाशीकीट (ऊतक बेधक कीट) के आर्थिक क्षति पहुँचाने की दशा में क्रमशः ट्राईकोडर्मा कवक तथा ग्रेनोलोसिस विषाणु का उपयोग प्रकृति में पाया जाता है। इनके व्याधिजन्य जैविक नैनों कणों की *जीन डिलीवरी* तकनीक से फसल को हानिकारक रोग तथा कीटों से सुरक्षित किया जा सकता है।

कवकों के नैनो कण

यह सर्वविदित है कि फसलों में रोग उत्पन्न करने में कवकों की भरपूर भूमिका होती है। ऐसे कवकों के जीवन-चक्र की शुरूआत विशेष रूप से जीवाणु के सहयोग से होती है और कई कवक दूसरे अन्य कवकों के जीवन पर आश्रित होते हैं, जो आणविक स्तर पर इनके डीएनए तथा आरएनए में विशेष बदलाव के कारक से होता है। आणविक स्तर पर नैनो कणों से *जीन डिलीवरी* के माध्यम से कवक के घातक प्रकोप को काबू किया जाता है।

गन्ना में नैनोटेक्नोलॉजी की अपार सम्भावनाएँ

शर्करा उत्पादन हेतु गन्ना एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल है। इससे चीनी के अलावा, इन दिनों जैव ईंधन, इथेनॉल भी प्राप्त किया जा रहा है तो दूसरी ओर इसके विविध उत्पाद प्रदूषण के खतरों को निम्नतम स्तर तक कायम रखने में मद्द करते हैं। इस क्षेत्र में नैनो टेक्नोलॉजी की अपार संभावनाओं को नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता है।

गन्ना नैनो कम्पोजिट फिल्म: पॉलीथीन का जैविक विकल्प

गन्ना के *बगास* से उच्च गुणवत्ता युक्त नैनो सेल्युलोज रेशे जो अत्यन्त सूक्ष्म नैनो पट्टी (फिल्म) होते हैं, को विविध प्रकार की खाद्य सामग्रियों की पैकेजिंग के अलावा गोंद, दवा तथा इलेक्टॉनिक व्यवसाय में उपयोग किया जाता है। तेहरान विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण शोध कार्य किए हैं। गन्ना अपशिष्ट से विकसित किए गए सेल्युलोज संश्लेषित पॉलीमर की तुलना में अधिक मजबूत तथा *बायोडिग्रेड़बल* होते हैं तथा पर्यावरण में आसानी से घुल-मिल जाते हैं। पॉलीथीन के उपयोग से आए दिन प्रदूषण के चलते जल, मृदा तथा जीव-जन्तुओं के पर्यावरण संतुलन बिगड़ता चला जा रहा है। ऐसे में नैनो कम्पोजिट फिल्म उत्पाद निःसंदेह वरदान के रूप में स्वीकारा जा रहा है।

गन्ना नैनो बायो-सेन्सर

गन्ने के अपशिष्ट तथा अवशेष से नैनो तकनीक पर आधारित अनेक प्रकार के उत्पाद तैयार किए जा रहे हैं। इस कड़ी में *'एप्लाइड सरफेस साइन्स'* शोध पत्रिका में भारतीय वैज्ञानिकों के एक दल ने कम खर्चे में गन्ने के *बगास* से *फ्लोरेसेन्ट कार्बन कवान्टम डौट्स* का निर्माण करने में सफलता हासिल की है। ऐसे चमकदार रोशनी छोड़ने वाले *फ्लोरेसेन्ट डौट्स* पौधों के शरीर में प्रवेश करके *'नैनो सेन्सर'* के रूप में कार्य करते हैं। इस प्रकार किसी भी उपयोगी दवा के होने वाले असर को चिकित्सक आसानी से वांछित परिणाम हेतु आँकलन करके इलाज की दिशा और दशा तय करते हैं। साथ ही विषैले पदार्थों के बनने से पहले वैज्ञानिक पौधों के शरीर में आ रहे क्षति के बारे में सही व सटीक आँकलन कर लेते हैं।

रेडियमयुक्त कार्बन नैनो ट्यूब से इथेनॉल उत्पादन में गन्ना

जीवाश्म ईंधन के रूप में पेट्रोलियम स्रोत में दिनों-दिन आ रही गिरावट की सबसे बड़ी वजह ऊर्जा का तीव्र गति से दोहन है। अनेक कल-कारखानों के संचालन तथा देश व दुनिया के विकास का पैमाना बिना पेट्रोल के तय करना असम्भव है। खपत

के अनुरूप उत्पादन में कमी से, यह अंदेशा है कि आने वाले कुछ वर्षों में खाड़ी के कई देशों की पेट्रोलियम खदानें बंद होने के कगार पर पहुँच जाएंगी। ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप से इथेनॉल जिसे पेट्रोल के साथ मिलाकर गैसोहॉल के नाम से जाना जाता है, से वाहन तथा उद्योग जगत को अभूतपूर्व लाभ मिल रहे हैं।

एक अति विशिष्ट वैज्ञानिक अध्ययन में देखा गया है कि गन्ना, मक्का तथा मीठी ज्वार इत्यादि के सामान्य उत्पादन हासिल करने के बाद प्राप्त बेकार अपशिष्ट अवशेष जो *'बगास'* के नाम से जाना जाता है, से सेल्यूलोज को विशेष तरह से गर्म करने से कार्बन मोनोऑक्साइड तथा हाइड्रोजन गैस की सुलभतापूर्वक प्राप्ति होती है। बाद में इस प्रक्रिया के दौरान प्राप्त गैस को अति विशिष्ट प्रकार के जीवाणु की मद्द से इथेनॉल में बदला जाता है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में जीवाणु को नैनो तकनीक के माध्यम से रेडियम युक्त कार्बन ट्यूब्स से डाला जाता है जो एक प्रकार से उत्प्रेरक का कार्य करता है। इस शोध कार्य में जैव सूचना विज्ञान तथा जैव अभियांत्रिकी तकनीक के मद्द से सबसे पहले कार्बन मोनोऑक्साइड तथा हाइड्रोजन गैस को इथेनॉल में बदलने की क्षमता वाले अति विशिष्ट सूक्ष्मजीवी जीवाणु का वाणिज्यिक स्तर पर उत्पादन तथा उनमें रेडियम समाहित कार्बन नैनो ट्यूब्स के समागमन अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं।

भविष्य की सम्भावनाएँ

नैनो टेक्नोलॉजी के व्यापक उपयोग तथा सम्बंधित अध्ययन, सामान्यतः कम्प्यूटर तथा इलेक्ट्रॉनिक जगत् में हुए हैं। इस यात्रा में सिलिकॉन के नैनो कणों में विद्युत आवेश के प्रति अर्द्धचालकीय

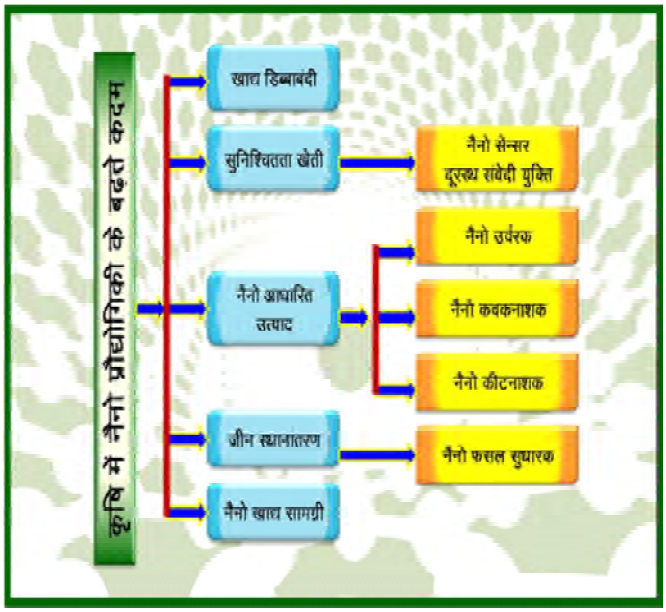

गुण धर्म के माध्यम से नित नए क्षमतावान *सर्किट* तथा *प्रोसेसर* के अविष्कार हो रहे हैं। इस क्रम में विविध प्रकार के डिब्बाबंद सस्ते सुरक्षित खाद्य पदार्थ तथा अन्य भौतिक सुख-सुविधा के वस्तु उत्पादन में नैनो टेक्नोलॉजी के जरिए कीर्तिमान हासिल किए जा रहे हैं। फसलों से भरपूर लाभ पाने के लिए समय के साथ संसाधनों की कमी से निपटने में किसानों को इस नई तकनीकी से भरपूर लाभ उठाना चाहिए। दूसरी तरफ शोध कार्यों को लक्ष्य के अनुकूल लाभप्रद तथा कम खर्चीला बनाने में जन भागीदारी तथा सरकारी मद्द की अहम भूमिका होती है। निःसंदेह नैनो टेक्नोलॉजी यानी महानतम से लघुतम शक्तियों के नित नए बढ़ते कदमों को भला कौन रोक पाएगा?

"सुनु जननि सोई सुतु बड़भागी। जो पितु मातु वचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा।।

अर्थात् श्री राम कहते हैं - "हे माते ! सुनो, वही पुत्र बड़भागी है, जो माता-पिता के वचनों का अनुरागी (पालन करने वाला) है। माता-पिता को संतुष्ट करने वाला पुत्र, हे जननी ! सारे संसार में दुर्लभ है।"

df"k esa le; dh mi;ksfxrk ,oa egRo

lh-ih- flag ,oa nsosUæ flag
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

समय के बारे में समय-समय पर बात होती रहती है, मगर समय का यदि हर समय ख्याल रखा जाय तो जीवन की अनेकों समस्याओं का समाधान यूं ही चुटकी में निकाला जा सकता है। मसलन यदि एक माँ अपने बच्चे के जन्म से पूर्व से लेकर बाद तक उसके पालन पोषण में समय का ध्यान रखे तो वह बालक अपने जीवन में अनेकों रोगों से मुक्त रहकर अपने मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ रखते हुए उत्तम शिक्षा प्राप्त करके देश का सुयोग्य नागरिक बन सकता है। इसी प्रकार समाज के प्रत्येक व्यक्ति या वर्ग के समक्ष समय का प्रत्येक क्षण विशेष महत्व रखता है। हांलाकि यह भी उल्लेखनीय है कि समय का प्रत्येक क्षण मानव के वश में नहीं होता, मगर जो भी हमारे वश में है उसका सदुपयोग करके हम उन्नत के शिखर पर चढ़ने का प्रयास करते रहें तो सफलता अपेक्षाकृत सहज हो जाती है। समाज के अनेकों वर्गों हेतु समय की अलग-अलग प्राथमिकता होती है, मगर समय को प्राथमिकता देना प्रत्येक वर्ग के लिए आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य होता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है और समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग इससे जुड़ा हुआ है जिसे कृषक, किसान, भूमिपुत्र या विभिन्न भाषाओं में अनेकों नाम से जाना जाता है। यह वर्ग कृषि कार्यों में व्यस्त रहता है और इनका अधिकतम समय इन्हीं कार्यों में व्यतीत हो जाता है तथापि इनके कई कार्य समय पर सम्पन्न नहीं हो पाते और जिनका असर फसल उत्पादन पर पड़ता है और अंततः कृषकों की आर्थिक स्थिति प्रभावित होती है। समय की उपयोगिता पर खेती के अनुभवी कवि घाघ की एक कहावत है "का वर्षा जब कृषि सुखाने, समय चूक पुनि का पछताने"। इसमें कवि ने स्पष्ट रूप से कृषि में समय के महत्व को लक्षित किया है। वस्तुतः यह कहावत तो परम्परागत कृषि के दौर में लिखी गई थी जिसमें समय पर वर्षा न होने की वजह से फसल के सूख जाने के दर्द के साथ-साथ समय निकल जाने पर वर्षा होने के अर्थ को नकारते हुए वर्षा से होने वाले लाभों पर भी प्रश्नचिन्ह लगाया गया है। अर्थात कृषि में समय पर कार्य न हो पाने के दुष्परिणाम के प्रति भी कृषक वर्ग को समझाने का प्रयास किया है।

कृषि कार्यों का समय पर सम्पन्न होना कितना महत्वपूर्ण है इस लेख का यही मुख्य उद्देश्य है। कृषि से संबन्धित विभिन्न क्रिया-कलापों व उद्देश्यों में समय की महत्ता को हम निम्नलिखित बिन्दुओं से समझने का प्रयास करते हैं :

किसी भी अन्य व्यवसाय की भांति कृषि व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य भी अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है। सरलतम शब्दों में अगर इसे परिभाषित करें तो उत्पादन और लागत के अन्तर को ही लाभ कहते हैं मतलब यदि हम अधिकतम लाभ प्राप्त करना चाहते हैं तो न्यूनतम लागत से अधिकतम उत्पादन करें। यहाँ पर दोनों ही प्रक्रियाओं यानि लागत कम करने तथा उत्पादन बढ़ाने में समय पर कृषि कार्यों का सम्पन्न होना अति आवश्यक है। विभिन्न कृषि कार्यों को समय से करने पर कृषक किस प्रकार का लाभ प्राप्त कर सकते हैं, इसका उल्लेख विभिन्न कृषि क्रियाओं के संदर्भ में आगे उद्धृत किया गया है।

उचित समय पर खेत की तैयारी

किसी भी फसल की बुआई से पूर्व खेत की समय से तैयारी करना आवश्यक होता है। खेत की तैयारी हेतु समय से पलेवा के बाद उचित ओट आने पर यदि जुताई न की जाय तो जुताई के समय खेत में या तो ढेले निकलेंगे या अधिक नमी रह जाने पर खेत की मिट्टी में भुरभुरापन नहीं आ पाएगा। इससे फसल की बुआई में दिक्कत आने के साथ-साथ ट्रैक्टर या बैलों की क्षमता एवं दक्षता पर प्रतिकूल असर पड़ता है जिससे समय बर्बाद होने के साथ-साथ बुवाई के कार्य में लागत भी बढ़ जाती है और खेत की उचित तैयारी न हो पाने के कारण बीजों का समुचित अंकुरण भी नहीं होता है। इन कारणों से लागत बढ़ने के साथ-साथ उत्पादन भी कम हो जाता है और कृषक को दोहरा नुकसान होता है।

समय पर बुवाई

फसल की बुवाई के संबंध में एक कहावत है "तेरह कातिक तीन आषाढ़" यानि कार्तिक माह अर्थात रबी में बोई जाने वाली फसल की बुवाई तेरह दिनों तथा आषाढ़ अर्थात खरीफ में बोई जाने वाली फसल की बुआई तीन दिनों में समाप्त कर लेनी चाहिए। कारण स्पष्ट है कि रबी की फसल यदि देर से बोई गई तो तापक्रम घटते जाने से अंकुरण प्रतिशत कम होता जाता है जिससे उचित पौध संख्या के अभाव तथा फसल की परिपक्वता

अवस्था पर अधिक तापक्रम के कारण अनाज आदि के दाने सिकुड़ जाने से उत्पादन कम हो जाता है। इसी प्रकार खरीफ फसल का भी समय पर बोना इसलिए आवश्यक है कि शुरूआती वर्षा में यदि फसल न बोई गई तो बाद में अधिक वर्षा की स्थिति में धान जैसी फसलों के अलावा अन्य फसलों की बुआई कर पाना असम्भव हो जाता है और फसल का 25-30 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है। इसके अलावा यदि खरीफ की फसल समय पर तैयार न हुई तो रबी की फसल के लिए खेत की तैयारी का समय नहीं मिल पाता है और फसल की बुआई में देरी होने के कारण उसका उत्पादन प्रभावित होता है।

खरपतवारों का समय पर नियंत्रण

फसल में यदि खरपतवारों का समय पर नियंत्रण न किया जाय तो उत्पादन 25-30% तक कम हो सकता है जिसका सीधा असर कृषि से प्राप्त आय पर पड़ता है। इसके विपरीत यदि यही कार्य समय पर कर लिया जाय तो खरपतवार प्रबंधन हेतु उपयोग किए जाने वाले मजदूरों की संख्या में 50% तक कमी करके लागत को भी कम किया जा सकता है। इस कार्य हेतु यदि शाकनाशियों का प्रयोग करना है तो उचित समय पर अनुप्रयोग करने पर इनकी दक्षता का सीधा असर खरपतवारों पर पड़ता है और वह शीघ्र ही समूल नष्ट हो जाते हैं। खरपतवारों को नष्ट करने हेतु विभिन्न प्रकार के शाकनाशियों की रासायनिक प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है और इनमें से कुछ *प्री-इमरजेंस* होते हैं तो कुछ *पोस्ट-इमरजेंस / प्री-इमरजेंस* शाकनाशियों का उपयोग फसल की बुआई से पूर्व से लेकर बुआई के समय और कुछ को 24, 48 या 72 घण्टों के अंदर करने पर ही इनका उचित लाभ मिल पाता है। वहीं *पोस्ट-इमरजेंस* शाकनाशियों के प्रयोग हेतु खरपतवारों की आरंभिक वृद्धि तथा इनमें बीज बनने से पूर्व की अवस्था उपयुक्त पाई गई है। इस अवस्था में शाकनाशियों की कम मात्रा भी दक्षतापूर्वक कार्य करती है और खरपतवारों के बीज न बन पाने से अगली फसल पर इनका दुष्प्रभाव नहीं पड़ पाता है।

समय पर सिंचाई

फसल में सिंचाई का महत्व वैसे ही है जैसे प्यास लगने पर पानी की उपलब्धता और पानी के अभाव में सही समय पर पानी की आपूर्ति। विभिन्न फसलों की जल मांग भिन्न-भिन्न होती है परंतु फसल की क्रान्तिक अवस्था में यदि सिंचाई न की जाय तो वही कहावत चरितार्थ हो जाती है "का वर्षा जब कृषि सुखाने"। इसलिए कम से कम पानी में अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए उचित समय पर उचित मात्रा में सिंचाई करने से पानी की बचत अर्थात लागत कम होने के साथ-साथ बेहतर गुणवत्तायुक्त उत्पाद भी प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए समय पर सिंचाई का बहुत ही अधिक महत्व है।

फसल की निराई-गुड़ाई का समय

सामन्यतः निराई से हमारा अभिप्राय होता है खरपतवारों का श्रमिकों द्वारा नियंत्रण। अंकुरण के बाद अधिकतर फसलें जब 4-6 इंच की हो जाय तो निराई द्वारा इसे खरपतवार विहीन कर देना चाहिए अन्यथा 25-35 दिन तक फसलें खरपतवारों से ढकी रहने पर इनकी वानस्पतिक वृद्धि प्रभावित होती और फलस्वरूप उत्पादन भी 20-25% कम हो सकता है। इसके अलावा इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि खरपतवारों की कम से कम वृद्धि पर निराई करने से श्रम की बचत होने से लागत में कमी आती है और फसल को वृद्धि का उचित अवसर मिलने से पैदावार भी अच्छी मिलती है। इसी प्रकार गुड़ाई हेतु मृदा में उचित नमी होने से श्रमिकों या मशीन की क्षमता एवं दक्षता का उचित इस्तेमाल हो पाता है और कम समय में अधिक क्षेत्रफल की गुड़ाई की जा सकती है जिससे लागत कम होने के साथ-साथ पौधों की जड़ों को उचित वायु संचार मिलने से उनकी बढ़वार अच्छी होती है और उत्पादन भी अधिक प्राप्त होता है।

खाद एवं उर्वरकों का समय पर उपयोग

खाद एवं उर्वरक फसल के लिए भोजन के समान होते हैं जैसे भूखे को उचित समय पर उचित मात्रा में भोजन प्राप्त हो जाए तो उस भोजन का महत्व कई गुना बढ़ जाता है। इसी प्रकार जैसे अलग-अलग व्यक्तियों का भोजन का समय अलग-अलग होता है, उसी प्रकार विभिन्न फसलों हेतु पोषक तत्वों की भिन्न-भिन्न मात्रा अलग-अलग समय पर आवश्यक होती है। मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर खाद एवं उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण किया जाता है। इन खाद एवं उर्वरकों को यदि उचित मात्रा एवं समय पर नहीं दिया जाता है तो इनका पूर्ण लाभ फसल को नहीं प्राप्त हो पाता है। सामन्यतया खाद को खेत की तैयारी की अंतिम जुताई में मृदा में मिला देने, फास्फेटिक एवं पोटैशिक उर्वरकों की सम्पूर्ण तथा नत्रजन की आधी या तिहाई मात्रा को बुवाई के समय यथासंभव बीज के पास कूँड़ों में डालने तथा नत्रजन की शेष मात्रा को फसल की वानस्पतिक वृद्धि के समय फसल की अवधि के अनुसार एक या दो किश्तों में डालने पर इनका पूर्ण उपयोग हो पाता है। अन्यथा खाद एवं उर्वरकों पर लगाई गई लागत का पूर्ण लाभ फसल को मिल न पाने से आर्थिक हानि के साथ-साथ उत्पादन भी कम प्राप्त हो पाता है।

फसल सुरक्षा में समय का महत्व

फसलों को यदि रोग एवं कीटों से मुक्त न रखा जाय तो

फसल की सम्पूर्ण क्षति भी सम्भव है। इसलिए कीट एवं रोगों की समय रहते पहचान करना और उनका नियंत्रण करना अति आवश्यक है। बुवाई के समय ही बीज शोधन द्वारा मृदाजनित रोगों की रोकथाम के उपाय के साथ-साथ फसल पर कीटों का प्रादुर्भाव हो और उसी समय नियंत्रण के उपाय कर लिए जाएँ तो फसल को महामारी से बचाया जा सकता है तथा जीवनाशियों की अति अल्प मात्रा से ही संबन्धित कीटों या रोगों पर नियंत्रण किया जा सकता है। कीटनाशकों के उपयोग में समय के साथ-साथ कीटों की संख्या द्वारा फसल के नुकसान की मात्रा का आकलन करना भी आवश्यक है क्योंकि कीटों द्वारा नुकसान एवं उनके नियंत्रण पर खर्च में संतुलन न होने पर कृषक को आर्थिक हानि हो सकती है। मगर इतना सुनिश्चित है कि कीटों की शुरूआती संख्या पर कीटनाशकों का समय पर छिड़काव करने से कीटनाशियों की मात्रा पर अपेक्षाकृत कम खर्च होता है तथा कीटों से होने वाले नुकसान से भी बचा जा सकता है।

परिपक्व फसल की समय पर कटाई

फसल को यदि परिपक्वता के पूर्व काट लिया जाय तो अनाज वाली फसलों के दाने सिकुड़ जाते हैं और उनका वजन कम रह जाने के साथ-साथ उत्पाद की गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है। इस स्थिति में उत्पादन तो कम होता ही है और घटिया गुणवत्ता के कारण बाजार में उत्पादों का उचित मूल्य भी नहीं मिल पाता है। दूसरी तरफ यदि फसल अधिक परिपक्व हो जाती है तो कटाई के दौरान अनेक फसलों के दाने झड़ जाते हैं और उत्पादन घट जाता है। फल व सब्जियों की गुणवत्ता में भारी कमी आ जाती है और गन्ने की फसल में चीनी परता में कमी आ जाती है। इसके अलावा अगली फसल हेतु समय पर खेत खाली नहीं मिल पाता है जिससे फसल चक्र अव्यवस्थित हो जाता है।

फसलोपरान्त कृषि कार्य

फसल की कटाई के बाद अनेकों फसलों में भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न करने पड़ते हैं और यदि उन्हें समय पर सम्पन्न न किया जाय तो अनेकों परेशानियों के साथ कृषक को नुकसान भी उठाना पड़ सकता है। उदाहरणार्थ फल एवं सब्जियों की उचित पैकिंग के साथ उन्हें मंडी में समय से न पहुँचा पाने पर यह नष्ट हो जाते हैं। धान्य फसलों की *थ्रेशिंग, विनोइंग* एवं *ग्रेडिंग* समय से न करने पर चूहे, गिलहरी, जानवरों आदि द्वारा नुकसान के अतिरिक्त असमय वृष्टि, आग आदि से फसलों के उत्पाद जल या सड़ जाने के कारण उनकी गुणवत्ता भी समाप्त हो जाती है जिससे किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।

कृषि उत्पादों का समय पर विपणन एवं भंडारण

फसल उत्पादों के विपणन व भंडारण में भी यदि समय का ध्यान न रखा जाय तो संभव है कि कृषि उत्पादों के भाव सही न मिलें। इसलिए उत्पादों के विपणन में उचित समय का ध्यान रखें। यदि उत्पाद शीघ्र नष्ट होने वाले हैं और उनके प्रसंस्करण की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं है तो यथाशीघ्र इनका निस्तारण करना लाभकारी होता है। धान जैसी फसल के भंडारण में नमी कम होते जाने से वजन में कमी आती जाती है जो कि कृषक के लिए लाभकारी नहीं होती है। इसके विपरीत अन्य अनाज यदि भंडारित किए जाएँ तो बेमौसम में उनका भाव अच्छा मिल सकता है। अतः विभिन्न फसलों के भंडारण हेतु बाजार भाव की नवीनतम सूचनाओं से अवगत रहते हुए कृषि उत्पादों के विपणन या भंडारण का समय सुनिश्चित करने पर आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

उपरोक्त वर्णित कृषि कार्यों में समय की उपयोगिता के महत्व को मात्र फसल से संबन्धित कार्यों तक ही सीमित रखा गया है। मगर यदि हम कृषि व्यवसाय से संबन्धित अन्य धंधों जैसे पशु पालन, मछली पालन, मशरूम की खेती, रेशम कीट या मधुमक्खी पालन आदि की बात करें, जिनमें सजीव जीवों का समावेश हो, तो उनमें व्यवहारिक समय की न्यूनतम इकाइयों यानि सेकेंडों, मिनटों एवं घंटों का भी बहुत महत्व है। चंद मिनटों की लापरवाही से कोई भी धन्धा चौपट हो सकता है। निष्कर्षतः कृषक बंधुओं से इस लेख के माध्यम से हमारा आग्रह है कि समय की कीमत को समझें और अपने कृषि कार्यों को समय पर सम्पन्न करके स्वयं सम्पन्नता की ओर अग्रसर होकर देश की प्रगति में सरकार और देशवाशियों का सहयोग करें।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

lefdr çc/ku }kjk mRikfnr LoLFk cht l; xUus dh mit o 'kdjk c<k,¡

jke th yky

lokfuoRr i/kku oKkfud] Hkkdvui&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

भारत में गन्ना एक नगदी फसल है। गन्ना आय, साधन, ग्रामीण श्रम योजना, चीनी, गुड़ एवं खाण्डसारी आदि के उत्पादन का प्रमुख स्रोत है। आधुनिक युग में गन्ने का महत्व सह उत्पादकों जैसे शीरा से अल्कोहल तथा इथेनाल, खोई से बिजली का उत्पादन तथा प्रेस मड से जैविक खाद का उत्पादन आदि के कारण अत्यधिक बढ़ गया है। हमारे देश में गन्ना लगभग 50.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में उत्पादित किया जाता है। विश्व में गन्ना उत्पादन की दृष्टि से ब्राजील के बाद भारत का द्वितीय स्थान है।

एक आकलन के अनुसार, भारत की जनसंख्या वर्ष 2030 तक लगभग 1.5 अरब होने का अनुमान है। देश में इस बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति हेतु 330 लाख टन चीनी आंतरिक घरेलू उपयोग हेतु आवश्यकता है जिसके लिए हमें 100 टन/हे. गन्ना उत्पादकता एवं 11.0 प्रतिशत चीनी परता की आवश्यकता होगी। परन्तु वर्तमान में हमारे देश में गन्ना उत्पादकता लगभग 70 टन/हे. तथा चीनी की परता 10.5 प्रतिशत है। भविष्य में गन्ना के अन्तर्गत क्षेत्र में वृद्धि की कोई संभावना नहीं है। अतः चीनी की आवश्यकता की पूर्ति हेतु गन्ना उत्पादकता में वृद्धि करके ही उपरोक्त लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा गन्ने की प्रति इकाई पैदावार बहुत कम है। पैदावार की कमी के कई कारण हैं। गन्ना हमारे देश की नगदी फसल होने के कारण नए-नए क्षेत्रों में भी उगाया जा रहा है। देश में बीज को एक स्थान से दूसरे स्थान या प्रदेश में ले जाने में भी कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त दो प्रांतों के बीच संगरोध की भी उचित व्यवस्था नहीं है। किसानों द्वारा भी गन्ने की नई-नई प्रजातियों की मांग के कारण बीज के साथ-साथ रोग व कीट भी नए-नए क्षेत्रों में प्रवेश कर जाते हैं। इसके अतिरिक्त, गन्ने की संकर प्रजातियाँ, सिंचाई की सुविधा, उर्वरकों का वर्तमान में अधिक प्रयोग, गन्ने के अंतर्गत क्षेत्र में वृद्धि और बीज को पूर्व फसल से लगातार लेना आदि भी रोगों व कीटों की वृद्धि, के प्रमुख कारण हैं। यदि पिछले 25-30 वर्षों में देश में गन्ने की बोई जाने वाली विभिन्न प्रजातियों, खेत में रोग व कीट का अवलोकन करें तो ज्ञात होता है कि बहुत सी उन्नतशील प्रजातियाँ, रोगों/कीटों से ग्रसित होने के कारण विलुप्त हो गई हैं।

खेत में रोग/कीट ग्रसित बीज बोने से उसका अंकुरण कम हो जाता है, जिसके कारण जगह-जगह रिक्त स्थान दिखाई पड़ते हैं। अच्छी पेड़ी की फसल उपलब्ध नहीं हो पाती हैं तथा अगली फसल के लिए किसान को स्वस्थ बीज उपलब्ध नहीं हो पाता है।

गन्ने की उपज एवं शर्करा बढ़ोत्तरी में बीज का अत्यंत महत्व है। अन्य फसलों की अपेक्षाकृत गन्ने में निम्नलिखित दो प्रकार के बीज पाये जाते हैं :

गन्ने का बीज *(केन सीड)* एवं बीज का गन्ना *(सीड केन)* गन्ना उत्पादकों को उपरोक्त दोनों प्रकार के बीजों में अंतर समझना अत्यंत आवश्यक है।

गन्ने का बीज (वास्तविक बीज)

गन्ने के बीज से तात्पर्य वास्तविक बीज से होता है। गन्ने के सूखे बीज को *'फ्लफ'* कहते हैं जो देश में बहुत ही सीमित क्षेत्र में पैदा होता है। इस प्रकार के बीज का उत्पादन देश में मुख्यतः गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर, (तमिलनाडु) में होता है क्योंकि वहाँ की प्राकृतिक जलवायु इसके लिए अत्यंत उत्तम है। इस प्रकार के बीज का उपयोग गन्ने की नयी-नयी प्रजातियां विकसित करने में किया जाता है।

बीज का गन्ना *(सीड केन)*

बीज के गन्ने से तात्पर्य गन्ने के छोटे-छोटे टुकड़ों से होता है, जिन्हें बोने पर नये-नये पौधे निकलते हैं। गन्ना एक विष्मयुग्मजी एवं बहुगुणित फसल है। अतः इन्ही टुकड़ों द्वारा फसल का वास्तविक प्रजनन करते हैं, जिससे बीज की शुद्धता बनी रहती है। हमारे देश की जलवायु एवं मिट्टी गन्ने की खेती के लिए अनुकूल होने के बावजूद भी गन्ने की उपज एवं शर्करा उत्पादन संतोषजनक नहीं है। जिनमें कृषकों द्वारा स्वस्थ व शुद्ध बीज बोने का प्रयोग न करना प्रमुख है। अतः ऐसा बीज बोने से निम्नलिखित हानियाँ होती हैं :

अस्वस्थ बीज का फसल पर प्रतिकूल प्रभाव

अस्वस्थ (रोग व कीट ग्रसित) बीज

- अस्वस्थ बीज बोने से खेत में अंकुरण कम होता है जिससे खेत में जगह-जगह रिक्त स्थान दिखाई पड़ते हैं।
- यदि बीजों में रोगों या कीटों के प्रकोप के लक्षण देर से परिलक्षित होते हैं तो फसल की उपज कम हो जाती है। सह उत्पादक जैसे शीरा या खोई की मात्रा बढ़ जाती है एवं चीनी परता में गिरावट तथा उसकी गुणवत्ता में ह्रास होता है।
- अस्वस्थ बीज के प्रयोग में गन्ने की प्रजातियाँ बहुत समय तक खेत में नहीं टिक पाती हैं और धीरे-धीरे विलुप्त हो जाती हैं। अतः स्वस्थ बीज द्वारा उन्हें अधिक समय तक जीवित रखा जा सकता है।

गन्ने को एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाने पर हमारे देश में कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त, गन्ने की बावक व पेडी फसल दो वर्ष या उससे अधिक समय तक खेत में खड़ी रहती है। अतः एक बार गन्ने की बीज की फसल में यदि रोगों या कीटों का संक्रमण हो जाए तो वह अप्रत्यक्ष रूप से रोपण सामग्री, वायु तथा सिंचाई माध्यम द्वारा एक फसल/खेत/प्रजाति से दूसरी फसल/खेत/प्रजाति में फैल जाते हैं जिससे फसल की उपज में कमी आ जाती है। अतः गन्ने की अच्छी फसल प्राप्त करने हेतु स्वस्थ बीज का होना अत्यंत आवश्यक है।

स्वस्थ बीज की विशेषताएँ

बोने वाले गन्ना बीज में कई किस्मों/प्रजातियों का मिश्रण नहीं होना चाहिए। बोने वाला गन्ना बीज, रोग/कीट मुक्त होना चाहिए। बीज गन्ने में पानी की पूरी मात्रा होनी चाहिए। अतः इसके लिए गन्ने का ऊपरी 2/3 भाग बीज के लिए उपयुक्त होता है।

गन्नों के बीज का चयन का आधार एवं सीमाएं

गन्ने की उपज दोनों ही प्रकार के बीजों (वास्तविक बीज एवं बीज का गन्ना) के चयन पर आधारित है अतः इसका चयन करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है :

- गन्ने का वास्तविक बीज, रोग/कीट ग्रसित पुष्पक्रम से नहीं लेना चाहिए। ऐसे बीज द्वारा गन्ने में विशेषकर पर्णदाह रोग फैलने की संभावना अधिक रहती है।
- बीज के लिए गन्ना ऐसे खेत से गन्ना लेना चाहिए जिसमें पहले इसकी फसल न ली गयी हो तथा उसमें जल निकास का प्रबंध हो क्योंकि जल भराव होने पर गन्ना बीज में लाल सड़न रोग के संक्रमण का भय बना रहता है तथा गन्ने की गाँठों पर जड़ें निकल आती हैं जिससे वह बीज के लिए उपयुक्त नहीं होता है।
- पेड़ी फसल से उष्मोपचारित बावक फसल का गन्ना बीज के लिए उपयुक्त होता है। अतः बीज का गन्ना ऐसी ही फसल से लेना श्रेयस्कर होता है।
- बीज गन्ने की फसल की आयु 10 महीने एवं प्रत्येक गन्ने की गांठों पर स्वस्थ आँख होनी चाहिए। यदि बीज गन्ने की 5% से अधिक आँखें अस्वस्थ व क्षतिग्रस्त हों तो ऐसे गन्ने को बीज के लिए नहीं लेना चाहिए।
- बीज गन्ने में कम से कम 50% नमी तथा 25% अंकुरण क्षमता होनी चाहिए।
- बीज गन्ना शुद्ध होना चाहिए एवं उनमें विभिन्न किस्मों/प्रजातियों का मिश्रण नहीं होना चाहिए।

बीज के लिए गन्ना चयन करते समय विभिन्न रोग/कीट की अधिकतम सीमाएं जिन्हें तालिका-1 में दर्शाया गया हैं, पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है।

बीज गन्ने का समेकित प्रबंधन द्वारा उत्पादन

गन्ने की उपज एवं अधिक शर्करा प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित विधियों द्वारा स्वस्थ व शुद्ध बीज (वास्तविक एवं वानस्पतिक) प्राप्त किया जा सकता है :

यांत्रिक एवं सस्य क्रियाएँ

- गन्ने के टुकड़ों को बुवाई से पूर्व पानी में डुबोकर बोना चाहिए। ऐसा करने से बीज का अंकुरण अधिक होता है।
- खेत में उचित नमी भी बीज के अधिक जमाव के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
- बीज गन्ने की फसल में नाइट्रोजन व फास्फोरस की 25% और पोटाश की 50% अधिक मात्रा देना अत्यन्त आवश्यक है। नाइट्रोजन की 25% बढ़ी मात्रा कटाई के 4-6 सप्ताह पूर्व दे देना चाहिए जिससे जमाव अधिक होता है।
- सूखी पत्तियों को अगस्त-सितम्बर में निकाल देना चाहिए जिससे रोग/कीट का प्रकोप कम हो जाता है।
- बीज गन्ने को अधिक दूरी तक ले जाने पर नमी का ह्रास हो जाता है जिससे जमाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः सूखी पत्तियों के साथ पूरे गन्ने पर पानी छिड़क कर बोना चाहिए।

बीज गन्ने की बुआई हेतु निम्नलिखित समय उपयुक्त होता है।

उत्तरी भारत- फरवरी, मार्च तथा अक्टूबर

दक्षिणी भारत- मुख्य फसल- नवम्बर, मार्च तथा
अदसाली फसल- जून-सितम्बर

तालिका 1. बीज गन्ने में विभिन्न रोगों/कीटों की अधिकतम सीमाएँ (प्रतिशत में)

jksx/dhV	Qly dk fujh{k.k fnu	vk/kkj cht	çekf.kr cht	0;kfjd cht
लाल सडन	40–60	0	0	0
	120–130	0	0	0
	काटने से 15 दिन पूर्व	0	0	0
कंडुआ	40–60	0.01	0.01	0.01
	120–130	0.01	0.01	0.01
	काटने से 15 दिन पूर्व	0	0	0
घासी प्ररोह	120–130	0.05	0.05	0.05
	काटने से 15 दिन पूर्व	0.01	0.01	0.01
उकठा	काटने से 15 दिन पूर्व	0.01	0.01	0.01
पर्णदाह	120–130	0.01	0.01	0.01
	काटने से 15 दिन पूर्व	0	0	0
चोटी बेधक*	120–130	5	5	5
	काटने से 15 दिन पूर्व	5	5	5
पोरी बेधक*	काटने से 15 दिन पूर्व	10	10	10
तना बेधक*	काटने से 15 दिन पूर्व	20	20	20
प्लासी बेधक*, गुरुदासपुर बेधक*, शल्क कीट* एवं मिली बग*	काटने से 15 दिन पूर्व	5	5	5

*कीटों को नवीन क्षेत्र में नहीं जाने देना चाहिए।

संदर्भः शाही, एच.एन. (2000) गन्ना अनुसंधान के 50 वर्ष

• अंतरालिक प्रतिरोपण विधि द्वारा बीज गन्ना उत्पादन

इस विधि में ताप शोधित गन्ने के एक आँख के टुकड़ों को 10 मीटर × 5 मीटर की क्यारियों में रोपाई से लगभग एक महीने पूर्व बुआई कर देना चाहिए। इसके लिए दो टन/हे. संशोधित बीज की आवश्यकता होती है। तीन पत्ती वाली नर्सरी, पौध का रोपण नालियों में (60 से.मी.) करने से गन्ने की उपज (1:40) के अनुपात में बढ़ जाती है। समय-समय पर रोग व कीट ग्रसित पौधों को नर्सरी से उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

• ऊतक संवर्धन द्वारा बीज गन्ना उत्पादन

इस विधि द्वारा गन्ने के मेरिस्टमेटिक ऊतकों द्वारा पौधों को प्रयोगशाला में नियंत्रित वातावरण में उगाया जाता है। इस विधि से प्राप्त पौधे विषाणु रोग से पूर्णतयाः मुक्त होते हैं तथा उसमें खनिज तत्वों की उपलब्धता भी बढ़ जाती है। नयी-नयी प्रजातियों के अधिकतम एवं शीघ्र विकास हेतु यह तकनीकी अत्यन्त उपयोगी है।

• **उष्मोपचार :** निम्नलिखित उष्मोपचार तकनीकी से गन्ने का स्वस्थ बीज उत्पादित किया जा सकता है। जिसमें बीज गन्ने में उपस्थित जीवजनित रोग एवं कीट नष्ट हो जाते हैं।

गन्ने को एक उपयुक्त तापक्रम व समय तक गरम करने को उष्मोपचार कहते हैं। बीज गन्ने का उष्मोपचार करने से कुछ रोगों जैसे पेड़ी कुंठन, घासी प्ररोह, कंडुआ आदि से विल्कुल छुटकारा मिल जाता है तथा लाल सड़न व उकठा रोगों का प्रभाव कुछ सीमा तक कम हो जाता है।

गन्ने के उष्मोपचार की दो विधियां प्रचलित हैं। पहली गर्म जल, जिसमें गन्ने के टुकड़ों को 50^0 सेल्सियस पर दो घंटे तक गर्म करते हैं। दूसरी विधि में नम-गर्म-वायु द्वारा 54^0 सेल्सियस पर 2 घंटे तक गर्म करते हैं। गन्ने का उपचार करते समय संयंत्र के अंदर की आर्द्रता 99 प्रतिशत होनी चाहिए। इस विधि में समूचे बीज गन्ने को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित नर्म गर्म वायु उपचारित संयंत्र में उपचारित किया जाता है। उपचारित गन्नों को निकालकर तीन आंखों वाले टुकड़ों में विभाजित कर लेते हैं और बेविस्टिन 0.2 प्रतिशत के घोल में 30 मिनट तक डुबोने के पश्चात बो देते हैं। ऐसा करने से बीज का अंकुरण अधिक होता है, उनके किल्ले शीघ्र बढ़ते हैं तथा फसल पर रोगों का प्रभाव भी कम हो जाता है।

गन्ना बीजोपचार संयंत्र

शुष्क-नम-गर्म, वायु शोधन इकाई

इकाई की क्षमता - 4-4½ कु. गन्ना
इकाई की ट्रे का क्षेत्रफल - 30 मी.^{2}
आवश्यक ऊर्जा - 25 किलो वाट, 440 वोल्ट
उपचार समय - 4½ घण्टे
इकाई चलाने का खर्च - ₹ 800/बीजोपचार

इकाई का बाह्य दृश्य

इकाई की कुल कीमत - ₹ 3.50 लाख

बीज शोधन हेतु

समय - 2½ घण्टा
तापमान - 54^0 सेल्सियस
आर्द्रता - 95 से 99 प्रतिशत

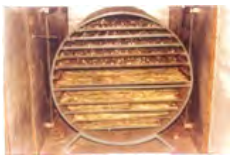

इकाई का आन्तरिक दृश्य

त्रिस्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम द्वारा स्वस्थ्य बीज गन्ना उत्पादन

गन्ने का स्वस्थ एवं शुद्ध बीज किस प्रकार तैयार किया जाये और किसानों को उसकी उपलब्धता किस माध्यम से कराई जाय इसे काफी अनुसंधान एवं अनुभव के बाद प्रतिपादित किया गया है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में किए गए परीक्षणों के आधार पर एक त्रिस्तरीय बीज-उत्पादन कार्यक्रम तैयार किया गया है। इसके तीन चरण तीन वर्षों में पूर्ण होते हैं। प्रथम वर्ष में प्रजनक बीज को नम-गर्म वायुशोधन यंत्र में उष्मोपचारित करके आधार बीज का उत्पादन किया जाता है। दूसरे वर्ष में आधार बीज को बिना उष्मोपचार के एस.टी.पी. विधि द्वारा सवंर्धित करके प्रमाणित बीज और तीसरे वर्ष भी दूसरे वर्ष की भांति प्रमाणित बीज से व्यवसायिक बीज का उत्पादन किया जाता है। इन तीनों चरणों में रोग व कीट ग्रसित पौधों को उखाड़कर जला दिया जाता है। इस प्रकार वर्ष के अंत में किसानों को यह व्यवसायिक बीज उपलब्ध करा दिया जाता है।

(त्रिस्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम)

प्रजनक बीज का चयन
↓
प्रथम वर्ष — शुष्क नम गर्म वायु शोधन (8 कु./दिन)
प्रजनक बीज का उत्पादन — प्रथम चरण
(60 कु.)
↓
द्वितीय वर्ष — आधार बीज का उत्पादन — द्वितीय चरण
(600 कु.)
↓
तृतीय वर्ष — प्रमाणित बीज का उत्पादन — तृतीय चरण
(6000 कु.)

- तृतीय वर्ष के अन्त में इस विधि द्वारा 100 हे. क्षेत्र के लिए गन्ना बोने के लिए पर्याप्त होता हैं।

गन्ने के आधार तथा व्यापारिक बीज में विभिन्न रोगों/कीटों का प्रकोप होता है। अतः दोनों प्रकार के स्वस्थ बीज उत्पादन हेतु उनका समय-समय पर नियंत्रण करना अत्यन्त आवश्यक है (तालिका 2)।

तालिका 2. गन्ने में बीजजनित रोग एवं कीट

cht dk çdkj	jkx dk idki	dhV dk çdki
वास्तविक बीज (केन सीड–*फ्लफ*)	पर्ण दाह	–
वानस्पतिक बीज (बीज का गन्ना)	लाल सडन, कंडुआ, म्लानि, उकठा, पर्णदाह, पेड़ी कुंठन, घासी प्ररोह, मोजेक आदि	प्ररोह बेधक, तना बेधक, शल्क कीट आदि

वास्तविक बीज (केन सीड-*फ्लफ*) एवं वानस्पतिक बीज (सीड केन)

जैविक उपचार द्वारा बीज गन्ना उत्पादन

इस संस्थान में प्रयोगात्मक परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि गन्ना बीज के पेड़ों को *ट्राइकोडर्मा विरिडी* अथवा *ट्राइकोडर्मा हरजेनियम* नामक जैव-कारक कवकों के बीजाणु घोल (10^6 बीजाणु/मि.ली.) से उपचरित करने से उनकी बाह्य सतह पर उपस्थित लाल सड़न रोग का अदृश्य संक्रमण नष्ट हो जाता है। अतः बीज गन्ना बुवाई के समय 220 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा प्रति हेक्टेयर (20 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा कल्चर को 200 कि.ग्रा. प्रेसमड अथवा गोबर की खाद में मिलाकर 10-15 दिन बाद) की दर से प्रयोग करने से बीज का जमाव, पौधों की वृद्धि एवं गन्ने में रोगों के प्रकोप के प्रति अवरोध करने की क्षमता में भी वृद्धि होती है।

रासायनिक उपचार द्वारा बीज गन्ना उत्पादन

- नर्सरी/पौधशाला में गन्ने के वास्तविक बीज *(फ्लफ)* के बोने हेतु क्यारियाँ भूमि की सतह से लगभग 15-20 से.मी. उठी हुई बनाना चाहिए एवं उसके चारों तरफ पानी के निकास का उचित प्रबंध होना चाहिए। क्यारियों को फँफूदीनाशक दवा जैसे बाविस्टीन (2 ग्राम प्रति लीटर की मात्रा से पानी में मिलाकर) से उपचारित कर लेना चाहिए जिससे मृदा में उपस्थित रोगजनक के जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।
- बीज गन्ना बोने से पहले पेड़ों को भी बाविस्टीन (2 ग्राम प्रति लीटर की मात्रा) से घोलकर लगभग आधे घंटे डुबोकर उपचारित कर लेना चाहिए जिससे बीज गन्ने का अंकुरण अच्छा होता है।

अतः गन्ना उत्पादक यदि स्वस्थ बीज, समेकित गन्ना उत्पादन हेतु उपरोक्त बताए गये प्रबन्धनों का समय पर अमल करें तो स्वस्थ बीज प्राप्त किया जा सकता है जिसको बोने से गन्ने की उपज एवं शर्करा उत्पादन में बढ़ोत्तरी की जा सकती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUu e iMh dk çc/ku dl dj\

ekgu flg ,o vkj-d- flg
df"k foKku dUn] fcykjh] ejknkckn

गन्ने की खेती में पेड़ी का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है, बावक फसल की तुलना में पेड़ी पर 20-25% लागत कम आती है, क्योंकि खेत की तैयारी, बीज व बुवाई आदि पर होने वाले खर्च नहीं होते। गन्ने की खेती को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने में पेड़ी का योगदान महत्वपूर्ण है। बावक गन्ना जमीन से मिलाकर काटने के बाद जमीन के अन्दर जड़ के साथ मिले हुए गन्ने से उचित नमी व उचित तापक्रम पाकर जिन पौधों का फुटाव होता है उसे 'पेड़ी' कहते हैं। गन्ने की खेती में पेड़ी का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि बावक फसल की तुलना में पेड़ी पर 20-25% कम लागत आती है, साथ ही आमदनी भी अधिक होती है गन्ना पेड़ी के खेत की तैयारी, बीज व बुवाई आदि पर होने वाले खर्च नहीं होते। गन्ने की खेती को आर्थिक दृष्टि से सक्षम बनाने में पेड़ी का योगदान महत्वपूर्ण है।

गन्ना फसल बोते समय ध्यान रखें कि अच्छी पेड़ी देने वाली प्रजातियों का ही चुनाव करें।

अगेती प्रजाति : को. 0238, को. 0239, को. 98014, को. 0118, को.जे. 88, को.जे. 85, को.शा. 8436, को.से. 03234, को.से. 94184

सामान्य प्रजाति : को.से. 95422, को.शा. 767, को.शा. 8432, को. शा. 97264, को.शा. 95422

बावक फसल की कटाई फरवरी व मार्च माह में सर्दी कम होने पर ही करनी चाहिए। क्योंकि सर्दी कम हो जाने पर पेड़ी का फुटाव अच्छा हो जाता है। पेड़ी के अच्छे फुटाव के लिए बावक गन्ने की कटाई भूमि की सतह से पलकटी से करनी चाहिए। यदि खेत में ठूँठ रह गये हों तो उन्हें भूमि की सतह से मिलाकर काट देना चाहिये। ऐसा करने से पेड़ी का फुटाव अधिक होता है। इसके बाद सिंचाई व 40 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ देना चाहिये। खेत के ओट आने पर दो पंक्तियों के बीच में हल चलाकर गन्ने की पुरानी जड़ों को नष्ट कर देना चाहिए। ऐसा करने पर पौधों की नई जड़ें निकलकर खेत में फैल जाती हैं। इन नई जड़ों के सम्बंद्ध से पौधे भूमि से पोषक तत्वों का अवशोषण करते हैं तथा गन्ना भी कम गिरता है।

पानी की कमी होने पर पताई को पंक्तियों के बीच में 7.8 सें.मी. मोटी परत बिछा देनी चाहिये। ऐसा करने से पेड़ी के खेत में सिंचाई के बाद नमी बनी रहेगी, खरपतवार भी कम उगेंगे, गन्ने की पताई धीरे-धीरे सड़ती रहती हैं तथा कम्पोस्ट खाद का काम करती हैं। बावक फसल की कटाई के बाद सभी मुंड से पेड़ी का फुटाव नहीं होता, जिसके कारण खेत में जगह-जगह रिक्त स्थान बन जाते हैं। इन रिक्त स्थानों को भरने के लिए पहले से तैयार नर्सरी से पौधे उखाड़कर लगा देना चाहिए या फिर दो-आँखों वाले टुकड़ों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कर दें जिससे खेत में पौधों की संख्या अधिक रहेगी और अधिक पैदावार मिलेगी।

पेड़ी गन्ने की फसल को बावक फसल की अपेक्षा 20 से 25 प्रतिशत अधिक नत्रजन की जरूरत होती है, क्योंकि पेड़ी फसल की वृद्धि कम होती हैं, बावक फसल की जड़ों व पताई को गलाने के लिए नत्रजन की अतिरिक्त आवश्यकता होती हैं। पेड़ी फसल को 350 से 400 कि.ग्रा. यूरिया की मात्रा प्रति हेक्टेयर तीन बार में देना उचित रहता हैं।

फसल कटाई के 10 से 15 दिनों के बाद 150 कि.ग्रा. प्रति एकड़, अप्रैल के अंतिम सप्ताह में 150 कि.ग्रा. प्रति एकड़ एवं मई के मध्य में 100 कि.ग्रा. प्रति एकड़ डालना उचित रहेगा।

पेड़ी फसल में एन.पी.के. 18:18:18 जल विलेय उर्वरक का प्रयोग काफी लाभदायक रहता हैं। अप्रैल से मई तक तथा मध्य जून तक जल विलेय उर्वरक को तीन बार में 2 कि.ग्रा. व प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करने से अधिक उपज ली जा सकती हैं। इसके प्रयोग करने से 30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति एकड़ की बचत की जा सकती हैं।

गन्ने की फसल को एक पूर्ण जीवनकाल के लिए 60 से 70 इंच पानी की आवश्यकता होती है, जिसमें आधा पानी वर्षा से प्राप्त हो जाता है, सुविधानुसार 15 से 20 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करने से पेड़ी फसल की अच्छी पैदावार होती हैं। पेड़ी फसल में काला चिकटा *(ब्लेक बग)* तथा गुलाबी चिकटा कीट का प्रकोप अप्रैल से मई में होता हैं। ये गन्ने की पत्तियों का रस चूस जाते हैं, जिससे पत्तियां पीले रंग की हो जाती हैं, पौधे धीरे-धीरे मुरझाने लगते हैं। इसके नियंत्रण के लिए रॉकेट (प्रोफोनोफोस्साइपर) 400 मि.ली. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये।

सैनिक कीट की सुड़ियां रात को पौधों की पत्तियाँ खाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियों में केवल मध्य शिरा ही बच पाती हैं, ऐसे समय में 500 मि.ली. प्रति एकड़ क्लोरोपायरीफास डालकर दिन में सिंचाई कर देनी चाहिए, क्योंकि ये हरे रंग की सुड़ियाँ दिन में पौधों की जड़ों में रहती हैं। बेधक कीटों के बचाव के लिए 150 मि.ली. कोराजन प्रति एकड़ 300 लीटर पानी में घोलकर ड्रेंचिग करनी चाहिए। ऐसा करने से बेधक कीटों का नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUus dh [krh esa fM&Vªf'kax] e`nqdj.k] gkbax ,oa çkfiax dk egRo

vk'kqrks"k dqekj eYy] o:pk feJk] eqds'k dqekj] ch-Mh- flag ,oa vf'ouh nRr ikBd

Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

स्वस्थ गन्ना उत्पादन हेतु गन्ने में कई कर्षण-क्रियाएँ आवश्यक होती हैं। हर प्रक्रिया का अपना एक महत्व होता है। हालांकि कृषक गन्ने के अच्छे उत्पादन हेतु कर्षण-क्रियाओं को अपनाकर अच्छी उपज प्राप्त करता है परन्तु कुछ ऐसी भी लघु क्रियाएँ हैं जैसे *डि-ट्रैशिंग*, मृदुकरण, *होइंग* एवं *प्रोपिंग* जिनको नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। जहाँ *डि-ट्रैशिंग* की प्रक्रिया कीटों से बचने के लिए उपयोगी होती है, वही मृदुकरण, *होइंग* एवं *प्रोपिंग* गन्ने को गिरने से बचाने के लिए उपयोगी होती है जिसके फलस्वरूप गन्ने की गुणवत्ता में सुधार होता है।

गन्ने में *डि-ट्रैशिंग*, मृदुकरण, *होइंग* एवं *प्रोपिंग* की प्रक्रिया एवं महत्व

डि-ट्रैशिंग

गन्ने में पीली हरी और सूखी पत्तियों को हटाने के कार्य को *डि-ट्रैशिंग* कहते हैं। इस कार्य को गन्ने के पांचवें व सातवें माह में किया जाता है। चाकू का प्रयोग करके गन्ने की पत्तियों को व अंकुरित अतिरिक्त प्ररोहों को हटाया जाता है। हाथ से चाकुओं को संभाल कर गन्ने के प्ररोह के ऊपरी भाग पर रखा जाता है जहाँ से *डि-ट्रैशिंग* करनी होती है। स्वाभाविक रूप से गन्ने की पत्तियाँ एक दूसरे के विपरीत 180 डिग्री पर व्यवस्थित होती हैं। गन्ने की कलियाँ भी पत्तियों के रूप में भी व्यवस्थित होती हैं। गन्ने के पुराने व सूखे प्ररोह को एक बार में ऊपर से नीचे आसानी से हटा दिया जाता है। किसानों को इस उपकरण का प्रयोग करके गन्ने की खड़ी फसल में *डि-ट्रैशिंग* का कार्य आसानी से हो जाता है। इस उपकरण का प्रयोग करने से श्रमिकों की आवश्यकता न्यूनतम होती है और समय भी बहुत कम लगता है। वास्तव में, नीचे की हरी पत्तियाँ ऊपरी उत्पादक पत्तियों पर परजीवी की तरह होती हैं। इस कारण से, गन्ने से सूखी और हरी पत्तियों को दूर करना महत्वपूर्ण होता है। यह कार्य गन्ने के रोपण के लगभग 150 दिनों के बाद किया जाता है।

डि-ट्रैशिंग का महत्व

कीटों के हमले से बचने के लिए इस कार्य को किया जाता है। इस प्रक्रिया से गिरी हुई पत्तियों का उपयोग पशुओं के आहार के लिए या *मल्चिंग* के लिए किया जाता है। गन्ना के अप्रतिबंधित विकास के लिए एक आदर्श सूक्ष्म जलवायु प्रदान करने वाली फसल चंदवा के भीतर वायु गति को बढ़ाता है और कार्बन डाईऑक्साइड को समृद्ध करता है एवं प्ररोह विकास के लिए अधिक भोजन सामग्री उपलब्ध कराती है। कुछ किस्मों में पत्ती के खोलों के अंदर पानी के संचय के कारण अंकुरण को कम करता है। साफ खेतों में चूहे व गिलहरी भी कम रहते हैं, अन्यथा ये फसल को नुकसान पहुँचा सकते हैं। गन्ने की कटाई में आसान और कम खर्च की सुविधा प्रदान करता है। पत्तियों को नमी संरक्षण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। स्वच्छ पत्तियों का उपयोग खाद बनाने के लिए किया जा सकता है।

मृदुकरण

मृदा के टीलों को तोड़ना व कुंड को टीलों में व टीलों को कुंड में परिवर्तित करने की प्रक्रिया को गन्ने में मृदुकरण कहते हैं। यह कार्य तब किया जाता है जब गन्ने की फसल 5 से 6 माह की हो जाती है और गन्ने में दो से तीन पोरी दिखाई देने लगती है। यह पौधे को सहारा देती है व पौधे को पानी से सीधे संबंध में आने से रोकती है। मृदुकरण को *''हीलिंग-अप''* भी कहते हैं। इस कार्य को 2 से 3 चरणों में किया जाता है।

प्रथम चरण : आंशिक मृदुकरण

आंशिक मृदुकरण को रोपण के 45 दिनों के बाद किया जाता है। इस चरण में कूँड़ के दोनों ओर से थोड़ी मात्रा में मृदा ली जाती है और गन्ने की प्ररोह के पास एकत्र की जाती है। आंशिक मृदुकरण के दौरान आंशिक रूप से कूंड़ मृदा से भर जाती है।

दूसरा और तीसरा चरण : पूर्ण मृदुकरण

पूर्ण मृदुकरण की प्रक्रिया गन्ने के बुवाई के 120 दिनों बाद की जाती है जो संयोग से अधिकतम किल्ले निकलने की चरण में की जाती है। इस प्रक्रिया से नाली कूँड़ में व कूँड़ नाली में परिवर्तित हो जाती है। यह प्रक्रिया या तो मानव के हाथों से या ट्रैक्टर या हल द्वारा की जा सकती है। इनमें से किस तरीके से यह प्रक्रिया की जाए यह इस बात पर निर्भर करती है कि खेत में नाली की दूरी कितनी है। प्रारंभिक चरण (यानी, बुवाई के 120 दिनों बाद) की समाप्ति पर पूर्ण मृदुकरण से गन्ने की किल्ले

निकलने की प्रक्रिया को जाँचता है। इस प्रक्रिया से गन्ने की जड़ों के प्रसार के लिए मृदा में पर्याप्त मात्रा प्रदान करती है। साथ ही यह बेहतर मृदा वातन को बढ़ावा देता है और फसल को गिरने से रोकने में सहायता प्रदान करता है। गन्ने की बुवाई के 180 दिनों बाद पर जब गन्ने की पादप संख्या में संतुलन हो जाता है उस समय पर पूर्ण मृदुकरण से गन्ने को गिरने से व उसमें हवाई जड़ें बनाने से रोकता है। यह वातन में भी सुधार करता है और घास-फूस के उद्भव को भी नियंत्रित करने में मदद करता है।

होइंग

खेती करने वालों की सहायता से होइंग की प्रक्रिया को किया जाता है। यह बुवाई के एक सप्ताह (अंधा छिद्र) पश्चात, दूसरी बार बुवाई के तीन सप्ताहों के बाद व बाद में सिंचाई के बाद की जाती है। अंधे छिद्र की प्रक्रिया में मृदा की ऊपरी परत तोड़ी जाती है जिससे अंकुरित रोपाई के लिए समस्याएं पैदा हो सकती हैं। यह प्रक्रिया घास को उखाड़ने में तथा रोगाणुओं या कीड़ों द्वारा क्षतिग्रस्त गन्नों के बीजों को भी बदलने में सहायता प्रदान करती है। गन्ने की फसल को 4 से 6 होइंग की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया इसलिए आवश्यक होती है क्योंकि इससे मृदा में वायु व नमी बेहतर संरक्षित होती है तथा घास-फूस का नियंत्रण भी हो जाता है।

प्रोपिंग

निचली शुष्क व हरी पत्तियों का उपयोग करके गन्ने की पत्तियों को बांधने की प्रक्रिया को *प्रोपिंग* कहते हैं। यह मुख्य रूप से गन्नों को गिरने से बचाता है। यह प्रक्रिया या तो केवल एक पंक्ति में उगे हुये गन्नों पर या दो पंक्तियों में उगे गन्नों को पास में लाकर की जाती है। जिन क्षेत्रों में गन्नों के ऊपरी भाग भारी होते हैं व जहाँ पर हवा का बहाव तेज होता है। यह प्रक्रिया उन क्षेत्रों के लिए आवश्यक होती है जिससे गन्नों को गिरने से बचाया जा सके। इसका कारण यह है कि गन्नों का गिरना कई समस्याओं को बढ़ावा देता है जो निम्न प्रकार हैं :

- गन्नों का टूटना और इस प्रकार से फसल की प्ररोह संख्या का नुकसान
- कुछ कीटों और सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा रोगों का पर्याक्रमण
- चूहे और कृन्तकों द्वारा क्षति
- *बड* अंकुरण के कारण गन्ने की गुणवत्ता कम हो जाती है।
- वायवीय जड़ों का गठन जो गन्ने की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है।

बांधना व लपेटने की प्रक्रिया

गन्ने की पत्तियों को पौधों से हटा दिया जाता है और सभी गन्नों के प्ररोह को एक बंडल में करके उसको पत्तियों से लपेट दिया जाता है। इस तरह पत्तियों को लपेटने से सभी पौधों में कार्बन डाईआक्साइड का वितरण सरल व सही रूप से पूरे क्षेत्र में हो जाता है। सूखी पत्तियों को पौधों से हटा दिया जाता है व हरी पत्तियों को गन्ने को एक गठ्ठर में बांध दिया जाता है। इस प्रकार से पत्तियों को गन्ने पर लपेटने के बाद गन्ने के कणों को बगल की पंक्ति में लगे हुये गन्ने से *'क्रास'* बनाकर बांध दिये जाते है। जब पूरे खेत में बांधने व लपेटने की प्रक्रिया समाप्त हो जाती है तब इन बंधे हुये गन्नों के समूह को मैदान के बाहर (दो विपरीत दिशाओं) से बाँस के खंरों का अधिक समर्थन दिया जाता है। इस प्रकार से गन्ने को बांधने की प्रक्रिया को अगस्त महीने में करना चाहिए, जब गन्ने की प्ररोह लगभग 2 मीटर ऊँचाई तक पहुँच जाए। फसल को ऊपर उठाने के दौरान हरी पत्तियों को एक साथ नहीं बांधा जाना चाहिए।

गन्ने को बांधने और लपेटने की प्रक्रिया का महत्व-

- गन्ना पौधों को यांत्रिक समर्थन प्रदान करना
- *लॉजिंग* को रोकना

इन प्रक्रियाओं को अन्य कृषक प्रक्रियाओं के साथ अपनाने से किसान अपने गन्ने की उपज व उत्पादन में वृद्धि ला सकते हैं।

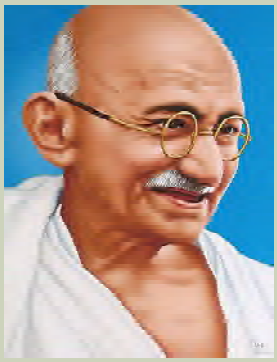

जिस भाषा में तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की हो, वह अवश्य ही पवित्र है, और उसके सामने कोई भाषा नहीं ठहर सकती।

-महात्मा गांधी

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

fcgkj e xUu dh c/kkb dk egRo ,o fof/k;k

ed'k dekj] ,-d- eYy] o:pk feJk] ch-Mh- flg ,o vf'ouh nUk ikBd
Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

गन्ना बिहार राज्य की एक प्रमुख नगदी फसल है जिस पर यहाँ का चीनी तथा गुड़ उद्योग पूर्ण रूप से आश्रित है। बिहार में गन्ना लगभग 2.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में प्रतिवर्ष उत्पादित किया जा रहा है। यहाँ की औसत उपज लगभग 62.5 टन/हेक्टेयर है। गन्ने की अच्छी पैदावार के लिये विभिन्न तरह की क्रियाओं और प्रबंधन का समायोजित होना सुनिश्चित है जिसमें विभिन्न तरह के रोगों एवं कीटों का प्रबन्धन महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उसी क्रम में गन्ने की बंधाई भी एक महत्वपूर्ण योगदान रखती है। गन्ने की अच्छी फसल होने के बाद भी यदि गन्ना गिर जाता है तो उपज में भारी नुकसान तथा गुणवत्ता में भारी कमी होती हैं एवं विभिन्न रोगों व कीटों का आपतन होता है। गन्ने की समय पर बंधाई करने से गन्ने की गुणवत्ता में अधिक प्रभाव पड़ता है।

खेत में गन्ना गिरने के कारण

- तेज वर्षा का होना
- वर्षा के बाद तेज हवा का बहना या तूफान/चक्रवात का आना
- गन्ने की उथली बुवाई करना
- गन्ने की लम्बाई का अधिक होना
- बहुत अधिक गन्ने का पतला होना
- अत्यधिक कीट बेधकों का प्रकोप होना
- बाढ़ आना
- सही तरीके से बंधाई का न होना
- मिट्टी की चढ़ाई न होना
- पत्ती लपेटक खरपतवारों का खेत में अधिक होना
- खेत में एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति के बीच में उचित दूरी का न होना
- शीतकालीन समय में खेत में अत्यधिक नमी का होना
- गन्ने के खेत से वर्षा के पानी का निकास का उचित प्रबंध न होना

गन्ना गिरने से बचाव के उपाय

- गन्ने के खेत में अत्यधिक उवर्रकों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- खेत में अत्याधिक खरपतवारों को नहीं रखना चाहिए एवं समय-समय पर उनकी सफाई करवानी चाहिए।
- वर्षा प्रारम्भ होने से पहले गन्ने में मिट्टी चढ़ाई का कार्य पूर्ण रूप से कर देना चाहिए।
- गन्ने की बुवाई के समय गहराई का विशेष ध्यान रखना चाहिए।
- गन्ने की अधिक लम्बाई होने पर उसकी दो जगह से बंधाई करना चाहिए।
- गन्ने की बंधाई का तरीका एवं समय उचित होना चाहिए।
- गन्ने को कीट बेधकों से बचाव करना चाहिए एवं समय-समय पर देखते रहना चाहिए।
- शीतकालीन गन्ने में अधिक सिंचाई नहीं करनी चाहिए एवं सिंचाई करते समय हवा चल रही हो तो सिंचाई रोक देनी चाहिए।
- गन्ना बुवाई के समय पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी उचित होनी चाहिए जिससे वर्षा का पानी एवं हवा आसानी से पास कर जाए।
- वर्षा, चक्रवात या तूफान आने के बाद यदि गन्ना गिर जाता है तो गन्ने के खेत से पानी निकालकर गन्ने को सीधा करके बंधाई कर दें एवं जड़ों पर फावड़े से मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।
- जिन प्रजातियों में गन्ना अगोला की तरफ मोटा एवं नीचे की तरफ पतला हो, उनकी दो जगह बंधाई करनी चाहिए।
- पानी निकास का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।
- बलुई वाली भूमि में गन्ने को *सिंगल क्लंप* विधि से बंधाई करनी चाहिए।

गन्ने की बंधाई की विधियाँ

गन्ने की बंधाई बिहार में मुख्यत: तीन विधियों से की जाती है जो निम्नलिखित हैं-

सिंगल क्लंप विधि

इसमें गन्ने के एक थान में उपस्थित सभी गन्ने को एक साथ उसी की पत्तियों से लपेट कर बांध दिया जाता है इसमें किसी

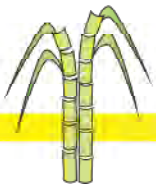

दूसरे थान का सहारा नहीं लिया जाता है (चित्र 1)।

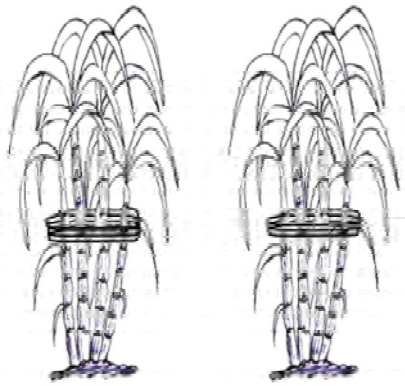

चित्र 1: *सिंगल क्लंप* विधि द्वारा गन्नों की बंधाई

चेन विधि

इस विधि में गन्ने की एक पंक्ति में उपस्थित सभी थानों को एक सीधी पंक्ति में बांधते हैं। इसमें गन्ने की पत्ती से बनी रस्सी का प्रयोग करते है इसमें दूसरी पंक्ति का सहारा नहीं लिया जाता है (चित्र 2)।

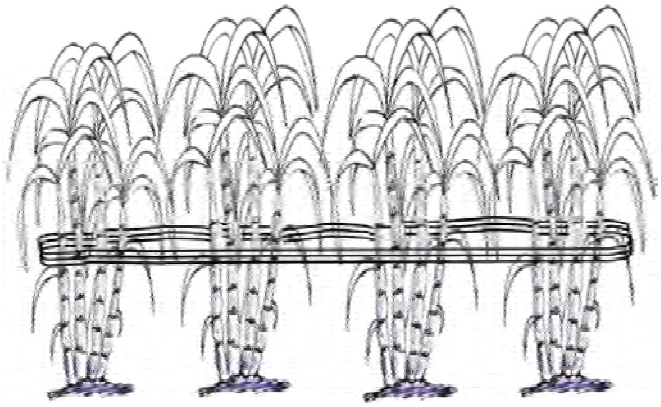

चित्र 2: *चेन* विधि द्वारा गन्नों की बंधाई

कैंची विधि

इसी विधि में गन्ने की दो पंक्तियों के एक-एक थान गन्ने को लेकर आपस में बांधते हैं बांधने के बाद इसकी आकृति कैंचीनुमा दिखती है जिसके कारण इसको कैंची विधि कहा जाता है। इसको बांधने के लिये गन्ने की पत्तियों से बनी रस्सी का प्रयोग किया जाता है। अधिकतर वर्षा के बाद गन्ना गिरने पर इस विधि का प्रयोग किया जाता है (चित्र 3)।

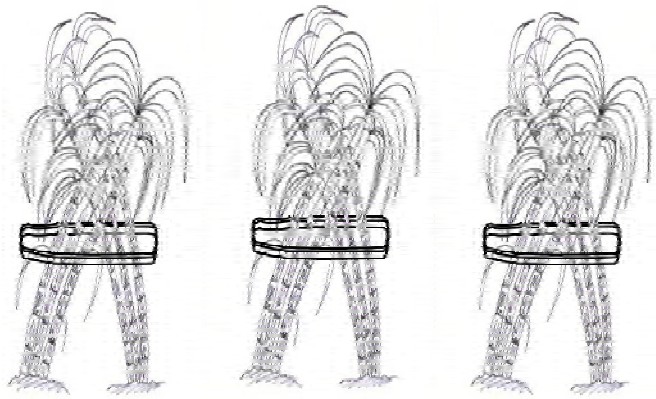

चित्र 3: कैंची विधि द्वारा गन्नों की बंधाई

देश के विभिन्न भागों के निवासियों के व्यवहार के लिए सर्वसुगम और व्यापक तथा एकता स्थापित करने के साधन के रूप में हिंदी का ज्ञान आवश्यक है।

-सी.पी. रामस्वामी अय्यर

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUu dh [krh e thoker % ,d tfod fodYi

jktho dekj] v'k flg] vej'k pæk] lh-ih- flg ,o jk/kk tu
Hkkdvui&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku lLFkku] y[kuÅ

गन्ने में पोषक तत्वों के जैविक स्रोत मात्र इन तत्वों की प्रतिपूर्ति ही नहीं करते वरन मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक वातावरण को अनुरक्षित करते हैं। विभिन्न प्रकार के जैविक विलयन जैसे जीवामृत, पंचगव्य, बीजांमृत आदि पौधों एवं पशुओं से उत्पादित पदार्थों से बनाए जाते हैं जो कि विभिन्न फसलों की वृद्धि एवं विकास की उन्नति में प्रभावी पाए गए हैं। जीवामृत बनाने हेतु 10 कि.ग्रा. गाय के गोबर, 10 ली. गाय के मूत्र, 2 कि.ग्रा. गुड़, 2 ली. नारियल का पानी, 2 कि.ग्रा. बेसन, तथा 1 कि.ग्रा. मिट्टी को पानी में मिलाया जाता है और इसे 7 दिन तक किण्वन के लिए रखा जाता है। किण्वन के बाद इस *फार्मूलेशन* को मृदा एवं पर्णीय अनुप्रयोग के साथ-साथ बीजोपचार हेतु भी प्रयोग किया जाता है। भारत में कपास के बाद गन्ना, जो कि *'सैकेरम' स्पेशीस* का जटिल संकर है, औद्योगिक महत्व की एक महत्वपूर्ण व्यवसायिक फसल है। कृषि सुधार तथा आर्थिक स्वावलंबता के औजार के रूप में गन्ना अद्वितीय है। वह इसलिए कि यह एक श्रमिक-परक फसल है तथा संगठित उद्योग के द्वारा भारत के हजारों श्रमिकों को आजीविका प्रदान करती है। वैश्विक स्तर पर गन्ने की खेती लगभग 3,495.6 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है जिसका उत्पादन 17,363 लाख टन तथा उत्पादकता 71.58 टन प्रति हेक्टेयर है। ब्राजील के बाद भारत गन्ने का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। देश में कृषि आधारित संगठित उद्योगों में यह सबसे बड़ी दूसरी फसल है। भारत में इसका क्षेत्रफल 52.8 लाख हेक्टेयर, उत्पादन 3,495.6 लाख टन तथा उत्पादकता 66.1 टन प्रति हेक्टेयर है। वर्तमान में फसल की उत्पादकता बढ़ाने हेतु गन्ने की खेती पूर्णतया रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों तथा वृद्धि नियामकों के उपयोग पर निर्भर है लेकिन मृदा के स्वास्थ्य और पर्यावरण पर इसका दुष्प्रभाव पड़ता है। इसलिए आधुनिक कृषि के चरम पर पहुँच चुके विपरीत प्रभावों के निदान हेतु आधुनिक कृषि की तुलना में खेत पर उपलब्ध संसाधनों के दक्षतापूर्वक उपयोग के द्वारा बाह्य लागतों के न्यूनतम उपयोग पर आधारित एक उचित पारिस्थितिकीय, जीवंत एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली की आवश्यकता है। जीवामृत एक दक्ष पादप वृद्धि उत्प्रेरक है जो कि फसल की जैविक दक्षता को बढ़ाता है। मृदा में जैविक प्रतिक्रियाओं को सक्रिय करने तथा रोग की घटनाओं से पौधों को बचाने हेतु इसका उपयोग किया जाता है। यह मृदा में जैविक गतिविधियों को प्रचुरता से प्रोत्साहित करता है तथा फसल के लिए पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाता है। जीवामृत फसल को मृदा एवं बीजजनित रोगकारकों से बचाने के साथ-साथ बीजों के अंकुरण को भी बढ़ाता है। मिर्च तथा टमाटर की फसल में उर्वरकों की संस्तुत मात्रा के अकेले अनुप्रयोग की तुलना में सूक्ष्मजीवों की संख्या तथा एन्जाइम गतिविधियों को बढ़ाने में जैविक विलयन का अनुप्रयोग प्रभावी पाया गया है। इससे प्रतीत होता है कि पोषक तत्वों की पुनरावृत्ति के साथ संबंद्ध विभिन्न जैव-रासायनिक प्रक्रियाएं मृदा एन्जाइम के द्वारा प्रचालित होती हैं जो कि मृदा सूक्ष्मजीवों तथा पादप मूल से व्युत्पत्ति होती हैं। इसलिए गन्ने की खेती में जीवामृत के अनुप्रयोग को एक जैविक *फार्मूलेशन* के रूप में प्रचारित करने की आवश्यकता है।

शैले-शैले न माणिक्यं मौत्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने।।

अर्थ- हर एक पर्वत पर माणिक नहीं होते, हर एक हाथी में (उसके गंडस्थल में) मोती नहीं मिलते साधु सर्वत्र नहीं होते और हर वन में चन्दन नहीं होता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

VªSDVj pkfyr xUuk cqvkbZ ;a= dk vkfFkZd fo'ys"k.k

lq[kchj flag ,oa vf[kys'k dqekj flag
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

आज का युवा किसान खेती में यांत्रिकीकरण की ओर अग्रसर है, जिससे कम समय एवं श्रम में अधिक कार्य करके लाभ अर्जित किया जा सकता है। लेकिन किसान किसी भी मशीन को खरीदने से हिचकता है क्योंकि इसमें प्रारम्भिक व्यय बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त, मशीन को खरीदने के बाद में आने वाले अन्य खर्चों को भी वह भली-भाँति नहीं समझ पाता।

कृषि उपकरणों व मशीन को खरीदते समय आर्थिक चयन करना बहुत जरूरी हैं क्योंकि खेतों में उपयोग होने वाले यंत्र एवं उपकरण अन्य औद्योगिक कार्य से एकदम भिन्न हैं। इसके अतिरिक्त, खेतों का आकार छोटा होता जा रहा है तथा भिन्न-भिन्न तरह के कार्य भौगोलिक दशा पर निर्भर करते हैं। ये यंत्र अधिकतर समय प्रयोग में भी नहीं आते हैं क्योंकि खेती का कार्य मौसम के अनुसार होता है। इसके अतिरिक्त, एक पावर इकाई से कई यंत्र चलाए जाते हैं तथा फसलों के कार्य को एक निश्चित समय के अन्दर करना होता है।

अतः किसी भी मशीन को खरीदने से पहले अपने खेतों की स्थिति, कुल जोत, वार्षिक उपयोग, किराये पर चलाए जा सकने की सम्भावना आदि देखते हुये उसका आर्थिक अवलोकन कर लेना चाहिए।

किसानों को मशीनीकरण के द्वारा लाभ है या नहीं, यह बात जानना बहुत आवश्यक है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का आर्थिक विश्लेषण किया जा रहा है। जो निम्नवत है-

स्थिर व्यय

- मूल्य ह्रास - फार्म मशीनरी पर आने वाला यह एक बड़ा खर्च है क्योंकि समय बीतने के साथ मशीन की कीमत कम होती जाती है चाहे उसका प्रयोग किया जाए या नहीं।
- लगी पूँजी पर ब्याज
- बीमा, कर आदि
- यंत्रशाला - यंत्रशाला बनाने का मुख्य उद्देश्य मशीनों की आयु को बढ़ाना नहीं बल्कि मशीनरी को पुनः बेचने के लिए मूल्य को अधिक करना है।

अस्थिर व्यय या प्रचालन व्यय

- मरम्मत एवं रख-रखाव
- ईंधन व्यय
- स्नेहन व्यय
- मजदूरी

ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का आर्थिक विश्लेषण करने के लिए कुछ और बातों का भी जानना आवश्यक है जिसका विवरण नीचे दिया गया है :

Ø-	fooj.k	VªSDVj	xUuk cqvkbZ ;a=
1.	क्रय मूल्य	₹ 6,00,000	₹ 1,50,000
2.	आयु (वर्षों में)	10	6
3.	निस्तारण मूल्य	10%	10%
4.	ब्याज दर (प्रतिवर्ष)	10%	10%
5.	प्रतिवर्ष कार्य (घंटों में)	1000	300
6.	बीमा, कर आदि	औसतन क्रय मूल्य का 2%	औसत क्रय मूल्य का 2%
7.	यंत्रशाला खर्च	क्रय मूल्य का 1.5%	क्रय मूल्य का 1.5%
8.	ईंधन की खपत	2.5 लीटर प्रति घंटा	–
9.	ईंधन की कीमत (प्रति लीटर)	₹ 68	–
10.	स्नेहन व्यय (प्रति घंटा)	ईंधन की खपत का 3%	
11.	स्नेहन की कीमत (प्रति लीटर)	₹ 240	
12.	मरम्मत एवं रख–रखाव	क्रय मूल्य का 10%	
13.	मजदूरी समयानुसार	₹ 30 प्रति घंटा	4 श्रमिकों की जरूरत
14.	किसी मान्यता प्राप्त संस्था द्वारा प्रमाणित हो।		

मशीन को कब तक प्रयोग करना या बदलना चाहिए।

- मरम्मत खर्च अधिक आने लगे तो मशीन को बदल देना चाहिए।
- दुर्घटना में मशीन क्षतिग्रस्त हो गई हो और मरम्मत बहुत अधिक हो।
- मशीन कार्य क्षमता ठीक नहीं लगे तथा उसी कार्य को करने के लिए अधिक क्षमता की मशीन उपलब्ध हो।
- नई मशीन या फार्म विधि में विभिन्नता के कारण पुरानी मशीन ठीक न हो।
- नई मशीन की कार्य क्षमता बहुत अधिक हो।
- पुरानी मशीन को चलाने में आने वाला खर्च नई मशीन लेने पर अधिक न लग रहा हो।

ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का व्यय निकालने हेतु उदाहरण

Øekad	en	VªDVj	xUuk cqvkbZ ;a=
1.	स्थिर व्यय		
क.	मूल्य ह्रास = $\frac{\text{क्रय मूल्य – निस्तारण मूल्य}}{\text{आयु वर्षों में}}$	₹ 54,000	₹ 22,500
ख.	पूँजी पर ब्याज = $\frac{\text{(क्रय मूल्य+निस्तारण मूल्य)xब्याज/वर्ष}}{2}$	₹ 33,000	₹ 8,250
ग.	बीमा, कर आदि = औसतन क्रय मूल्य x 0.02	₹ 1,320	₹ 550
घ.	यंत्रशाला = औसतन क्रय मूल्य x 0.02	₹ 1,320	₹ 550
ङ.	वार्षिक स्थिर व्यय	₹ 89,640	₹ 31,850
च.	स्थिर व्यय प्रति घंटा	₹ 89.64	₹ 106.16
2.	अस्थिर व्यय		
क.	मरम्मत एवं रखरखाव = $\frac{\text{क्रय मूल्य x 0.10}}{\text{प्रतिवर्ष कार्य घंटों में}}$ एक घंटे में	₹ 60	₹ 50
ख.	ईधन प्रति घंटा	₹ 170	–
ग.	स्नेहन प्रति घंटा	₹ 18	–
घ.	मजदूरी प्रति घंटा	₹ 30	₹ 120
ङ.	अस्थिर व्यय	₹ 278	₹ 170
कुल व्यय प्रति घंटा = स्थिर व्यय + अस्थिर व्यय		₹ 367.64	₹ 276.16
ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र पर कुल व्यय प्रति घंटा		₹ 643.8	
व्यय प्रति हे. = व्यय प्रति घंटा/कार्य क्षमता, हे. प्रति घंटा		₹ 3,219	

ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का प्रयोग

किसी भी मशीन पर व्यय करने से पहले यह भी जानना आवश्यक है कि यह कितनी जमीन के लिए उपयुक्त है या कितने घंटे चलाने के बाद इससे लाभ मिल सकता है। इस तथ्य को जानने के लिए मशीन का *ब्रेक इवेन* बिन्दु जानना जरूरी है।

$$\text{ब्रेक इवेन बिन्दु} = \frac{\text{कुल स्थिर व्यय वर्ष में (₹)}}{\text{किराया दर (₹/घंटा)-अस्थिर व्यय (₹/घंटा)}}$$

= 121490 / 800 - 448

= 345.1 घंटा

यदि ट्रैक्टर चालित गन्ना बुआई यंत्र का प्रयोग *ब्रेक इवेन* बिन्दु से कम है तो इसे किराये पर अवश्य चलाना चाहिए।

किराया घंटा = *ब्रेक इवेन* बिन्दु - अपने फार्म पर लगा समय।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUuk cqokbZ ;a= & tu'kfä dk iz;ksx de

lat; dqekj[1] vfer dqekj[2] ,oa ekuoUnz flag[3]

[1]d`f"k foKku dsUnz] ckxir] [2]d`f"k foKku dsUnz] f'koiqjh] e/; izns'k] [3]d`f"k foKku dsUnz] xkft;kckn

कृषि में शक्ति साधनों का प्रयोग अत्यंत परिवर्तनशील परिस्थितियों से गुजर रहा है। विभिन्न प्रकार की कृषि इकाईयां शक्ति साधन के प्रयोग पर अपना प्रभाव डालती हैं, किंतु हमारे देश के परिपेक्ष मे जनशक्ति का प्रयोग प्रत्येक किसान के लिए आवश्यक है। पशु शक्ति का उपयोग कृषि कार्यों में दिनों-दिन कम हो रहा है, जिसके कारण इंजन, ट्रैक्टर, पावर टिलर तथा मोटरों का प्रयोग बढ़ रहा है, लेकिन ऐसा कहना उपयुक्त होगा कि देश में सभी शक्ति साधनों का प्रयोग होता रहेगा। कृषि यंत्रों के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए यंत्रीकरण सम्बन्धित एक लम्बी योजना तैयार करके उसे लागू करना होगा। उपलब्ध शक्ति तथा सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए छोटे कृषकों को सही कृषि यंत्रों के चुनाव पर अधिक बल देना होगा। देश के अधिकांश कृषक लघु कृषकों की श्रेणी में आते हैं, जो कि अधिक शक्ति वाले एवं कीमती ट्रैक्टरों को नहीं खरीद सकते हैं। यदि बीज की बुवाई और रोपाई वैज्ञानिक विधि से की जाये तो उत्पादन में औसतन 15 प्रतिशत की वृद्धि होती है। मशीनीकरण तथा ऊर्जा के प्रयोग से उत्पादन का सीधा सम्बन्ध है। भारतीय खेती में लगभग 8.0 करोड़ पशु शक्ति प्रयुक्त हैं तथा 25 करोड़ खेतिहर मजदूर हैं। फिर भी लघु एवं सीमान्त कृषकों के लिए यह शक्ति पूरी नहीं है। यदि प्रति हेक्टेयर उपलब्ध शक्ति को देखा जाये तो विकसित देशों की अपेक्षा अभी भी हम काफी पीछे हैं। आधुनिक यंत्रों के प्रयोग से अधिकांश भूमि में प्रतिवर्ष कम से कम दो फसलें लेना सम्भव हो गया है। इसके साथ-साथ उन्नत मशीनों, बीज एवं खाद को उचित गहराई और दूरी पर डाल करके कृषक उत्पादन बढ़ाने में समर्थ हो सकते हैं। प्रसार एवं प्रशिक्षण की कमी से कृषकों में कृषि यंत्रों के प्रति ज्ञान का अभाव, समय पर बैंकों से ऋण प्राप्त न होना तथा समय पर अच्छे कृषि यंत्रों का उपलब्ध न होना, कुछ ऐसे कारण हैं जिनसे उन्नत कृषि यंत्रों का पूरा लाभ कृषकों को नहीं मिल पा रहा है। उन्नत कृषि मशीनों की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए अधिकांश कृषि यन्त्र निर्माता कृषकों को अच्छे ट्रैक्टर एवं कृषि यंत्र उपलब्ध कराने में सहायक हो रहे हैं। कृषकों को आधुनिक कृषि यंत्र उपलब्ध कराने तथा कृषि यंत्रों की मरम्मत एवं देखभाल की सुविधा देने हेतु पूरे देश में लगभग 10 लाख ग्रामीण कारीगर उपलब्ध हैं। इन ग्रामीण कारीगरों को मरम्मत की आधुनिकतम सुविधा उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। कृषि की उत्पादकता उन्नत तथा विकसित यंत्रों के उपयोग से अधिक की जा सकती है जो कि शक्ति स्रोत, अच्छे कार्य, कार्यकर्ता के थकान में कमी को ध्यान में रखकर सम्भव हो सकता है। बहुत से सरकारी तथा निजी कम्पनी एवं विश्वविद्यालय लगातार कृषि यंत्रों में सुधार का कार्य कर रहे हैं जो कि मानव थकान को कम तथा भविष्य में कृषि कार्य को पूर्णतः यांत्रिक तरीके से करने के लिये प्रतिबद्ध है। जैसा कि सर्वविदित है कि कृषि के कार्य को नई विधियों द्वारा अथवा यांत्रिक विधियों के उपयोग से कृषि कार्यों को आवश्यकतानुसार ठीक समय पर विकसित यंत्रों तथा मानव श्रमिक, पशु एवं यांत्रिक शक्ति द्वारा किया जा सकता है। विकसित यंत्र द्वारा कम समय, धन, श्रम तथा ऊर्जा का उपयोग कर प्रभावी तरीके से कम थकान तथा बिना किसी वातावरणीय नुकसान के कृषि कार्य को किया जा सकता है। देश की कुल भूमि का क्षेत्रफल 3280 लाख हेक्टेयर है जिसमें 1420 लाख हेक्टेयर कृषि के लिए उपलब्ध है। कुल बुवाई का क्षेत्रफल आज बढ़कर 1890 लाख हेक्टेयर हो गया है, यद्यपि किसान भाई उन्नत बीज, उर्वरक, फसल सुरक्षा के तरीके, सिंचाई तथा ऊर्जा का उपयोग करके फसल उत्पादन को बढ़ा रहे हैं परन्तु अभी भी कृषि यंत्रों का प्रयोग प्रायः जानकारी के अभाव में कम ही कर रहे हैं। नए तथा विकसित यंत्रों का उपयोग करके उत्पादकता को 12 से 34 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है। हमारे देश मे प्रायः किसान भाईयों के खेत छोटे-छोटे होते हैं जिनको प्रायः बहुत छोटे (1 हेक्टेयर से कम), छोटे (1 से 2 हेक्टेयर), छोटे तथा बीच के (2 से 4 हेक्टेयर), बीच के (4 से 10 हेक्टेयर) तथा बड़े (10 हेक्टेयर से अधिक) की श्रेणियों में विभाजित किया गया है जिनमें छोटे किसान भाईयों की संख्या सर्वाधिक है। खेतों के आकार के छोटे होने की वजह से वे बड़ी-बड़ी तथा अधिक कीमत वाली मशीनें खरीदने तथा उनका कृषि में उपयोग करने में असमर्थ रहते हैं। फसल सघनता में 5 से 22 प्रतिशत तथा कुल आय में 29 से 49 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है। कृषि यंत्रों का उपयोग, प्रक्षेत्र शक्ति स्रोत पर निर्भर करता है। बीज, उर्वरक तथा रसायन बहुत ही खर्चीले तरीके हैं जिनका उपयोग करके उपज में वृद्धि की जाती है। इस बात को ध्यान में रखते हुये यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि सुधरे तथा विकसित कृषि यन्त्रों का प्रयोग किया जाये जो कि बीजों की बुवाई की दर पर

आवश्यकतानुसार नियंत्रण तथा खेत में बुवाई समय से करें। मानव तथा शक्ति स्रोत पर निर्भरता को कम करने के लिये यह जरूरी है कि कृषि कार्यों को सम्पन्न करने के लिये आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग किया जाये। वर्ष 2000-01 में पशु शक्ति में 16.38 प्रतिशत तक कमी आयी तथा यांत्रिक शक्ति में 83.62 प्रतिशत की वृद्धि, वर्ष 1971-72 की तुलना में हुई है। प्रति हेक्टेयर कृषि श्रमिकों की संख्या में 0.82-1.44 प्रतिशत की वृद्धि हुई है लेकिन फिर भी प्रति हेक्टेयर कृषि श्रमिकों की प्रति घंटे पिछले वर्षों में विभिन्न फसलों के लिये कमी पाई गयी है। यह अनुमानित किया गया है कि कुल ऊर्जा का 66-80 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में घरों की देखभाल तथा 16-25 प्रतिशत कृषि उत्पादन में उपयोग होता हैं। ग्रामीण विद्युत विभाग कुल विद्युत आपूर्ति का लगभग 85 प्रतिशत गाँवों को उपलब्ध कराता है। कृषि में यंत्रीकरण का भाग लगभग 9 से 10 प्रतिशत तक है। यह सर्वविदित है कि भारतीय कृषि, भारतीय अर्थव्यवस्था की मेरूदण्ड है जो कि कुल उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत है। यह कमजोर लोगों को तथा कम्पनियों को शहरी ग्रामीण क्षेत्रों में कच्चे पदार्थ प्रदान करता है। पिछले पाँच दशकों से कृषि यंत्रीकरण बहुत ही अधिक हुआ है तथा आज के समय में लगभग 126 लाख ट्रैक्टर, 9650 कम्बाईन, 38.8 लाख थ्रेशर तथा 168 लाख सिंचाई के पम्प हैं। कृषि यन्त्रीकरण प्रायः कई कृषि कार्यों जैसे जुताई, बुवाई, फसल सुरक्षा तथा गहाई जो कि लगभग 41 प्रतिशत, 30 प्रतिशत, 35 प्रतिशत तक प्रत्येक के लिए हैं। इन बातों को ध्यान में रखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उन्नत कृषि यंत्रों को ग्रामीण क्षेत्रों मे कृषि कार्यों के लिये उपयोग किया जाए, जिससे उत्पादकता को अधिक तथा फसलों के उत्पादन में लगने वाले आर्थिक बजट को कम किया जाये। सरकार द्वारा छोटे और मध्यम श्रेणी के कृषि यंत्र निर्माताओं को काफी सुविधाएं दी जा रही हैं। कई निर्माता कृषकों के लिए प्रशिक्षण का भी प्रावधान रखते हैं, जिससे कृषकों को कृषि यंत्रों के प्रयोग, देखभाल और मरम्मत का समुचित ज्ञान हो सके। इस सम्बन्ध में यदि किसान भाई आगे दी गयीं मशीनों का प्रयोग करें तो समय, धन तथा श्रम के साथ-साथ अच्छी उपज प्राप्त कर सकते हैं।

प्रत्येक फसल के लिये बीज बोने का कार्य महत्वपूर्ण होता है। फसल की बुवाई के पूर्व खेत को फसल बोने के लिये तैयार किया जाता है जिसमें किसान भाई सबसे अधिक समय लगाकर परिश्रम करते हैं परन्तु इतना करने के पश्चात भी फसलों को यदि उचित प्रकार से नहीं बोया गया तो बीज का अंकुरण ठीक प्रकार से नहीं होगा। खेत में फसलों के पौधे से पौधे की दूरी तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी यदि उचित नहीं होती है तो फसल के उत्पादन पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। यदि पौधों को पर्याप्त स्थान नहीं मिलता है तो पौधा ठीक प्रकार से नहीं बढ़ पाता है। इसी प्रकार यदि पौधे का अंकुरण ठीक गहराई पर नहीं होता है तो उनका भी प्रभाव पौधों के बढ़ने तथा फसल की उपज पर पड़ता है। यदि किसान ऊपर लिखी हुये बातों को ध्यान में रखते हुये बीजों की बुवाई के लिये उन्नत कृषि यन्त्रों का उपयोग करें तो फसल उत्पादन में वृद्धि सम्भव हो सकती है। बीज तथा उर्वरक को खेत में बोने के लिये नीचे दिये गये उन्नत कृषि यंत्रों का प्रयोग किया जाता है।

गन्ना हमारे देश की मुख्य नगदी फसल है। भारत गन्ना उत्पादन में विश्व में द्वितीय स्थान पर है जबकि ब्राजील का स्थान पहला है। देश में गन्ने का औसत उत्पादन 73 टन प्रति हेक्टेयर है। गन्ना उत्पादन में उत्तर प्रदेश की 50 प्रतिशत से अधिक भूमिका है तथा इसका उत्पादन पश्चिमी उत्तर प्रदेश में काफी क्षेत्र में किया जाता है।

साधारण विधि द्वारा गन्ने की बुवाई करने के लिए 10-12 से.मी. की कूँड देशी हल की सहायता से बनायी जाती है और इन कूँड़ों में पहले हाथ से खाद डाली जाती है तत्पश्चात् गन्ने की पोरियां पट डाल दी जाती हैं। इनको मिट्टी से ढकने के लिए इनके बगल में अतिरिक्त कूँड देशी हल की सहायता से बना दी जाती है। फिर खेत में पटेला चलाया जाता है जिससे सभी कूँड मिट्टी से भर जाएं। इस विधि द्वारा गन्ने की बुवाई करने में अधिक समय तथा श्रम लगता है। जिसमें श्रमिक व समय दोनों की लागत अधिक होती है। गन्ने की बुवाई के समय कूँड निकालना, गन्ने को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटना, कटे हुए गन्ने को खेत तक ले जाना व उन पर दवा का छिड़काव करना, तत्पश्चात कूँड में रखे गन्नों को मिट्टी से ढककर दबाना, जैसे कठिन कार्य करने होते हैं। इन सभी कार्यों को पूरा करने के लए 50-60 श्रमिक प्रतिदिन की आवश्यकता होती है। इन सभी समस्याओं को कम करने के लिए एक यंत्र का निर्माण किया गया है जिसे गन्ना बुवाई यंत्र के नाम से जाना जाता है जो कि गन्ना बुवाई में होने वाले कठिन कार्यों को आसानी से कर सकता है।

गन्ना बुवाई यंत्र कूँड़ों में गन्ना बोने का कार्य करता है जो कि किसी भी 50 अथवा अधिक अश्वशक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जाता है। इसे प्रायः ट्रैक्टर के हाइड्रॉलिक के साथ लगाकर चलाया जाता है। इसमें लोहे के फ्रेम पर कूँड बनाने वाले फाल अथवा रिजर लगे होते हैं जिनको 60 से 90 से.मी. की दूरी पर लगाया जा सकता है। ये फाल 10 से 20 से.मी. गहरी नालियां बनाते हैं। फ्रेम पर गन्ने के बीज के लिए खुले बक्से लगे होते हैं जिसमें विशेष लम्बाई की पोरियां डाली जाती हैं। इस यंत्र के फ्रेम के दोनों ओर लोहे के पहिये (रबर के पहिये) लगे होते हैं। एक पहिया चेन-गरारी की सहायता से बीज डालने वाले रोटर तथा खाद मापने वाली प्रणाली को चलाता है इसकी सहायता से उचित दर से गन्ने, बीज, रसायन एवं खाद खेत में डाले जाते हैं। इस यंत्र की विशेषता यह हैं कि गन्ने की कटाई एवं कूँडों में बुवाई करने के साथ-साथ यह यंत्र उर्वरक व रासायनिक दवा का छिड़काव भी करता है। ट्रैक्टर चालित गन्ना बुवाई यंत्र में गन्ने की बुवाई तथा खाद और कीटनाशी दवाओं के छिड़काव की एक साथ व्यवस्था भी होती है। ट्रैक्टर के अग्र भाग में एक बड़ी टंकी को भी लगाया जाता है। इस टंकी मे मृदा शोधन रसायन जैसे क्लोरोपाइरोफॉस रसायन भरा जाता है। यह टंकी भी पाईप के माध्यम से एक अन्य नोजल से जुड़ी रहती है। यह नोजल मृदा शोधन रसायन का छिड़काव गन्ने की बुवाई वाले कूँड़ों में करता है। जिससे गन्ने का बचाव दीमक और दूसरे प्रकार के कीटों से हो सके। उर्वरक के छिड़काव हेतु एक टैंक यंत्र में संलग्न है जो द्रव रूप में दवा का छिड़काव गन्नों पर करता जाता है। बुवाई एवं रसायनों के छिड़काव के उपरान्त यंत्र में ही लगे रोलर/पटेला गन्ने को ढककर दबा देते हैं। गन्ना बोने के लिए श्रमिक को इस यंत्र पर लगी सीट पर बैठकर बॉक्स में गन्ना डालना होता है। गन्ना स्वतः ही नीचे गिरता है एवं *कटिंग* प्रणाली से छोटे-छोटे टुकड़ों में कटकर कूँड में गिरता जाता है। इस यंत्र में गन्ने की पोरियों को बराबर लम्बाई की काटने के लिए *गियर सिस्टम* द्वारा चालित फलक लगे होते हैं, जिनको ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. द्वारा चलाया जाता है। इस यंत्र द्वारा गन्ने की पोरियां कतारों में उचित दूरी तथा गहराई पर बोयी जाती हैं। इस यंत्र द्वारा कतारों में 70 से 90 से.मी. का अन्तराल रखते हुए गन्ने की बुवाई की जाती है। इसकी क्षमता 0.3 हेक्टेयर प्रति घण्टा है तथा प्रयुक्त बीज दर 60 कुन्टल प्रति हेक्टेयर है। इस यंत्र का प्रयोग करके किसान भाई श्रम शक्ति में 60 प्रतिशत एवं समय में 40-45 प्रतिशत तक बचत कर सकते हैं। इस यंत्र का प्रयोग प्रायः सभी प्रकार की भूमि में प्रयोग किया जा सकता है। इस यंत्र के प्रयोग से कम समय तथा कम परिश्रम से अधिक क्षेत्रफल के खेत में गन्ने की बुवाई की जा सकती है।

परिचालन विधि

गन्ना बुवाई यंत्र द्वारा गन्ने की बुवाई करने के लिए यंत्र को ट्रैक्टर के *हाइड्रॉलिक लिंक* के साथ जोड़कर चलाया जाता है। बुवाई के लिए गन्नों को बॉक्स में रखकर तीन व्यक्तियों की सहायता से गन्ने को प्लांटर के बीज डालने वाले छेद में डाला

गन्ना बुवाई यंत्र की विशिष्टताएं

Ø- I-	vo;o	fof'k"Vrk,a
1	आवश्यक शक्ति, किलो वाट	26 (ट्रैक्टर)
2	लम्बाई (मि.मी.)	2200
3	चौड़ाई (मि.मी.)	1460
4	ऊँचाई (मि.मी.)	2050
5	*फ्रेम*	मृदु इस्पात के वर्गाकार आकार का 47×47×3 मि.मी.
6	*फरो ओपनर* की संख्या	03
7	गन्ने की लम्बाई नियन्त्रक	37 से.मी. लम्बाई के उत्तल आकार का घूमने योग्य ब्लेड युक्त
8	बीज/उर्वरक नियन्त्रक	बाहय फ्लूटेड रोलरों तथा 8 फ्लूट्स युक्त
9	रसायन छिड़काव यन्त्र	150 मि.मी. के पी.वी.सी. पाईप का 2,000 मि.मी. लम्बा जो कि टंकी के रूप में उपयोग होता है तथा पीतल के 3 नोजल युक्त रसायन का छिड़काव करने लायक
10	भार (कि.ग्रा.)	347
11	मूल्य (₹)	85,000

जाता है जिसमें जाने के पश्चात् गन्ना स्वतः ही बराबर लम्बाई का कटता रहता है जिसको काटने वाले रोलर को ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. शाट द्वारा चलाया जाता है। कटा हुआ गन्ना स्वतः ही कूँड में गिरता रहता है तथा *फर्टिलाइजर बाक्स* से उर्वरक भी स्वतः ही गिरता है। इस बुवाई यंत्र में चालक के पीछे दवाई छिड़काव हेतु एक छोटी टंकी लगी होती है जिसमें गन्ने के बीज शोधन रसायन भरा होता है। इस टंकी को पाइप की सहायता से नोजल से जोड़ा जाता है। यह नोजल गन्ने के टुकड़ों पर दवाई का छिड़काव कर बीज शोधन का कार्य करता है। ट्रैक्टर के अग्र भाग में एक बड़ी टंकी को भी लगाया जाता है। इस टंकी में मृदा शोधन रसायन जैसे क्लोरोफाइरोफॉस रसायन भरा जाता है। यह टंकी भी पाइप के माध्यम से एक अन्य नोजल से जुड़ी रहती है। यह नोजल मृदा शोधन रसायन का छिड़काव गन्ने की बुवाई वाले कूँड़ों में करता है, जिससे दीमक और दूसरे प्रकार के कीटों से सुरक्षा हो सके। बुवाई यंत्र के पीछे लगे *स्क्रेपर* द्वारा कूँडों में मिट्टी भी चढ़ जाती है। प्लांटर में लगे *मार्कर* को हमेशा खुला रहने देना चाहिए जिससे वे बिना बुवाई वाले मिट्टी में लाइन बनाता चले, जिससे दूसरी बार बुवाई करते समय कतारों के बीच की दूरी को एक समान रखा जा सके।

टूट-फूट एवं रख-रखाव

गन्ना बुवाई यंत्र के सभी नट बोल्ट ठीक कसे होने चाहिए यदि ये ढीले हों तो *टाइट* कर लेना चाहिए। यदि प्लांटर के फाल घिस गये हों तो उसे बदल देना चाहिए। गन्ना काटने वाले रोलर के ब्लेड सीधे तथा पैने होने चाहिए। यदि रोलर के ब्लेड ठीक काम न करें तो उन्हें बदल देना चाहिए। *फर्टिलाइजर बॉक्स* के भीतर की प्रणाली को साफ रखना चाहिए। मशीन के सभी भागों को चलाने से पहले ठीक करना चाहिए जिससे कार्य ठीक प्रकार से हो सके।

सावधानियाँ

कार्य करने के पश्चात् यंत्र को हमेशा साफ कर देना चाहिए। गन्ने की बुवाई करते समय ट्रैक्टर की गति एक जैसी रखनी चाहिए तथा मशीन के बीज डालने वाले छेद में गन्ना लगातार डालना चाहिए जिससे बुवाई में दूरी अधिक न हो। मशीन चलते समय बीज डालने वालों को नीचे नहीं उतरना चाहिए अन्यथा दुर्घटना होने की संभावना रहती है। खेत में मोड़ पर ट्रैक्टर घुमाते समय मशीन को *हाइड्रॉलिक* की सहायता से ऊपर उठा लेना चाहिए। गन्ना बुवाई यंत्र के *मार्कर* के द्वारा बनाये गये चिन्ह पर ही दूसरी तरफ से ट्रैक्टर का पहिया चलना चाहिए जिससे कूँड़ बराबर दूरी पर रहें और अधिक से अधिक खेत में बुवाई हो सके।

आजकल गन्ने की बुवाई गड्ढों में भी की जा रही है जिसको बनाने के लिए ट्रैक्टर चलित *पिट डिगर* प्रयोग किया जाता है जो कि लगभग 90 से.मी. व्यास तथा 45 से.मी. गहरा गड्ढा बनाता है। इस विधि द्वारा गन्ने की बुवाई करने के लिए प्रति गड्ढों के बीच 60 से.मी. की दूरी होनी चाहिए। गड्ढों में बुवाई करने के लिए लगभग गन्ने के 35-40 पोरियां एक ही गड्ढे में क्षैतिज अवस्था में डालना पड़ता है। एक गड्ढे से दूसरे गड्ढे की सिंचाई करने के लिए प्रत्येक गड्ढों को नालियों द्वारा जोड़ देना चाहिए जिससे पानी की आवश्यकता कम होती है। नालियों को गड्ढों के नीचे वाले भाग में जोडना चाहिए जिससे गड्ढों में पानी न रूकने पाये। सभी गड्ढों में लगभग गड्ढों की आधी मिट्टी डालनी चाहिए जिससे गन्ने की पोंरियां ढक जाएं। इस विधि का प्रयोग प्रायः उन क्षेत्रों में किया जाता है जहां पानी की सतह ऊपर हो। गोल गड्ढा विधि में गन्ना बोने से 3-4 पेड़ी बिना उत्पादन की कमी के प्राप्त किया जा सकता है, जिससे गन्ने की मुख्य फसल के उत्पादन तथा पेड़ी की उत्पादन को जोड़कर कुल उत्पादन की लागत में कमी की जा सकती है। गोल गड्ढा विधि द्वारा गन्ने की बुवाई करने से सिंचाई के लिए कम पानी की आवश्यकता होती है।

गोल गड्ढे विधि द्वारा गन्ने का उत्पादन

भारत में औसत गन्ने का उत्पादन लगभग 71 टन प्रति हेक्टेयर है जो कि गन्ने की उत्पादन क्षमता 474 टन प्रति हेक्टेयर के सापेक्ष बहुत ही कम है। अधिक उर्वरक का उपयोग करके उत्पाद को बढ़ाना उपयुक्त है, परन्तु यह गन्ना उत्पादकों के लिये पहुँच से बाहर है क्योंकि इसकी कीमत अधिक होती है। अधिकांशतः किसानों की जोत छोटे क्षेत्र की होती हैं। गन्ने के उत्पादन को बढ़ाने के लिये बिना देखभाल वाले कार्य ही दूसरे विकल्प है। गन्ने की कटाई के समय लगभग 60: गन्ना कल्ले युक्त होता है जबकी कई जगहों पर गन्ने की संख्या इकलशौर्ट से बनती है। यह अधिक गन्ना उत्पादन का एक मुख्य कारण है। यदि गन्ने की संख्या बढ़ाई जाए तथा किल्लों की संख्या कम की जाए तो अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

गोल गड्ढा द्वारा गन्ने की बुवाई का मशीनीकरण

- मेड़ों तथा कूँड़ में गन्ने को साधारण विधि में बुवाई करने की तुलना में 90 से.मी. व्यास का गड्ढा जो कि 45 से.मी. होता है, ट्रैक्टर पर लगने वाले *पिट डिगर* द्वारा तैयार किया जाता है।
- समतल खेत पर 1.20×1.20 मी. के आकार के बराबर वर्गाकार निशान लगाकर तथा खेत के चारों तरफ से 60 से.मी. का स्थान खेत में छोड़ देना चाहिये।

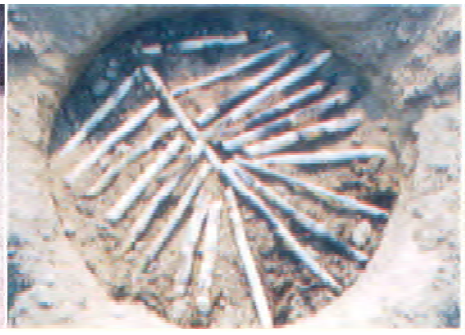

- प्रत्येक वर्गाकार खेत मे केन्द्र पर *पिट डिगर* द्वारा अथवा हाथ से गढ्ढा बनाना चाहिये। प्रति हेक्टेयर गड्ढों की संख्या लगभग 6,750 होती है।
- प्रत्येक गड्ढों में 5 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 45 ग्राम डाई अमोनियम फास्फेट तथा 45 ग्राम यूरिया के साथ-साथ गढ्ढों से निकली कुछ मिट्टी गन्ने की पोरियां को बिछाने से पहले डालना चाहिए।
- मृदा परीक्षण के अनुसार फास्फोरस, पोटाश तथा दूसरे पोषक तत्व प्रयोग करने चाहिए।
- 100 ग्राम इमीसन (6%) अथवा 10 ग्राम बाविस्टीन को 22 पोरियों अथवा 35-40 पोरियों पर छिड़काव प्रति गढ्ढों में समतल अथवा गोलाकार आकृति में बिछाना चाहिए।
- 5 लीटर क्लोरोपाइसेफास (20% ईसी) अथवा 5 लीटर एच. सी.एच. (20% ईसी) का उपयोग गन्ने की बुआई करते समय प्रति हेक्टेयर की दर से करना चाहिये, जिससे दीमक के प्रकोप को नष्ट किया जा सके।
- यदि मृदा में आवश्यक नमी न हो तो हल्की सिंचाई गड्ढों में पोरियों को बिछाने के बाद करना चाहिये तथा ऊपर की पपड़ी को तोड़ने के लिए मृदा में खुदाई करनी चाहिये जिससे ठीक से अंकुरण हो सके।
- पानी के कम उपयोग के लिये प्रत्येक गडढों को एक दूसरे के साथ नालियां बनाकर जोड़ना चाहिए।
- गन्ने की पोरियों को गड्ढों में बिछाने के बाद पानी न रूकने के लिये प्रत्येक गड्ढे के निचले भाग पर नालियां बनानी चाहिये, जिससे गड्ढों में पानी न रूक सके।
- मार्च या अप्रैल में जब गन्ने के पौधों की ऊँचाई 22 से.मी. हो जाती हैं तो गड्ढों से निकली हुई मिट्टी में 25 ग्राम यूरिया मिलाकर गड्ढों को भर देना चाहिये तथा बची हुई मिट्टी में 25 ग्राम यूरिया, 4.5 ग्राम फोरेट, 10 ग्राम बोयूरोन 3 ग्राम प्रति गड्ढा जून के अंत में डालना चाहिये।
- साधारण विधि में बताई गई विधि द्वारा खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए।
- 2-3 बार *प्रोपिंग* करना चाहिए। किल्लों की देखभाल अगस्त, सितम्बर तथा अक्टूबर के महीने में छिलकों को उतार कर करना चाहिये।
- वर्षा ऋतु के पहले खेत की 5-6 बार सिंचाई करनी चाहिये। तदुपरांत आवश्यकतानुसार सिंचाई की जाती है।
- जुलाई के महीने में मिट्टी भरकर खेत को ऊँचा करना चाहिए। जिससे वर्षा के कारण गड्ढों में पानी का जलभराव न हो सके।
- फसल को भूमि की सतह से काटना चाहिए।
- फसल की कटाई के तुरन्त बाद 45 ग्राम डाई अमोनियम फास्फेट तथा 45 ग्राम यूरिया प्रत्येक गड्ढे में डाल कर सिंचाई करनी चाहिये, जिससे पेड़ी की अच्छी फसल प्राप्त होती है।

सावधानियां

जिन जगहों पर पानी की सतह ऊपर होती है उन स्थानों पर इस विधि को सावधानीपूर्वक अपनाया जाता है। अधिक पानी को खेत से बाहर निकालन का प्रावधान होना अति आवश्यक होता है।

लाभ

बिना किसी अधिक नुकसान के पेड़ी की 3-4 फसलें इस विधि द्वारा प्राप्त की जा सकती है। जिससे लम्बे समय पश्चात गन्ने की उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है। केवल गड्ढों में पानी का उपयोग होने की वजह से साधारण विधि की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है। उर्वरकों को गड्ढों में डालने से पोषक तत्वों के गन्ने की पोरियों द्वारा उपयोग क्षमता बढ़ जाती है।

सुक्रोज की मात्रा

इस विधि द्वारा उगाए गये गन्नों में सुक्रोज की मात्रा साधारण विधि की अपेक्षा अधिक होती है क्योंकि गोल गड्ढा विधि में सामान्यतः मुख्य प्ररोह ही काटे जाते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

ckt jk dh [krh

,-d- eYy[1] _rq ekoj[1] ,oa ,l-vkj- dkVok[2]

[1]Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

[1]Hkkd`vuqi&dsanzh; 'kq"d {ks= vuqla/kku laLFkku] tks/kiqj

[2]Hkkd`vuqi&Hkkjrh; pjkxkg ,oa pkjk vuqla/kku laLFkku] >kalh

उत्तर प्रदेश में क्षेत्रफल की दृष्टि से बाजरा का स्थान गेहूँ, धान और मक्का के बाद आता है। कम वर्षा वाले स्थानों के लिए यह एक अच्छी फसल है। 40 से 50 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। बाजरा की खेती मुख्यतः आगरा, बरेली व कानपुर मण्डलों में होती है। निम्न सघन पद्धतियां अपनाकर इसकी उत्पादकता में पर्याप्त बढ़ोत्तरी की जा सकती है :

प्रजातियों का चयन

अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु उन्नतशील प्रजातियों का शुद्ध बीज ही बोना चाहिए। बुवाई के समय एवं क्षेत्र अनुकूलता के अनुसार प्रजाति का चयन करें। विभिन्न प्रजातियों की विशेषताएं तथा उपज क्षमता सारिणी 1 में दर्शायी गयी है।

भूमि का चुनाव

बाजरा के लिए हल्की या दोमट बलुई मिट्टी उपयुक्त होती है। भूमि का जल निकास उत्तम होना आवश्यक है।

खेत की तैयारी

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा अन्य 2-3 जुताईयां देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके खेत तैयार कर लेना चाहिए।

बुवाई का समय तथा विधि

बाजरे की बुवाई जुलाई के मध्य से अगस्त के मध्य तक सम्पन्न कर लें। बुवाई 50 × 50 से.मी. की दूरी पर 4 से.मी. गहरे कूँड़ में हल के पीछे करें।

बीजदर एवं बीजोपचार

4-5 कि.ग्रा. बीज प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। यदि बीज उपचारित नहीं है तो बोने से पूर्व 1 कि.ग्रा. बीज को एक प्रतिशत पारायुक्त रसायन या थीरम के 250 ग्राम से शोधित कर लेना चाहिए। अरगट के दानों को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोकर निकाला जा सकता है।

उर्वरकों का प्रयोग

भूमि परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों का प्रयोग करें। यदि भूमि परीक्षण के परिणाम उपलब्ध न हों तो संकर प्रजाति के लिए 80-100 कि.ग्रा. नत्रजन, 40 कि.ग्रा. फासफोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा देशी प्रजाति के लिए 40-50 कि.ग्रा. नत्रजन, 25 कि. ग्रा. फास्फोरस एवं 25 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई से पहले *बेसल ड्रेसिंग* और शेष आधी मात्रा *टाप ड्रेसिंग* के रूप में जब पौधे 25-30 दिन के हों, देनी चाहिए।

सारिणी 1: बाजरा की उन्नतशील प्रजातियां

iztkfr	idus dh vof/k ¼fnu½	ÅapkbZ ¼l-eh-½	nkuk dh mit ¼fDo-@g-½	lw[kk pkjk dh mit ¼fDo-@g-½	ckyh dk x.k
ladqy					
आई.सी.एम.बी.–155	80–100	200–250	18–24	70–80	लम्बी, मोटी
डब्लू.सी.सी.–75	85–90	185–210	18–20	85–90	मध्यम, लम्बी ठोस
आई.सी.टी.पी.–8203	70–75	65–70	16–23	60–65	लम्बी ठोस
राज–171	70–75	150–210	18–20	50–60	लम्बी पतली
ladj					
पूसा–322	75–80	150–210	25–30	40–50	मध्यम ठोस
पूसा–23	80–85	180–210	17–23	40–50	मध्यम ठोस
आई.सी.एम.एच.–451	80–80	175–180	20–23	50–60	मोटा ठोस

छटनी तथा निराई-गुड़ाई

बुवाई के 15 दिन के बाद कमजोर पौधों को खेत से निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10-15 से.मी. कर ली जाय। साथ ही साथ घने स्थान से पौधे उखाड़कर रिक्त स्थानों पर रोपित कर दिए जाए। खेत में उगे खरपतवारों को भी निराई-गुड़ाई करके निकाल देना चाहिए एवं एट्राजीन 1.5-2.0 कि.ग्रा./हे. की दर से 700-800 ली. पानी में मिलाकर बुवाई के बाद व जमाव से पूर्व एक समान छिड़काव करें, जिससे अधिकतर खरपतवार समाप्त हो जाते हैं।

सिंचाई

खरीफ में फसल की बुवाई होने के कारण वर्षा का पानी ही पर्याप्त होता है। इसके अभाव में एक या दो सिंचाई फूल आने पर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

बाजरा का अरगट

यह रोग केवल भुट्टों के कुछ दानों पर ही दिखाई देता है। इसमें दाने के स्थान पर भूरे काले रंग के सींक के आकार की गांठें बन जाती हैं, जिन्हें *स्केलेरशिया* कहते हैं। संक्रमित फूलों में फफूँद विकसित होती है, जिनमें बाद में मधुरस निकलता है। प्रभावित दाने मनुष्यों एवं जानवरों के लिए हानिप्रद होते हैं।

उपचार

- यदि बीज प्रमाणित नहीं है, तो बोने से पहले 20 प्रतिशत नमक के घोल में बीज डुबोकर तुरंत स्केलेरशिया को स्वंय अलग कर देना चाहिए तथा शुद्ध पानी से 4-5 बार प्रयोग किया जाए। खेत में गर्मी की जुताई अवश्य करें।
- फसल में फूल आते ही निम्न फफूँद नाशकों में से किसी एक का छिड़काव 5-7 दिन के अंतर पर करना चाहिए।

अ. जिरम 80% घुलनशील चूर्ण 2.0 कि.ग्रा. अथवा जिरम 27% तरल के 3.0 लीटर

ब. मैंकोजेब घुलनशील चूर्ण 2.0 कि.ग्रा./हे.

स. जिनेब 75% घुलनशील चूर्ण 2 कि.ग्रा./हे.।

बाजरा का कण्डुआ

इस रोग से ग्रसित बीज आकार में बड़े, गोल/अण्डाकार व हरे रंग के होते हैं, जिसमें काला चूर्ण भरा होता है।

उपचार

- बीज शोधित करके बोना चाहिए।
- एक ही खेत में प्रति वर्ष बाजरा की खेती नहीं करनी चाहिए।
- रोगग्रसित बालियों को सावधानीपूर्वक निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।

बाजरे का हरित बाल

इनमें बाजरे की बालियों के स्थान पर टेढ़ी-मेढ़ी, हरी-हरी पत्तियां सी बन जाती हैं, जिससे पूर्ण बाली झाड़ के समान दिखाई देती है। पौधे बौने रह जाते हैं।

उपचार

1. अरगट रोग की रोकथाम हेतु बताए गए रासायनिक छिड़काव से यह बीमारी भी रोकी जा सकती है।
2. रोगग्रस्त पौधों को निकालकर जला देना चाहिए।

मुख्य बिंदु

- क्षेत्र की अनुकूलता के अनुसार संस्तुत प्रजाति का शुद्ध बीज ही प्रयोग करें।
- उपचारित बीज बोएं।
- फूल आने पर वर्षा के अभाव में पानी अवश्य दें।
- कीट/बीमारियों का समय से नियंत्रण अवश्य करें।

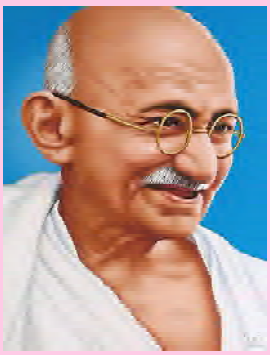

अगर हिंदुस्तान को सचमुच आगे बढ़ना है तो चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिंदी को प्राप्त है, वह किसी और भाषा को नहीं मिल सकता है।

-महात्मा गाँधी

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

mÙkj enkuh {k= e jch I;kt dh [krh l ykHk dek,

uhr dekjh

ohj doj flg df"k egkfo|ky;] Mejko] fcgkj

प्याज भारत में उगायी जाने वाली महत्वपूर्ण सब्जी एवं मसाला फसल हैं। देश में उत्पादन की जाने वाली सब्जी फसलों में क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से प्याज का आलू के बाद द्वितीय स्थान है। प्याज 1,320 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल के साथ विश्व में क्षेत्रफल में प्रथम एवं 209.31 लाख टन उत्पादन के साथ विश्व में उत्पादन में द्वितीय स्थान रखता है, परन्तु उत्पादकता में हम अमेरिका, ईरान, पाकिस्तान, इत्यादि से बहुत पीछे हैं। भारत का महज 16.12 मैट्रिक टन/हेक्टेयर की उत्पादकता के साथ नवाँ स्थान हैं। क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश एवं कर्नाटक अग्रणी राज्य हैं जबकि उत्पादकता में मध्य प्रदेश, गुजरात एवं हरियाण आगे हैं। इस नगदी फसल से विदेशी मुद्रा के देश में आने का मार्ग प्रशस्त है। भारत प्याज का निर्यात मुख्य रूप से बांग्लादेश, श्रीलंका, संयुक्त अरब अमीरात, मलेशिया जैसे देशों को करता है।

बाजारों में प्याज के मूल्यों में इतना उतार-चढ़ाव रहता है कि भारत सरकार ने इसे आवश्यक वस्तु अधिनियम के अन्तर्गत रखा है। यद्यपि वर्ष 2016 एवं जुलाई 2017 में यह उतार-चढ़ाव काफी कम रहा है।

प्राकृतिक रूप से प्याज की प्रकृति ठंडी मानी जाती है। इसके विशिष्ट स्वाद, गंध, पोषक तत्व व औषधीय गुण, इसकी मांग को बढ़ाने में सहायक हैं। प्याज में मौजूद एलाइल प्रोपाइल डाइसल्फाइड नामक तत्व इसके तीखापन/चरपराहट के लिए जिम्मेदार होता हैं। पीलिया, कब्ज, बवासीर व यकृत सम्बन्धित बीमारियों में लाभदायक होने के साथ-साथ, इसके सेवन से भूख भी बढ़ती है। प्याज के कंदों एवं पत्तों को विभिन्न प्रकार से खाने के लिए उपयोग किया जाता है। हरी सब्जी के अलावा सलाद, करी, भूनकर, उबालकर, बेक करके इत्यादि रूप में इसका इस्तेमाल किया जाता है। इसके साथ-साथ प्याज को प्रसंस्कृत करके अचार, पाउडर, फ्लेक, पेस्ट एवं क्रश इत्यादि के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। उत्तर भारत में रबी प्याज की खेती करके अच्छा लाभ कमाया जा सकता हैं

उन्नत प्रभेद

भारत में प्याज की विभिन्न उन्नत प्रभेदों को विकसित किया गया है। प्रभेदों को विशिष्टता एवं उपयुक्त जलवायु के अनुसार उचित किस्मों का चुनाव कर उत्पादन लिया जा सकता है।

रबी मौसम के लिए लाल रंग के उपयुक्त प्रभेद

पूसा माघवी, पूसा रत्नार, अर्का प्रगति, पंजाब सेलेक्शन, एन.एच.आर.डी.एफ.रेड, 2, 3, कल्याणपुर रेड राउण्ड, भीमा शक्ति, भीमा किरण, वी.एल. प्याज-3, उदयपुर-101, 103, हिसार-2, पंजाब रेड राउण्ड, पंजाब नरोया।

खरीफ एवं रबी दोनों मौसम के लिए उपयुक्त प्रभेद

भीमा सुपर, एन.एच.आर.डी.एफ. 4, पूसा रेड, एन-2-4-1, अर्का निकेतन, एग्रीफाउण्ड लाइट रेड, अर्का कीर्तिमान (संकर), अर्का लालिमा।

रबी के लिए पीले रंग के उपयुक्त प्रभेद

अर्का पीताम्बर

खरीफ एवं रबी दोनों के लिए पीले रंग के प्रभेद

फूले सुवर्णा एवं अर्ली ग्रानो

पहाड़ी क्षेत्र के लिए सफेद रंग के प्रभेद

स्पैनिश ब्राउन

रबी के लिए सफेद रंग के उन्नत प्रभेद

भीमा शुभ्रा, भीमा श्वेता, अकोला सफेद, फुले सफेद, एन-257-9-1, एग्रीफाउण्ड व्हाइट, पूसा व्हाइट राउण्ड, पूसा व्हाइट फ्लैट, पंजाब-48, उदयपुर-102

जलवायु

यद्यपि प्याज को विभिन्न प्रकार के वातावरण में उगाया जा सकता है पर इसकी खेती के लिए वह जलवायु सबसे उपयुक्त होती है जहाँ तापमान न बहुत अधिक हो और न ही बहुत कम हो। बीजों के जमाव के लिए 12.5 से 25.0 डिग्री सेंटीग्रेड, कंद बनने के पहले 12.8 से 21.0 डिग्री सेंटीग्रेड तथा कंदों *(बल्ब)* के विकास के लिए 15.5 से 25.0 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है। जिन स्थानों पर मानसून के समय औसत वर्षा 75-100 सेंटीमीटर से अधिक हो ऐसे जगहों पर प्याज की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

भूमि

प्याज की खेती के लिए उच्च जीवांशयुक्त हल्की दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। मृदा में जल निकास की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए मृदा का पी.एच मान 5.8-6.5 के बीच होना चाहिए। अधिक क्षारीय, अम्लीय या लवणीय मिट्टी इसके लिए उपयुक्त नहीं होती है।

बीज की मात्रा

सामान्यतः 8-10 कि.ग्रा./हेक्टेयर बीज से उगाये गए बिचड़ा रबी के मौसम में रोपकर लगाने के लिए पर्याप्त होता है।

बीज उपचार

बीजजनित रोगों से फसल को होने वाले नुकसान से बचाने के लिए बीज उपचार अति आवश्यक है। आर्द्रगलन या पदगलन प्याज के नर्सरी में लगने वाली एक महत्वपूर्ण बीमारी है। यद्यपि विभिन्न प्रकाशनों में प्याज के बीज को थीरम, कैप्टन या कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू.पी के 2.0 ग्राम/कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करने की अनुशंसा की गई है। तथापि प्याज में कार्बेन्डाजिम 50 डब्लु.पी के 3.0 ग्राम/कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करके बेहतर परिणाम पाए गए हैं। फफूँदनाशी से बीज उपचार करने के लिए साफ-सुधरे पक्के फर्श या पॉलीथीन की चादर का इस्तेमाल करना चाहिए। बीज को पॉलीथीन या फर्श पर छाया वाले स्थान पर फैलाकर उसपर संस्तुत फफूँदनाशी का छिड़काव करना चाहिए। इसके उपरान्त जल को इस मिश्रण में उतनी ही मात्रा में डालना चाहिए जिससे कि दवा बीज के ऊपर चिपक जाय परन्तु जल का स्राव बीज के बाहर न हो। बीज का उपचार बीज के नर्सरी में बुवाई के 24 घण्टे पूर्व करने से अत्याधिक लाभ मिलता है। बीज को उपचारित करने के बाद छायादार स्थान में सुखा लेना चाहिए। इस प्रकार फफूँदनाशक से बीज उपचार करने से फफूँदजनित रोगों की रोकथाम में मदद मिलती है।

नर्सरी की तैयारी एवं बीज की बुवाई

उत्तर भारत में नर्सरी में बीज की बुवाई का समय मध्य अक्टूबर से नवम्बर के अन्त तक का होता है। 500 वर्ग मीटर भूमि में तैयार बिचड़ा/पौध एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई के लिए पर्याप्त होती हैं। नर्सरी वाले स्थान पर उचित जल निकास की व्यवस्था होनी चाहिए। खेत को अच्छी प्रकार से जुताई करने के पश्चात् 4.0 से 5.0 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद प्रति वर्ग मीटर की दर से नर्सरी में मिला देना चाहिए। प्याज के बिचड़े ऊँची उठी हुइ क्यारियों में तैयार करना ज्यादा लाभदायक होता है। नर्सरी के बेड की चौडाई 1.0 मीटर, ऊँचाई 15-20 सें.मी. तथा लम्बाई 3.0 मीटर या सुविधानुसार रखना चाहिए। बीज की बुवाई बेड पर कतार में करनी चाहिए। एक कतार से दूसरे कतार के बीच की दूरी 5.0 से.मी. तथा बीजों को एक पंक्ति में एक से.मी. एवं एक से.मी. की गहराई पर ही बीजों की बुवाई करनी चाहिए। बीज को छनी हुए गोबर की खाद से ढकना चाहिए। यदि संभव हो तो बीजों के ऊपर बाँस की बाती बिछाकर उस पर पुआल रखकर ही पानी देना चाहिए। जब बीजों में अंकुरण हो जाए तो बाँस की बाती सहित पुआल को हटा देना चाहिए। ऐसा करने से बीजों में जमाव अच्छा होता है तथा पौध की शुरूआती बढ़त भी अच्छी रहती है। रबी के मौसम में 8-9 सप्ताह में पौध/बिचड़े रोपने लायक तैयार हो जाते हैं।

पौध की रोपाई के लिए खेत की तैयारी

खेत की दो तीन जुताईयां करके उसे अच्छी प्रकार समतल कर लेते हैं। इसके बाद 50 टन सड़ी गोबर की खाद, 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. पोटैशियम प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाकर समतल बना देते हैं।

पौध की रोपाई

पौध की रोपाई रबी में दिसम्बर से जनवरी माह में की जाती है। रोपाई करते समय कतार से कतार की दूरी 15 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 7.5 से 10.0 से.मी. रखी जाती है। रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है, अन्यथा हानि हो सकती है।

खरपतवार नियंत्रण

प्याज की जड़ें अपेक्षाकृत कम गहराई तक जाती हैं। अतः अधिक गहराई तक गुड़ाई नहीं करना चाहिए। अच्छी फसल के लिए शुरू में 2 से 3 दिन बाद खरपतवार निकालना आवश्यक होता है। खरपतवारनाशक दवा का भी प्रयोग किया जा सकता है। पेन्डीमिथैलिन 30 ई.सी. का एक 1.0 लीटर/हेक्टेयर या स्टाम्प 3.25 लीटर दवा रोपाई के 24 घण्टें बाद या रोपाई के ठीक

पहले 800 लीटर पानी में डालकर छिड़काव करने से खरपतवार खत्म करने में मदद मिलती है। खरपतवारनाशक दवा डालने पर भी 40-45 दिनों के बाद एक बार हाथ से खरपतवार निकालना आवश्यक होता है।

सिंचाई

सिंचाई समय पर आवश्यकतानुसार करते हैं। यदि जमीन ज्यादा रेतीली है तो सिंचाई हर तीसरे दिन करते हैं। जिस समय ठंड बढ़ रही हो उस समय सिंचाई के बीच के अंतराल को घटा देते हैं। पानी की कमी के कारण गाँठें अच्छी तरह से नहीं बढ़ पाती हैं और इस तरह पैदावार में कमी हो जाती है।

खड़ी फसल में खाद देना

रोपाई के चार सप्ताह बाद लगभग 200 कि.ग्रा. किसान खाद या 100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव विधि से मिला देते हैं। यदि खाद का प्रयोग किया जाता है तो खाद डालने के बाद सिंचाई करना चाहिए, परन्तु यूरिया का प्रयोग सिंचाई के बाद करते हैं। यूरिया डालने से पहले खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक होता है। जमीन हल्की किस्म की हो, तो उपरोक्त उर्वरक की मात्रा दो भागों में रोपाई के 20 और 45 दिनों के अन्तराल पर देना चाहिए।

पौध सुरक्षा

फसल को थ्रिप्स नामक कीट से बचाने के लिए मैलाथियान एक मि.ली. का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। छिड़कने वाले घोल में ट्राईटोन या सैंडोविट की कुछ बूंदें अवश्य मिलायें। पौधा को आर्द्रगलन बीमारी से बचाने के लिए बीज को 0.2 प्रतिशत थीरम से उपचारित कर लेना चाहिए। यदि बीमारी का प्रकोप बीज की बुवाई के बाद आता है तो 0.2 प्रतिशत थीरम घोल से मिट्टी को नम कर देना चाहिए।

पर्पल ब्लाच, बैंगनी धब्बा तथा स्टेमफीलियम झुलसा रोग से बचाव के लिए इण्डोफिल एम-45 नामक दवा 2 से 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर 10-15 दिनों के अन्तर पर छिड़काव करें। छिड़कने वाले घोल में चिपकने वाली दवा जैसे ट्राईटोन या सैन्डोविट 0.06 प्रतिशत की दर से अवश्य मिलायें। उपरोक्त कीट एवं बीमारियों में दोनों दवायें एक साथ मिलाकर छिड़क सकते हैं।

खुदाई एवं प्याज को सुखाना

रबी की फसल में जब 75 प्रतिशत पत्ते झुक जाएं तो कटाई करनी चाहिए। खुदाई करके इनको कतारों में रखकर सुखा देते हैं। पत्तों को गर्दन से 2.5 से.मी. ऊपर से अलग कर देते हैं। फिर एक सप्ताह तक सुखा लेते हैं। सुखाते समय सड़े हुए, कटे हुए, दो फाड़े टाईप वाली अन्य खराब किस्म की गांठें निकाल देते हैं।

रोपाई के 75 दिनों बाद 0.2 प्रतिशत-0.25 प्रतिशत भाग प्रति मिलियन मैलिक हाइड्राजाइड रसायन का छिड़काव तथा खुदाई से 10-15 दिनों पहले सिंचाई रोकने से भंडारण में होने वाली क्षति कम होती है। पत्तियों सहित धूप में सुखाने तथा सूखी पत्तियों सहित भंडारण से क्षति कम होती है।

उपज

यदि वैज्ञानिक विधि से प्याज की खेती की जाय तो रबी में 200-250 कुंटल प्रति हेक्टेयर औसत उपज होती है।

आर्थिक विश्लेषण

इस प्रकार खेती करके कृषक बन्धु रबी प्याज की खेती से ₹ 1 की लागत से ₹ 1.48 से लेकर ₹ 2.50 तक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

प्रसन्नता एक अनमोल खजाना है,
छोटी-छोटी बातों पर उसे न लुटने दें।
-स्वामी विवेकानन्द

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

djsyk dh [ksrh dh uohure fof/k;k

'kh'kiky flag[1] ch-ih- 'kkgh[2] foosdkuUn flag[3] nhid jk;[3] ,oa e;ad dqekj jk;[1]
[1]df"k foKku dsUnz] xksreq)uxj
[2]df"k foKku dsUnz] ihyhHkhr
[3]df"k foKku dsaæ] Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

करेला अपने विशेष औषधीय गुणों के कारण अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसकी खेती भारत में खरीफ और जायद दोनों ऋतुओं में समान रूप से की जाती है। करेले के कच्चे फलों का रस मधुमेह के रोगियों के लिए भी बहुत उपयोगी है और उच्च रक्तचाप के मरीजों के लिए रामबाण है। इसमें उपस्थित कडुवाहट (मोमोर्डसीन) मनुष्य के खून को साफ करने में काफी मदद करती है।

उन्नतशील प्रजातियाँ

पूसा दो मौसमी

नाम के अनुसार यह किस्म दोनों मौसम (खरीफ व जायद) में बोयी जाती है। फल बुआई के लगभग 55 दिन बाद तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। फल हरे, मध्यम मोटे तथा 15 से.मी. लम्बे होते हैं। प्रत्येक फल का वजन 120 ग्राम होता है। इस किस्म की औसत उपज 100 कु./हे. होती हैं।

पूसा विशेष

इसके फल हरे, पतले, मध्यम आकार के तथा 20 से.मी. लम्बे होते हैं। औसतन एक फल का वजन 115 ग्राम होता है। इसकी उपज 115-130 कु./हे. होती हैं।

अर्का हरित

इस प्रजाति के फल चमकीले हरे, आकर्षक, चिकने, अधिक गूदेदार तथा मोटे छिलके वाले होते हैं। फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 65 दिन बाद की जा सकती है। फल में बीज कम तथा कड़वापन भी कम होता है। फल की लम्बाई 15 से.मी. तथा वजन 90 ग्राम होता है। इसकी उपज 130 कु./हे. होती हैं।

वी.के. 1 (प्रिया)

इसके फल 40 से.मी. तक लम्बे तथा मोटे छिलके वाले होते हैं। बुआई के 60 दिन बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। प्रत्येक फल का वजन औसतन 120 ग्राम होता है। इसकी औसत उपज 140 कु./हे. होती हैं।

पंत करेला-1

फल मोटे, 15 से.मी. लम्बे, हरे तथा प्रारम्भ में पतले होते हैं। इसके फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 55 दिनों बाद की जा सकती है। औसत उपज क्षमता 150 कु./हे. होती है। यह प्रजाति पहाड़ों पर उगाने के लिए उपयुक्त हैं।

कल्याणपुर बारहमासी

यह प्रजाति फल मक्खी के लिए प्रतिरोधी है तथा दोनों मौसमों में उगायी जा सकती है।

काशी हरित

फल चमकीले-हरे, चिकने, गूदेदार एवं एक फल का वजन 80-100 ग्राम होता है। पहली तुड़ाई 50 दिन बाद व मचान पर खेती करने से लगभग 300 कु./हे. उपज मिल जाती है।

पूसा औषधि

हल्के हरे, मध्यम लम्बाई वाले तथा औसत फल भार 85 ग्राम, परिपक्वता अवधि 48-52 दिन, औसत उपज 198 कु./हे.।

पूसा हाइब्रिड-1

फल हरे, मध्यम आकार के, एक फल का औसतन वजन 100 ग्राम तक होता है। बुवाई के 55-60 दिन बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इसकी उपज 150-170 कु./हे. होती है।

पूसा हाइब्रिड-2

फल गहरा हरा, मध्यम लम्बाई का, फल का औसत वजन 85-90 ग्राम, पहली तुड़ाई 52 दिनों में, औसत उपज 180 कु./हे.।

पूसा हाइब्रिड-4

यह एक नई किस्म है। फल गहरा हरा, मध्यम लम्बाई का, फल का औसत वजन 60 ग्राम होता है। इस किस्म के फल बुआई के 45-50 दिन बाद तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। औसत उपज 180-200 कु./हे. तक होती है।

भूमि की तैयारी

खेत की तैयारी के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद में 2-3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाकर मिटटी को भुरभुरी एवं खेत को समतल कर लेना चाहिए।

बीज की मात्रा एवं बुआई

एक हेक्टेयर खेत की बुआई के लिए 85-90 प्रतिशत अंकुरण क्षमता वाले बीज की 5 कि.ग्रा. मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। एक स्थान पर 2-3 बीज, 3-4 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए।

बुवाई का समय

इसकी बुवाई ग्रीष्म ऋतु (जायद) में 15 फरवरी से 15 मार्च तक तथा वर्षा ऋतु (खरीफ) के लिए 15 जून से 15 जुलाई तक करते हैं। पहाड़ों पर बुआई, अप्रैल के महीने में की जाती है।

बुवाई की दूरी

करेले की बुवाई जहाँ तक हो सके, मेड़ों पर करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 1.5 से 2.5 मीटर और पौधे से पौधे (थाले से थाले) की दूरी 45 से 60 से.मी. रखनी चाहिए। अच्छे प्रकार से तैयार किये गये खेत में 2-5 मीटर की दूरी पर 50-60 से.मी. चौड़ी नाली बनाकर, नाली के दोनों किनारों पर बुवाई करते हैं।

खाद एवं उर्वरक

सामान्य रूप से 20-25 टन सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद को खेत तैयार करते समय मिट्टी में मिला देनी चाहिए। इसके बाद एक हेक्टेयर खेत के लिए 50 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि. ग्रा. फास्फोरस, तथा 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रूप में देनी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय दें। बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा बीज बोने के 30 व 45 दिन बाद जड़ के पास *टॉप ड्रेसिंग* के रूप में देनी चाहिए।

सिंचाई

खरीफ ऋतु में खेत की सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती है, परन्तु वर्षा न होने पर सिंचाई की आवश्यकता 10-15 दिन के अन्तराल पर पड़ती है। अधिक वर्षा के समय पानी के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4-5 दिन पर सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

वर्षा ऋतु या गर्मी में सिंचाई के बाद खेत में काफी खरपतवार उग आएं हों तो उनको खुरपी से निकाल देना चाहिए। करेले में पौधे की वृद्धि एवं विकास के लिए 2-3 बार गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

सहारा देना

करेले की लताओं को लकड़ी का सहारा देने से या मचान पर चढ़ा देने से फल जमीन के सम्पर्क से दूर रहते हैं। इससे फलों का आकार एवं रंग अच्छा रहता है तथा पैदावार भी बढ़ जाती है। मचान पर फल लगने से सड़ते नहीं हैं। इसके लिए प्रत्येक पौधे जब 30 से.मी. लम्बे हो जाएं तो नायलॉन या जूट की रस्सी के सहारे मचान तक चढ़ाया जाता है। सामान्यतः मचान की ऊँचाई 4.5 फीट तक रखते हैं।

फलों की तुड़ाई

जब फलों का रंग गहरे हरे से हल्का हरा पड़ना शुरू हो जाए तो फलों की तुड़ाई करने के लिए उत्तम माना जाता है। फलों की तुड़ाई एक निश्चित अन्तराल पर करते रहना चाहिए ताकि फल कड़े न हों अन्यथा उनकी बाजार में मांग कम होती है। बोने के 60-75 दिन बाद फल तोड़ने योग्य हो जाते हैं। फलों की तुड़ाई का कार्य हर तीसरे दिन करना चाहिए, जिससे पौधे पर ज्यादा फल लगें।

प्रमुख रोग

चूर्णी फफूँद

रोग का प्रथम लक्षण पत्तियों और तनों की सतह पर सफेद या धुँधले धूसर रंग के पाउडर जैसा दिखाई देता है। कुछ दिनों के बाद वे धब्बे चूर्णयुक्त हो जाते हैं। सफेद चूर्णी पदार्थ अंत में समूचे पौधे की सतह को ढक लेता है। अधिक प्रकोप के कारण पौधे का असमय ही निष्पत्रण हो जाता है। इसके कारण फलों का आकार छोटा रह जाता है।

नियंत्रण

इस रोग के नियंत्रण के लिए टोपाज दवा का 0.024 प्रतिशत घोल अर्थात 1 मि.ली. दवा 4 लीटर पानी में घोलकर एक बार छिड़काव करें। यदि यह दवा उपलब्ध न हो तो कैलेक्सीन 0.1 प्रतिशत का घोल बनाकर सात दिन के अंतराल पर 2 बार छिड़काव करें।

मृदुरोमिल फफूँदी

यह रोग वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन वाली दोनों फसलों में समान

रूप से आता है। उत्तरी भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण पत्तियों पर कोणीय धब्बे जो शिराओं द्वारा सीमित होते हैं। ये कवक पत्ती की ऊपरी पृष्ठ पर पीले रंग होते हैं तथा नीचे की तरफ रोऐंदार वृद्धि करते हैं।

नियंत्रण

बीजों को मेटलएक्सिल नामक कवकनाशी की 3 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए तथा मैंकोजेब 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव रोग के लक्षण प्रारम्भ होने के तुरन्त बाद फसल पर करना चाहिए। फसल को मचान पर चढ़ाकर खेती करें।

फल विगलन रोग

इस रोग से प्रभावित फलों पर कवक की अत्यधिक वृद्धि हो जाने से जमीन पर पड़े फल सड़ने लगते हैं। जमीन पर पड़े फलों का छिलका नरम एवं गहरे रंग का हो जाता है। आर्द्र वायुमण्डल में इस सड़े हुए भाग पर रूई के समान घने कवकजाल विकसित हो जाते हैं। भण्डारण और परिवहन के समय भी फलों में यह रोग फैलता है।

नियंत्रण

यदि जमीन पर फैलाकर खेती करना है तो खेत में उचित जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। फलों को भूमि के स्पर्श से बचाने हेतु मचान बनाकर खेती करना चाहिए। भण्डारण एवं परिवहन के समय फलों में चोट लगने से बचाऐं तथा हवादार एवं खुली जगह पर रखें।

मोजैक विषाणु रोग

यह रोग विशेषकर नई पत्तियों में चितकबरापन और सिकुड़न के रूप में प्रकट होता है। पत्तियां छोटी एवं हरी पीली हो जाती हैं। संक्रमित पौधे की वृद्धि रूक जाती है। इसके आक्रमण से पर्ण छोटे और पुष्प छोटे-छोटे पत्तियों जैसे बदले हुए दिखाई पड़ते हैं। ग्रसित पौधा बौना रह जाता है और उसमें फलत बिल्कुल नहीं होती है।

नियंत्रण

इस रोग की रोकथाम के लिए कोई प्रभावी उपाय नहीं है लेकिन निम्न उपायों के द्वारा इसको काफी कम किया जा सकता है :

- रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जला देना चाहिए।
- रोगवाहक कीटों से बचाव करने के लिए मैलाथियान 0.1

प्रतिशत का घोल बनाकर दस दिन के अन्तराल में 2-3 बार फसल पर छिड़काव करें।

प्रमुख कीट

कद्दू का लाल कीट *(रेड पम्पकिन बीटिल)*

प्रौढ़ कीट विशेषकर मुलायम पत्तियां अधिक पसन्द करते हैं। अधिक आक्रमण होने से पौधे पत्ती रहित हो जाते हैं और मर जाते हैं। ग्रब (इल्ली) पौधों की जड़ पर आक्रमण कर हानि पहुंचाती है तथा जमीन में रहती है। इल्ली जमीन के सम्पर्क में आए फलों पर कभी-कभी आक्रमण कर उनमें छेद कर देती है। नए एवं छोटे पौधे आक्रमण के कारण मर जाते हैं।

नियंत्रण

इस कीट को नियंत्रित करने के लिए मैलाथियान चूर्ण 5 प्रतिशत या कार्बारिल 5 प्रतिशत 25 कि.ग्रा. चूर्ण को राख में मिलाकर सुबह पौधों पर बुरकना चाहिए या मैलाथियान 50 ई.सी. या कार्बरिल 50 डब्लू.पी. का 0.1 प्रतिशत घोल (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

फल मक्खी

प्रौढ़ मादा छोटे, मुलायम फलों के छिलके के अन्दर अण्डा देना पसन्द करती हैं। अण्डे से मैगट निकलती है जो फलों के गूदे को खाकर सड़ा देती है। ग्रसित फल सड़ जाता है और नीचे गिर जाता है।

नियंत्रण

इस कीट के नियंत्रण के लिये एक एकड़ फसल के लिए 80 से 100 स्थानों पर प्रलोभक (1 कि.ग्रा. केला, 10 ग्राम फ्यूराडान व 5 मि.ली. सिरका लकड़ी की सहायता से मिलाकर) किसी छिछले बर्तन में रखें। इससे प्रौढ़ आकर्षित होते हैं और प्रलोभक खाकर मर जाते हैं। जिससे प्रौढ़ मादा मक्खी द्वारा फल पर अण्डा देना कम हो जाता है। मैलाथियान 50 ई.सी. का 2 मि.ली. एवं 50 ग्राम गुड़ प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

unh ifjfLFkfrdh ij jlk;fud d`f"k dk n`"çHkko

,-ih- f}osnh] vf'ouh nÙk ikBd] l/khj dekj 'kDy] on çdk'k flg] lathso dekj]
eukst dekj f=ikBh] ,l-vkj- flg] fou; dekj flg ,oa vfHk"kd dekj flg
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

हम मृदा को धरती माता के नाम से पुकारते हैं। मृदा एक जैविक पिण्ड है, इनमें लाभदायक सूक्ष्मजीव (जीवाणु, फफूँद, लाभदायक कीट) वास करते हैं। इन रसायनों के प्रयोग से ये जैविक गुण प्रभावित होते हैं। साथ ही मृदा हवा का आवागमन भी प्रभावित होता है, जिससे मृदा उर्वरता का लगातार ह्रास हो रहा है। हमारे देश के अलग-अलग भागों में अलग-अलग तरह की मृदाएं पायी जाती हैं जो फल व फसल के लिए अनुकूल होती है, जैसे मलिहाबाद का दशहरी आम, कोंकण का अल्फान्सों आम, पाटन, जबलपुर की सब्जी मटर, गाडरवारा, मध्य प्रदेश की अरहर दाल, नागपुर का संतरा, कश्मीर का सेब, बीना, मध्य प्रदेश का गेहूँ, परन्तु मृदा पर इन रसायनों का इतना कुप्रभाव पड़ा है कि ये विशिष्ट पहचान वाले मृदा (क्षेत्र) अपनी पहचान खोते जा रहे हैं। हमारी कृषि वर्षा पर आधारित है व वर्षा जल से ये हानिकारक कीटनाशक, उर्वरक व अन्य रसायन बहकर नदियों व तालाबों में जाते हैं, जिससे जलीय जन्तु व मछलियों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है व इनमें तरह-तरह की बीमारियां देखने को मिलती हैं। साथ ही इस दूषित जल के स्नान से चर्म रोग होता है, सिंचाई स्रोत दूषित हो रहे हैं व पीने योग्य पानी दूषित होता चला जा रहा है। यह भी तथ्य है कि हमें 126 करोड़ जनसंख्या की खाद्य सुरक्षा के लिए उत्पादन बढ़ाना है, परन्तु प्रदूषण के कारण ये कृषिगत भूमि, अकृषित भूमि में तब्दील हो रही है। इसे रोकने के लिए हम सुरक्षित कृषि के तहत एकीकृत कृषि प्रणाली, स्थिर खेती, जैविक खेती पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

परिचय व विवरण

हमारे देश में मुख्य रूप से पांच नदियाँ हैं, जो विभिन्न राज्यों से होकर गुजरती हैं। ये नदियाँ विभिन्न उद्‌गमों से उत्पन्न हुई हैं। जनसंख्या, फैक्ट्रियाँ, कृषि की सघनता, धार्मिक क्रियाकलापों द्वारा ये विभिन्न प्रदूषणों से प्रदूषित होती रहती हैं। प्रदूषण के दृष्टिकोण से इनका क्रम निम्नलिखित प्रकार से है :

1. गंगा, 2. यमुना, 3. सतलज, 4. कावेरी, 5. नर्मदा

जो विषाक्त अपशिष्ट हैं, वे एक हानिकारक पदार्थ होते हैं, जो धरती व जलीय जीवन के लिए घातक होते हैं। ये विषाक्त अपशिष्ट हमारे खेत, तालाब, नदी, जंगल व वायवीय वातावरण के लिए घातक सिद्ध होते हैं। ये विषाक्त अपशिष्ट विभिन्न रूपों में कारखानों के कचरे से आते हैं। इन विषाक्त अपशिष्ट का प्रबंधन बहुत ही बड़ी चुनौती है। यदि प्रबंधन ठीक प्रकार से कर लें तो हम अपने स्थलीय, जलीय एवं वायवीय प्रदूषण से निजात पा सकेंगे।

पौधों में खाद्य उत्पादन एक रसायनिक प्रक्रिया है, इसके अंतर्गत सूर्य की किरणों की उपस्थिति में कार्बन डाईऑक्साइड व पानी, क्लोरोफिल की उपस्थिति में सौर ऊर्जा, रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित होती है, जिससे हम भोजन प्राप्त करते हैं। प्रोटीन, वसा, फिनॉल, विटामिन, एल्कोलायड, रेजिन, गम इत्यादि सिंक के माध्यम से ट्यूबर, जड़, तना, फल एवं बीज में खाद्य रूप में परिवर्तित होते हैं। खाद्य पदार्थ की मात्रा एवं गुणवत्ता कृषि में प्रयोग किये गये कृषि निविष्टि की गुणवत्ता व गुणधर्म पर ही आधारित होते हैं, जैसा कि एक कहावत है- जैसा बोओगे, वैसा काटोगे अर्थात कृषि क्रियाओं में प्रयोग किये गए कृषि निविष्टि यदि अच्छा है तो हम अच्छे, गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थ प्राप्त करते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए गुणवत्तापरक होंगे, परन्तु दुर्भाग्य से कृषि में प्रयोग होने वाले निविष्टि की गुणवत्ता काफी हद तक खराब व हानिकारक होती है, क्योंकि ये वे रसायन हैं जो असंतुलित एवं आवश्यकता से अधिक मात्रा में प्रयोग हो रहे हैं।

पौधों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग हम कर रहे हैं। परिणामस्वरूप पौधे अधिकाधिक कीट एवं रोगों को आमंत्रित करते हैं, साथ ही हम इनके प्रबंधन के लिए कीटनाशक, रोगनाशक व खरपतवारनाशी का प्रयोग अधिकाधिक करने लगे हैं, जो मृदा, पौधे व वातावरण के लिए घातक होते हैं। इन घातक रसायनों की प्रकृति है कि कुछ पौधों में, कुछ मृदा में अपने अवशेष छोड़ देते हैं, जो खाद्य पदार्थ को दूषित करते हैं व तंत्रिका तंत्र के लिए बहुत ही घातक हैं।

सामान्य रूप से हम सब्जियों व फलों में भी इन कीटनाशी रसायनों का प्रयोग कर रहे हैं, चूंकि सब्जियों व फलों को एक कम अवधि के अन्तराल पर तुड़ाई करके बाजार में भेजते हैं व सब्जियों में कीटनाशक, रोगनाशक, खरपतवारनाशक जैसे खतरनाक रसायनों के अवशेष काफी मात्रा में सब्जियों के माध्यम से हमारे शरीर में

घातक प्रभाव डाल रहे हैं। इसी प्रकार पशुओं के चारे व दानों में भी हानिकारक तत्व पाये जा रहे हैं, जो पशुओं के स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित कर रहे हैं। साथ ही साथ पशुओं का दूध भी दूषित हो गया है। यही स्थिति मुर्गी पालन में भी देखने को मिलती है।

रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से पहले, ये उर्वरक कारखानों में बनते हैं व इनके द्वितीयक उत्पाद पर्यावरणीय अपशिष्ट बहकर नदियों में जा रहे हैं व नदियों के जल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं। ये द्वितीयक उत्पाद हमारी मृदा के साथ-साथ वातावरण में भी जहरीले गैसें छोड़ते हैं। निक्षालन के द्वारा भी ये हानिकारक पदार्थ हमें नुकसान कर रहे हैं। मृदा की कठोरता भी फास्फेटिक उर्वरकों से होती जा रही है, जो मृदा उर्वरता को विपरीत रूप से प्रभावित कर रही है। ये हानिकारक पदार्थ हमारे भूमिगत जल में भी समवेशीय प्रक्रिया *(इनफिल्टरेशन)* के माध्यम से पहुंच रहे हैं।

अब हम रासायनिक कीटनाशियों के अंधाधुंध प्रयोग के बारे में जान लें। हम कीटनाशकों, रोगाणुनाशक जैसे रसायनों का हानिकारक कीट के नियंत्रण के लिए प्रयोग करते हैं। ये हानिकारक कीट व जीव हैं- *ग्राम पॉड बोरर,* मच्छर, फल मक्खी परन्तु रसायनों से हमारे मित्र कीट व जीव जैसे- मधुमक्खी, तितली, रेशम कीट व मृदा के लाभदायक केंचुए, ये सभी लाभदायक कीट व जीव भी मारे जाते हैं जो हमारे पारिस्थितिकी व खेती के लिए हानिकारक हैं। कभी-कभी हम कीटनाशकों को गलत मात्रा (अधिक मात्रा) में प्रयोग करते हैं। जैसे- हम पेन्सिलिन की जगह साइप्रोलोक्सीन का प्रयोग कर देते हैं व इनकी मात्रा 100 ग्राम होनी चाहिए परंतु व्यावहारिक रूप से 500 ग्राम मात्रा प्रयोग कर रहे हैं। हमारे परिस्थितिकी में गिद्ध पाये जाते हैं, जो मरे हुए पशुओं के शरीर को खाते हैं। पशुओं के शरीर में हानिकारक कीटनाशक पाये जाने के कारण बड़ी संख्या में गिद्ध मर गए हैं व अपनी अस्मिता के लिए जूझ रहे हैं। काजू में इण्डोसल्फान के प्रयोग से बच्चों में कई चर्म रोग पाए गए हैं। भोपाल गैस काण्ड (3 दिसम्बर, 1984) भी एक क्रूर त्रासदी लेकर आया जो एक भयानक नरसंहार के रूप में हुआ।

हमारी कृषि वर्षा पर आधारित है व वर्षा जल से ये हानिकारक कीटनाशक, उर्वरक व अन्य रसायन बहकर नदियों व तालाबों में जाते हैं, जिससे जलीय जन्तु व मछलियों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है व इनमें तरह-तरह की बीमारियां देखने को मिलती हैं। साथ ही इस दूषित जल के स्नान से चर्म रोग होता है, सिंचाई स्रोत दूषित हो रहे हैं व पीने योग्य पानी दूषित होता चला जा रहा है।

यह भी तथ्य है कि हमें 126 करोड़ जनसंख्या की खाद्य सुरक्षा के लिए उत्पादन बढ़ाना है, परंतु प्रदूषण के कारण ये कृषिगत भूमि, अकृषित भूमि में तब्दील हो रही है। इसे रोकने के लिए हमें सुरक्षित कृषि के तहत एकीकृत कृषि प्रणाली, स्थिर खेती, जैविक खेती पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

- हमारे दृष्टिकोण से नदियों के किनारे जो रासायनिक कृषि के माध्यम से विभिन्न सब्जियों की खेती हो रही है, उसे रोकना होगा।
- साथ ही हमें एक *'रोड मैप'* बनाने की आवश्यकता है, व रासायनिक खेती को धीरे-धीरे कार्बनिक खेती के रूप में बदलना होगा।

जलीय जीवन पर प्रभाव

विषाक्त अपशिष्ट का खेत, समुद्र, जलाशय एवं नदियों पर कुप्रभाव पड़ता है। ये फैक्ट्रियों के विषाक्त अपशिष्ट हमारे इन जल स्रोतों में आते हैं व मछलियों तथा जलीय पौधों के ऊपर कुप्रभाव डालते हैं, जिससे जलीय परिस्थितिकी बाधित होती है। ये विषाक्त अपशिष्ट, मानव व जलीय जंतुओं के भोजन की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। ये विषाक्त अपशिष्ट पीने योग्य पानी की मात्रा में भी कमी करते हैं।

- प्रदूषण से नदियों में खारापन बढ़ता है।
- रासायनिक कृषि से नाइट्रेट बढ़ती है, ये मुख्य रूप से यूरिया के असंतुलित प्रयोग के कारण होता है। इसके निदान हेतु हमें नीम कोटेड यूरिया या सल्फर कोटेड यूरिया का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही हमें यूरिया के पर्णीय छिड़काव से नाइट्रोजन का प्रबंधन करना चाहिए। संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
- कुछ ऐसे कीटनाशकों का प्रयोग आज भी हो रहा है, जो प्रतिबंधित हैं। हमें सुरक्षित कीटनाशक का प्रयोग करना चाहिए।
- दिन-प्रतिदिन प्रदूषण के कारण समुद्री स्तर बढ़ता जा रहा है व हमारे पहाड़ों की बर्फ पिघल रही है, जो एक घातक संकेत है। 1960 से अब तक 15.6 मीटर समुद्री जल स्तर बढ़ा है।

जनमानस पर प्रभाव

- अत्यधिक रसायनों व असंतुलित रसायनों के कृषि में अंधाधुंध प्रयोग के कारण कृषि उत्पाद में विषाक्तता बढ़ती जा रही है। एक रिपोर्ट के अनुसार सब्जियों एवं कपास में अंधाधुंध रसायनों का प्रयोग हुआ है। इसे रोकना होगा व सुरक्षित रसायनों का ही उचित मात्रा व उचित विधि से प्रयोग करना होगा।

- यहाँ तक की माँ के दूध में भी विषाक्त तत्व भी पहुँच गए हैं, जो नवजात शिशुओं व महिलाओं के लिए घातक है।
- यू.एन.ई.पी. (1993) की एक रिपोर्ट के अनुसार उच्च मिनरल (लवण) का पीने के पानी में असंतुलित स्तर होने से पेट से संबंधित, हृदय संबंधी, मूत्र संबंधी व गर्भवती महिलाओं से संबंधित रोग बढ़ जाते हैं साथ ही साथ व्यक्तियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी कमी होती है।
- प्रदूषित जल से खाद्य पदार्थ व सब्जियों में हानिकारक जीवाणुओं से भी ग्रसित होना देखा गया है, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

जंगल पर प्रभाव

- विषाक्त अपशिष्ट से जंगलों में विभिन्न प्रकार के प्रदूषण व बीमारियाँ पैदा होती हैं। जंगलों के पेड़ सूखने लगते हैं व जंगली जीव-जन्तु भी विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित होते हैं। आज हमारे पारिस्थितिकी के लिए आवश्यक गिद्धों की संख्या भी लुप्त सी होती दिख रही है। प्रदूषित चारे व खाद्य पदार्थों के खाने से पशुओं की मृत्यु हुई व पशुओं के मांस में कीटनाशकों के अवशेष रह गए, जिसे गिद्ध द्वारा खाने से वे मरते गए। आज उनकी संख्या नगण्य सी हो गयी है।

कृषि के कुप्रबंधन से प्रदूषण

- सिंचाई क्षेत्र के बढ़ने से किसानों द्वारा *फ्लड* सिंचाई की गयी, जिसमें पानी की अत्यधिक बर्बादी हुई है। भूमि पानी की सतह बढ़ी है। नहरों के पानी से *सिवेज* की समस्या से भी भूमिगत जल बढ़ा है। इस कारण द्वितीयक लवणन एवं द्वितीयक क्षारीयन की समस्या भी बढ़ी है। यह भी एक समस्या को जन्म देती है। इसके उपाय के लिए उचित सिंचाई पद्धति जैसे- बौछारी सिंचाई, *ड्रिप* सिंचाई, *बेड प्लांटिंग* इत्यादि को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।
- एक ही तरह की फसलों के प्रयोग से ही एक ही तरह के घातक रसायनों का प्रयोग होता है, जिससे प्रदूषण बढ़ता है। कृषि विविधीकरण करके हम इससे निजात पा सकते हैं।
- अत्यधिक अंधाधुंध असंतुलित उर्वरकों व कीटनाशी रसायनों का प्रयोग भी प्रदूषण के कारण बनते हैं।

उपाय

- उचित मात्रा में कृषि रसायनों का प्रयोग करें।
- नाइट्रोजन के अधिक प्रयोग से नाइट्रेट विषाक्तता होती है। फास्फेटिक उर्वरकों के खड़ी फसल में छिड़काव से फास्फोरस का स्थिरीकरण हो जाता है, जो मृदा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अतः सही मात्रा, सही समय पर सही रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से ही उत्पादन बढ़ेगा व प्रदूषण कम होगा। इसके लिए फास्फेटिक व पोटाशिक उर्वरक का पौधों के जड़ क्षेत्र में *साइड प्लेसमेंट* मशीनों के द्वारा करना चाहिए। नत्रजनधारी उर्वरकों का परिवर्तित रूप धीमा रिहा करने वाले उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए, जिससे नाइट्रेट विषाक्तता कम होती है।
- जैविक कृषि पर जोर देना, जैसे वर्मीकम्पोस्ट, जैव उर्वरकों का प्रयोग, कम्पोस्ट का प्रयोग, एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन, एकीकृत कृषि प्रणाली का प्रयोग करना चाहिए।

"कलियुग जोग न जग्य न ग्याना। एक अधार राम गुन गाना।।
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि।।
सोइ भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माही।।
कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहीं पापा।।"

अर्थात्- "कलियुग में न तो योग और यज्ञ है और न ज्ञान ही है। श्रीरामजी का गुणगान ही एकमात्र आधार है। अतएव सारे त्यागकर जो श्रीरामजी को भजता है और प्रेमसहित उनके गुणसमूह को गाता है, वहीं भवसागर से तर जाता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं हैं नाम का प्रताप कलियुग में प्रत्यक्ष है। कलयुग का एक पवित्र प्रताप (महिमा) है कि मानसिक पुण्य तो होते हैं, पर (मानसिक) पाप नहीं होते"।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

e`nk LokLF; dkMZ % fVdkÅ d`f"k dk e[; vk/kkj

vke çdk'k[1]] vt; dqekj lkg[1]] vf'ouh nÙk ikBd[1]] cã çdk'k[1] ,oa iYyoh ;kno[2]
[1]Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ
[2]pUnzHkkuq xqIr d`f"k LukrdksÙkj egkfo|ky;] cD'kh dk rkykc] y[kuÅ

प्रकृति द्वारा उपहार स्वरूप दिये गए पाँच मुख्य तत्वों, धरती (मृदा), जल (पानी), हवा (वायु), आकाश (आसमान) एवं ऊर्जा (ईधन) में से धरती या मृदा का सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। मृदा जैसे प्राकृतिक संसाधन के बिना मानव, वनस्पति एवं विभिन्न जीव जंतुओं का जीवन असंभव है। मृदा कृषि का मुख्य आधार होने के साथ-साथ मानव जीवन की भी मुख्य आधारशिला है। भगवत गीता में उद्गीत 'अन्नाद् भवन्ती भूतानी' के अनुसार सभी जीव-जंतुओं के लिए अपेक्षित खाद्य पदार्थों (अन्न, दलहन, फल, फूल, सब्जी, चारा) औषधीय वनस्पतियों एवं समुचित निवास का आधार मृदा ही तो है।

मृदा का आशय

पृथ्वी की ऊपरी ठोस परत के ऊपर अलग-अलग कणों एवं आकार वाले स्तर के संगठन को विगठन मृदा कहते हैं। प्राकृतिक संसाधनों के अंतर्गत मृदा का प्रमुख स्थान है। मृदा सम्पूर्ण मानव एवं वनस्पति जगत की आधारशिला है। मानव समाज का उद्भव मृदा से ही हुआ है।

मृदा महत्वपूर्ण क्यों मानी जाती है?

मृदा निम्नलिखित कारणों से अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है:

- सम्पूर्ण खाद्य उत्पादन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मृदा से ही संबन्धित होता है।
- कृषि एवं वनस्पति का उद्भव मृदा से ही होता है।
- मृदा सम्पूर्ण वनस्पति जगत का आधार है।
- पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति का प्राकृतिक स्रोत मृदा ही है।
- जीव जगत के लिए भी मृदा प्राकृतिक आवास है।
- मृदा पोषक तत्वों के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक क्रियाओं का माध्यम है।
- खाद्य पदार्थ की अच्छी गुणवत्ता मृदा पर ही निर्भर करती है। जैसा कि "जैसा बोओगे वैसा काटोगे" नामक कहावत से चरितार्थ होती है। अर्थात मृदा अच्छी होगी तो फसल की गुणवत्ता भी अच्छी होगी, इसी प्रकार यदि मृदा खराब होगी तो उसमें बोई जाने वाली फसल की गुणवत्ता भी खराब होगी।

अतः उपरोक्त बातों से ज्ञात होता है कि मृदा जैसे प्राकृतिक संसाधन की अत्याधिक महत्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है।

दूसरे शब्दों में मृदा को हम धरती माता के नाम से पुकारते हैं। मृदा एक जैविक पिण्ड है इसमें सूक्ष्म जीवों (जीवाणु, फफूँदी और अन्य जीव जन्तु) की असंख्य संख्या वास करती है। हमारे देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग तरह की मृदा पायी जाती है। कृषि में "स्वस्थ्य धरती हरित धरती" जैसा कथन अत्यंत प्रचलित हैं। यह सत्य है कि कृषि उत्पादन के लिए मृदा एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है। इसकी गुणवत्ता में सुधार करने मात्र से ही बेहतर उत्पादन प्राप्त करके किसानों की आय बढ़ाई जा सकती है।

स्वस्थ धरा का आशय

स्वस्थ्य धरा का आशय इस बात से संबन्धित है कि उस मृदा की उर्वराशक्ति किस प्रकार की है। उसमें पोषक तत्वों की मात्रा कितनी उपलब्ध है। मृदा के विभिन्न भौतिक गुण (मृदा वायुसंचार, मृदा ताप, मृदा रंध्रावकाश, जल धारण क्षमता एवं मृदा का रंग) व रासायनिक गुण किस प्रकार के हैं तथा वह जैविक गुणों से परिपूर्ण है अथवा नहीं? मृदा के इन विभिन्न गुणों की जानकारी हेतु मृदा का परीक्षण किया जाता है तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड में उपरोक्त सभी बातों की जानकारी दी जाती है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड का इतिहास

किसानों को उनके खेत की मिट्टी की जांच कराने के बाद मृदा स्वास्थ्य कार्ड को सबसे पहले प्रस्तुत करने वाला देश में गुजरात प्रथम राज्य रहा है। गुजरात में वर्ष 2003-04 में मिट्टी की जांच के लिए लगभग 100 मृदा प्रयोशालाएं स्थापित की गई थीं और मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना का परिणाम काफी संतोषजनक रहा था।

पूरे देश के लिए 'मृदा स्वास्थ्य कार्ड' योजना का आरंभ 19 फरवरी 2015 को देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा राजस्थान के सूरतगढ़ जिले में किया गया था। मृदा स्वास्थ्य कार्ड के लिए उसका घोष वाक्य- "स्वस्थ धरा - और- खेत हरा" है। अगर धरा स्वस्थ नहीं होगी तो खेत हरा नहीं हो सकता है, चाहे खाद कितना भी डाल दें, बीज कितना ही उत्तम से उत्तम बो दें, भले ही खेत को पानी से भरकर रखें, लेकिन अगर मृदा ठीक नहीं है तो अच्छी फसल पैदा नहीं होगी। यदि होगी भी तो अत्यंत कम उपज प्राप्त होती है या कम गुणवत्ता की फसल पैदा होती है।

अगर हम धरती की चिंता करेंगे तो ये धरती हमारी चिंता करेगी। मिट्टी को बचाना ही इस धरा को बचाना है। इस दायित्व को पूरा करने के लिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड एक साकार उपाय है। इसीलिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड का मंत्र है- "स्वस्थ धरा" और जिसका संदेश है- "खेत हरा"। "स्वस्थ धरा, खेत हरा"। किसान भाईयों से आग्रह है कि हर वर्ष या दो वर्षों में एक बार अपने खेत की मिट्टी का परीक्षण अवश्य करवाएं। मिट्टी के टिकाऊ स्वास्थ्य के लिए वैज्ञानिक तौर तरीके अपनाए जाने चाहिए।

क्या है मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना?

भारत सरकार ने मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाने की महत्वाकांक्षी योजना देश के किसानों के लिए बनायी है। इस योजना के अंतर्गत किसानों के खेत के व्यक्तिगत रूप से मृदा स्वास्थ्य की जांच कराने के बाद मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाये जाते हैं जिसके सार्थक परिणाम प्राप्त हो रहे हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड की सहायता से कृषक भाई अधिकाधिक उत्पादन के लिए अपेक्षित पोषक तत्वों तथा उर्वरकों के फसलवार ज्ञान के साथ सुगमता से अपने खेत की मृदा की स्थिति को जान सकते हैं।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड क्या दर्शाता है?

प्राकृतिक धरोहर को स्वस्थ्य रखना आज की महती आवश्यकता हो गयी है। अगर हम अपने देश की मृदा के बारे में चर्चा करें तो देश के अलग-अलग भागों में विभिन्न प्रकार की संरचना व गुणों वाली मृदाएं पाई जाती हैं। इसके लिए मृदा में उपस्थित विभिन्न तत्वों की जांच की जाती है। मृदा जांच करने के बाद प्राप्त परिणामों के आधार पर "मृदा स्वास्थ्य कार्ड" तैयार किया जाता है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड की आवश्यकता क्यों?

मृदा में पोषक तत्वों की कमी के स्तर के कारण कृषि वैज्ञानिक पहले से चिंतित थे। वैज्ञानिकों ने यहाँ तक चेतावनी दे दी थी कि भारत के विभिन्न भागों में फसल उत्पादन काफी कम होने की संभावना है। यदि आवश्यक सुधारात्मक कदम नहीं उठाए गए तो कुछ समय बाद भोजन के लिए खाद्य पदार्थों की कमी हो सकती है। इस बात को ध्यान में रखते हुये मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाने की पहल भारत सरकार ने की तथा देश के किसानों की मिट्टी की जांच का संदेश दिया तथा मृदा की जाँच के लिए निम्न अपील की गयी।

धरती माँगती संतुलित खाद, तत्वों का न हो हास।
धरती मैया का विश्वास, मृदा जांच से पूरी हो ये आस।।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड के मुख्य उद्देश्य

मृदा स्वास्थ्य कार्ड में खेत की जांच के परिणामों के आधार पर किसानों को विभिन्न फसलों के लिए विभिन्न रासायनिक उर्वरकों की संस्तुतियाँ एकीकृत पोषक प्रबंधन, कीटनाशी प्रबंधन, जल प्रबंधन एवं समस्याग्रस्त मृदा के सुधार हेतु मृदा सुधारकों की मात्रा की संस्तुति को मृदा स्वास्थ्य कार्ड के द्वारा किसानों को बताई जाती है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड में दी गई संस्तुतियों के आधार पर किसान भाई लक्षित उपज प्राप्त कर सकते हैं जिससे आर्थिक लाभ में भी वृद्धि हो सकेगी।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अन्य उद्देश्य

- संतुलित मात्रा में उर्वरकों के प्रयोग की जानकारी।
- खेती की लागत को कम करते हुए अधिक आय पर जोर
- टिकाऊ फसल उत्पादन हेतु बेहतर मृदा प्रबंधन पर जोर
- फसल की अधिक पैदावार के लिए फसल विविधीकरण को अपनाया जा सकता है।
- मृदा स्वास्थ्य कार्ड से किसानों को मुख्य पोषक तत्वों, द्वितीयक पोषक तत्वों तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों एवं प्रयोग करने हेतु उर्वरक का फसलवार विवरण मिल जाता है।
- यह कार्ड फसल से अधिक उपज तथा मृदा की टिकाऊ उपजाऊ शक्ति बढ़ाने की सलाह देता है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड में दी जाने वाली जानकारी

मृदा परीक्षण परिणाम के आधार पर मृदा स्वास्थ्य कार्ड के द्वारा किसानों को उनके खेत की मिट्टी की उर्वरता स्तर की जानकारी का विवरण दिया जाता है जो मृदा स्वास्थ्य की जानकारी का मुख्य आधार माना जाता है जिसका विवरण निम्नवत है :

मृदा स्वास्थ्य कार्ड में मृदा उर्वरता सूचकांक के आधार पर फसल उगाने की संभावनाएं

enk mojrk lpdkd	enk ijh{k.k eY;kdu J.kh	Qly gr mi;ärk
0–10	अत्यंत कम	अधिक उपयुक्त
10–25	कम	उपयुक्त
25–50	मध्यम	संभावित
50–100	उच्च	कम संभावित
100 से अधिक	अत्याधिक	मुश्किल

मृदा परीक्षण के बाद मृदा स्वास्थ्य कार्ड में निम्नलिखित तालिका में दिये गए पोषक तत्वों का मृदा उर्वरता सूचकांक यह दर्शाता है कि फसल के उत्पादन के लिए मृदा उर्वरता का स्तर उचित है कि नहीं।

मृदा के पीएच मान के आधार पर मृदा की प्रकृति का निर्धारण

मृदा स्वास्थ्य कार्ड में मृदा पीएच मान की सीमा का वर्णन

Ø- l-	e`nk esa miyC/k iks"kd rRo rFkk vU; xq.kksa dk fu/kkZfjr eku	oxZ		
		fuEu	e/;e	mPp
1	मृदा पी.एच. मान	6 से कम (अम्लीय)	8.6–9.0 (अल्प क्षारीय)	9.0 से कम (क्षारीय)
2	विद्युत चालकता (डैसी साइमन/मी.)	1.0 तक (सामान्य)	1–3	3.0 से कम (हानिकारक)
3	जीवांश पदार्थ (प्रतिशत)	0.5 से कम	0.5–0.75	0.75 से अधिक
4	उपलब्ध नाइट्रोजन (कि.ग्रा./हे.)	250 से कम	250–500	500 से अधिक
5	उपलब्ध फास्फोरस (कि.ग्रा./हे.)	10 से कम	10–25	25 से अधिक
6	उपलब्ध पोटैशियम (कि.ग्रा./हे.)	120 से कम	120–280	280 से अधिक
7	जस्ता (पीपीएम)	0.6 से कम	0.6–1.2	1.2 से अधिक
8	मैंगनीज (पीपीएम)	1.0 से कम	1–2	2 से अधिक
9	लोहा (पीपीएम)	4.5 से कम	4.5–9.0	9.0 से अधिक
10	तांबा (पीपीएम)	0.2 से कम	0.2–0.4	0.4 से अधिक
11	बोरॉन (पीपीएम)	0.5 से कम	0.5–1.0	1.0 से अधिक
12	मॉलिब्डेनम (पीपीएम)	0.2 से कम	0.2–0.4	0.4 से अधिक
13	गंधक (कि.ग्रा./हे.)	12 से कम	12–25	25 से अधिक

विस्तार से किया जाता है जिससे मृदा की प्रकृति के बारे में जानकारी प्राप्त हो जाने के बाद मृदा के प्रबंधन एवं सुधार हेतु मृदा सुधारकों के प्रयोग का सुझाव दिया जाता है जो निम्न तालिका में वर्णित है :

ih&,p eku dh lhek	e`nk dh fdLe
4.0–5.0 तक	प्रबल अम्लीय
5.1–6.0 तक	मध्यम अम्लीय
6.1–6.5	हल्की अम्लीय
6.6–7.5	उदासीन (न अम्लीय, न क्षारीय प्रकृति की मृदा मानी जाती है)
7.6–8.5	हल्की क्षारीय
8.6–9.5	क्षारीय
9.6–10.5	अधिक क्षारीय

प्रबल अम्लीय मृदाओं में 750-800 कि.ग्रा./हे., मध्यम अम्लीय मृदाओं में 450-480 कि.ग्रा./हे., हल्की मृदाओं में 350-400 कि.ग्रा./हे., उदासीन मृदाओं में 150-200 कि.ग्रा./हे. तथा हल्की क्षारीय में 50-80 कि.ग्रा./हे. की दर से चूने को बुवाई से पूर्व खेत में उचित तरह से मिलाने की संस्तुति की जाती है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड के लाभ

- प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित मात्रा में प्रयोग से अधिक पैदावार प्राप्त करके किसानों की उत्पादन लागत में कमी तथा आय में वृद्धि होगी।
- इस योजना के माध्यम से किसानों को मृदा स्वास्थ्य को बेहतर करने में मदद मिलेगी एवं स्वस्थ फसल प्राप्त होगी जिससे किसानों की उन्नति होगी।
- उच्चतर उपज हेतु फसल विविधीकरण को भी अपनाया जा सकता है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनवाने हेतु कहाँ संपर्क करें?

सभी राज्यों में मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराने हेतु भारत सरकार ने 'मृदा स्वास्थ्य कार्ड पोर्टल' बनाया है जो मृदा नमूनों के पंजीकरण से लेकर मृदा नमूनों की जांच के उपरांत किसानों को मृदा स्वास्थ्य की जानकारी देने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। जिसके द्वारा किसानों को समय-समय पर उनके खेतों की मिट्टी के स्वास्थ्य के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्रदान की जा रही है।

मृदा स्वास्थ्य परीक्षण एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना का लाभ किसानों तक पहुँचाने का तरीका

वर्तमान समय में पूरे देश के प्रत्येक जिले में यह सेवा किसानों को दी जा रही है। यह सेवा दो रूपों में संचालित की जा रही है :

- **पहली सेवा :** "सचल मृदा परीक्षण प्रयोगशाला" के माध्यम से सीधे दूरवर्ती गाँवों में रह रहे किसानों के खेत पर ही जाकर उनके खेतों की मृदा परीक्षण कर किसानों को लाभ पहुँचाया जा रहा है।
- **दूसरी सेवा :** स्थायी मृदा परीक्षण प्रयोगशाला देश के सभी राज्यों के सभी जिलों में एक या एक से अधिक मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएँ स्थापित करके उनके खेत की मिट्टी की जाँच करके उनके खेत का मृदा स्वास्थ्य कार्ड तैयार करके किसानों को लाभ पहुंचाया जा रहा है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड के द्वारा दी जाने वाली जानकारियां एवं समस्याओं का समाधान

मृदा परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर मृदा स्वास्थ्य कार्ड में मृदा गुणों की व्याख्या द्वारा किसानों को मृदा के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक गुणों के बारे में जानकारियाँ एवं सुझाव दिये जाते हैं। गंधक, जस्ता तथा बोरॉन जैसे पोषक तत्वों की कमी फसल की उत्पादकता में गिरावट का मुख्य कारण बनती है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड बन जाने से उसमें दी गयी जानकारी एवं सुझावों के आधार पर विभिन्न पोषक तत्वों एवं मृदा सुधारकों की उचित मात्रा का प्रयोग करने से मृदा की उर्वरा शक्ति के प्रबंधन के साथ-साथ फसल उत्पादन बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Lojktxkj l'tu gr| dj| oehdEikLV mRiknu

ujUn| flg
df"k foKku dUn] uxhuk] fctukj

अत्याधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से प्रभावित हुई भूमि की प्रकृति को सुधारने एवं गुणवत्तायुक्त उत्पादों की प्राप्ति एवं जैविक उत्पादों की सफलता में 'वर्मीकम्पोस्ट' की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जा रही हैं। यह कम्पोस्ट केचुओं के माध्यम से तैयार किया जाता हैं। परंपरागत खेती में केचुओं की भूमिका भूमि में वायु संचार एवं उपयोगी पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिहाज से महत्वपूर्ण थी, परन्तु आधुनिक खेती में जहरीले रसायनों के प्रयोग के परिणामस्वरूप इन केचुओं की उपस्थित लगभग नगण्य हो गयी। एक बार फिर इन केंचुओं की सहायता से कृषि की दिशा-दशा में सकारात्मक बदलाव लाने के प्रयास जारी हैं। यू तो केंचुओं की लगभग तीन सौ प्रजातियां पायी जाती हैं परन्तु 'वर्मीकम्पोस्ट' निर्माण में मुख्यतः इपीजेइक (जमीन की सतह पर रहने वाले) केचुओं की यूड्रियल यूजेनी, आइसोनिया, फोटिडा एवं पारियोनिक्स आदि प्रजातियां उपयोगी होती हैं। इनमें से आइसीनिया फोटिडा प्रजाति वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन हेतु विशेष रूप से प्रयोग में लायी जाती है। यह प्रजाति कम समय में अपनी संख्या में अधिकतम विस्तार करती है तथा यह तापमान के बदलाव को भी सहन कर सकती है। इस प्रकार केचुओं की विशेष प्रजाति के माध्यम से वर्मीकम्पोस्ट बनाने की कई सहज एवं सरल विधियां हैं।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधि

वर्मीकम्पोस्ट तैयार करने में कृषिजनित अपशिष्टों, जंगल से प्राप्त अवशेषों, खरपतवार, सब्जी मण्डी के कचरे एवं सड़ने योग्य सभी कूड़े में गोबर मिलाकर उसमें विशेष प्रजाति के केंचुओं को डाल देने से लगभग साठ दिन बाद वर्मीकम्पोस्ट तैयार हो जाता हैं। कम्पोस्ट की निर्माण प्रक्रिया में सबसे पहले छायादार एवं नमी युक्त स्थान की पहचान करते हैं जहाँ लगभग 10 से.मी. ऊँचे स्थान पर 30 से 40 से.मी. की दूरी पर 4-5 फीट चौड़ाई एवं आवश्यकतानुसार लम्बाई में चबूतरे तैयार करते हैं। इन चबूतरों के चारों ओर एक-एक ईंट का घेरा बना देते हैं अब इन चबूतरों पर मोटी प्लास्टिक की चादर बिछाकर गोबर एवं फसल अवशेषों को बराबर मात्रा में मिलाकर दो-तीन फीट की ऊँचाई तक बिछा देते हैं इसके बाद पानी का छिड़काव कर इसकी नमी लगभग 40 प्रतिशत निर्धारित कर जूट की पुरानी बोरियों से इसे ढक देते हैं।

15-20 दिनों तक गोबर एवं फसल अवशेषों के मिश्रण को यूं ही रखते हुए समय समय पर पानी का छिड़काव करते हैं। जब गोबर एवं कचरों का तापमान सामान्य हो जाए तो उसकी ऊपरी सतह पर लम्बाई में 10 से.मी. का गढ्ढा बनाकर प्रति मीटर लम्बाई 1000 केचुओं को छोड़कर गढ्ढे को भरने के बाद पानी का छिड़काव कर उसे फिर से बोरियों की सहायता से ढक देते हैं। केचुओं को स्थापित करने के 15 दिन बाद ढकी गई बोरियों को हटाकर ऊपरी सतह को हवादार बनाते हैं। ऐसा करने से उसमें केचुओं को हवा की पर्याप्त मात्रा सुलभ होती रहती हैं जिससें इनकी विकास प्रक्रिया सहज हो जाती है। इसके बाद एक बार फिर बोरियों को गीलाकर उसे ढ़क देते हैं। इस प्रक्रिया में गोबर एवं कचरों के ढेर धीरे-धीरे सड़ने-गलने शुरू हो जाते हैं जो 60-70 दिन बाद पूर्णतया सड़कर कम्पोस्ट के रूप में परिणित हो जाते हैं। तैयार वर्मीकम्पोस्ट को मोटी छलनी से छान कर छायादार स्थान में एकत्रित कर लेते हैं।

पोषक तत्वों की मात्रा

वर्मीकम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा इस बात पर निर्भर करती हैं कि वर्मीकम्पोस्ट किस जैविक पदार्थ से बनाया गया हैं। पोषक तत्वों की मात्रा सामान्य कम्पोस्ट से अधिक होती हैं। इसके अतिरिक्त, विटामिन, एंजाइम, हारमोन्स आदि भी पाये जाते हैं।

कम्पोस्ट की प्रयोग मात्रा

खाद्यान्न फसलों में 5-6 टन प्रति हेक्टेयर, फलदार वृक्षों में आवश्यकतानुसार 1-10 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष, सब्जी फसलों में 10-12 टन प्रति हेक्टेयर

निर्माण संबन्धी सावधानियाँ

कम्पोस्ट निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले केंचुए नमी की कमी एवं इसकी अधिकता के प्रति संवेदनशील होते हैं। अतः कम्पोस्ट के निर्माण के दौरान आवश्यक नमी की अनिवार्यता महसूस की जाती हैं। वहीं दूसरी ओर नमी की अधिकता भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है। कम्पोस्ट बनाते समय मुर्गी, चूहे एवं दीमक आदि से ढेर को बचाएं। यदि दीमक अथवा अन्य कीटों का प्रकोप हो तो नीम से बने कीटनाशक का प्रयोग निर्देशानुसार करें। कम्पोस्ट बेड पर ताजे गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए। चूंकि इनमें तापमान की अधिकता होती हैं। अतः इनसे केंचुओं के मरने की सम्भावना रहती हैं।

आर्थिक लेखा जोखा

वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग भूमि की प्रकृति सुधारने एवं गुणवत्तायुक्त उम्पादन में जहां एक ओर सहायक हैं वही दूसरी ओर इसकी निर्माण प्रक्रिया को स्वरोजगार से भी जोड़ा जा सकता हैं। एक अनुमान के अनुसार 22 मीटर लम्बे एवं 22 मीटर चौड़े छायादार स्थान में वर्ष भर में लगभग 120 टन खाद तैयार की जा सकती हैं। वर्मीकम्पोस्ट के वर्तमान मूल्य ₹ 2 प्रति कि. ग्रा. की दर से बिक्री के आधार पर प्रति वर्ष ₹ 1-1.25 लाख तक की आमदनी सम्भव है।

वर्मीकम्पोस्ट के लाभ

इसके प्रयोग से मृदा के सूक्ष्मजीव सक्रिय होकर पौधों को विशेष पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं, जिससे उनमें प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता हैं। इसके प्रयोग से कूड़े के निस्तारण की समस्या भी दूर होती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

cgQlyh df"k i.kkyh e ,yhykiFkh dk iHkko ,o mldk fujkdj.k

lR;e pkfjgk] vkfnR; dekj flag] ujUn flag ,o /khjUn dekj
df"k foKku dUn] xuhok] fp=dV

आजकल देश की बढ़ती हुयी जनसंख्या को भोजन की आपूर्ति हेतु मुख्य स्रोत कृषि तथा कृषकों के द्वारा बहुफसली खेती में एक या दो फसलों के बजाय भूमि का सघन रूप में प्रयोग करके साल भर में तीन-चार फसलें उगाई जा रही हैं। हमारे देश में बहुफसली खेती करने में मुख्य समस्या सिंचाई का निम्न स्तर तथा दीर्घकालीन प्रजातियों का बहुतायत होना है। अतः बहुफसली खेती को अब इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है। मृदा उर्वरता को नष्ट किए बिना साल भर एक ही खेत में दो या दो से अधिक फसलों का उत्पादन करना बहुसस्यन कहलाता है।

अंतरासस्यन : एक ही खेत में एक ही साथ दो या दो से अधिक फसलों को एक निश्चित दूरी पर या एक निश्चित अनुपात में उगाने की कृषि कला को अंतरासस्यन कहते हैं। जैसे- गेहूँ और सरसों 9:1।

मिश्रित सस्यन : जब किसी खेत में दो या दो से अधिक फसलें बिना किसी पंक्ति विन्यास या अनुपात के साथ उगाई जाती हैं तब उसे मिश्रित सस्यन कहते हैं। इस तरह के सस्यन में बीज की बुआई छिटकवाँ विधि से करते हैं।

सतत् सस्यन : किसी खेत में एक वर्ष में दो या दो अधिक फसलों को शीघ्र क्रम में उगाना सतत् सस्यन कहलाता है। ऐसे सस्यन में पहली फसल के कटते ही दूसरी फसल की बुवाई कर दी जाती है। अर्थात् अगामी फसल की बुवाई तथा पूर्ववर्ती फसल की कटाई एक शीघ्र क्रम में होती है। जैसे- मक्का की कटाई के बाद मूँगफली लगाना और इसकी खुदाई के बाद मिर्च लगाना सतत् सस्यन का एक उदाहरण है।

असतत् सस्यन : ऐसे सस्यन में पूर्ववर्ती फसलों के कटने के पहले ही आगामी फसल को लगा दिया जाता है लेकिन इसमें दोनों फसलों में प्रतियोगिता न्यूनतम् हो इसमें आगामी फसल की बुवाई पूर्ववर्ती फसल की कायिकी परिपक्वता के बाद ही करनी चाहिये।

एक तरफ जहाँ बहुसस्यन प्रणाली में एक वर्ष में दो या दो से अधिक फसलों को एक ही खेत में उगाया जाता है वहीं कुछ हानिकारक प्रभाव भी फसलों पर पड़ते हैं जो निम्नलिखित हैं :

एनीडेशन : अन्तरासस्यन के अन्तर्गत उगाए जाने वाली फसलों के बीच पूरक अन्तर क्रिया को *एनीडेशन* कहते हैं। अंतरासस्यन में एक पौधे का प्रभाव दूसरे पौधे पर निश्चित रूप से पड़ता है। यह स्थान और समय दोनों आयामों में होता है।

स्थानीय *एनीडेशन* : जब अंतरासस्यों के फलक विभिन्न उद्रग तहों में होते हैं तब इनके बीज पूरक क्रियाओं को स्थानीय *एनीडेशन* कहते हैं। ऐसे अन्तरासस्यों के फलक, पत्तियाँ अलग-अलग उद्रग स्तर बनाते हैं। ऊँचे पौधों की पत्तियाँ सबसे अधिक ऊँचाई पर होती हैं जिनमें अधिक धूप सहन करने की क्षमता होती है। इस प्रकार एक फसल दूसरी फसल को सहायता प्रदान करती है। बहुस्तरीय सस्यन इसी सिद्धान्त पर आधरित है।

सामयिक *एनीडेशन* : परिपक्वता काल में विशेष अंतर वाले अंतरासस्यों के बीच पूरक अंतर क्रिया को सामयिक *एनीडेशन* कहते हैं। यद्यपि ऐसे अंतरासस्यों के पोषक तत्व एवं प्रकाश की माँग भिन्न हो। जैसे- आलू एवं अरहर।

एलीलोपैथी : फसलों के बीच की अंतर क्रिया दूसरे तरह से भी होती है। जैसे पौधों के द्वारा रसायनों का स्राव किसी एक फसल के द्वारा छोड़े गये रासायनिक पदार्थ का दूसरी फसल पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पड़ने वाला हानिकारक प्रभाव, *एलीलोपैथी* कहलाता है। यह हानिकारक प्रभाव प्रायः एक पौधे की जड़ द्वारा छोड़े गये रासायनिक पदार्थ का किसी प्रजाति के अवशेष सड़ने से उत्पन्न होता है। यह सम्बन्धित पौधे के अंकुरण, वृद्धि, विकास को प्रभावित करता है। इसी कारण कुछ फसलें अंतरासस्यन के लिए अनुकूल नहीं होती है। जैसे सूरजमूखी आगामी फसलों के अंकुरण को रोक देता है। सूर्यमूखी का अवशेष सड़ने के दौरान, एलीला (रसायन) उत्पन्न करता है इसलिए सूर्यमूखी की कटाई एवं आगामी फसल के बुआई के बीच 15 से 20 दिन का अंतराल रखा जाता है। ऐसा करने से आगामी फसल को दो तरह से लाभ पहुँचता है

- आगामी फसल सूर्यमुखी के एलीलोपैथी प्रभाव से बच जाती है।
- सूर्यमुखी अवशेष के तीव्र सड़न से मृदा में नाइट्रोजन का खनिजीकरण हो जाता है।

एलीलोपैथी के प्रकार

सत्य एलीलोपैथी : हानिकारक पदार्थ किसी पौधे से उसी अवस्था में निकलता है जिस अवस्था में वह दूसरे फसल पर हानिकारक प्रभाव डालता है। उसे सत्य एलीलोपैथी कहते हैं।

कार्यात्मक एलीलोपैथी : ऐसे एलीलोपैथी में हानिकारक पदार्थ पूर्वावस्था में निकलता है जो बाद में कुछ सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा क्रियाशील हानिकारक पदार्थ में बदल जाता है। एलीलोपैथी; दो प्रकार के प्रभाव दिखाता है।

परसंदमन : किसी एक प्रजाति द्वारा स्रावित रासायनिक पदार्थ पौधे की दूसरी प्रजाति पर हानिकारक प्रभाव डालते हैं लेकिन स्वयं अपने पर नहीं, इसे परसंदमन कहते हैं।

स्वसंदमन : किसी पौधे द्वारा स्रावित रासायनिक पदार्थ स्वयं उसी पौधे पर हानिकारक प्रभाव डालता है, इसे स्वसंदमन कहते हैं।

एलीलो रसायन : ऐसा रासायनिक पदार्थ जो एलीलोपैथी प्रदर्शित करता हो, एलीलो रसायन कहलाता है। एलीलो रसायन की मात्रा एवं प्रकार पौधे की अनुवंशिकी संरचना तथा वातावरण पर निर्भर करता है। बहुधा पौधे अपनी जड़ से कार्बनिक पदार्थों का स्राव करते हैं। लेकिन इनमें से कुछ एलीलो रसायन की तरह अपने आस-पास उगी प्रजाति की वृद्धि को रोक देते हैं। जैसे- अखरोट, खीरा एवं नाशपाती की जीवित जड़ें कुछ ऐसे ही एलीलो रसायन का स्रावित करती हैं। कुछ ऐसा रसायन पौधे के वायुवीय भाग से स्रावित होता है और वर्षा की बूदों एवं गिरती पत्तियों या कीटों के द्वारा धरातल पर पहुँच कर नीचे उग रहे पौधों की वृद्धि को रोक देता है। जैसे यूकेलिप्टस की पत्तियों से स्रावित रसायन, सरसो के बीजों के अंकुरण को बुरी तरह से प्रभावित करता है। जब तोरिया के बीजों की बुवाई उक्त पेड़ के नीचे की जाती है, कुछ पौधों के अवशेष सड़ने से भी ऐसे रसायन उत्पन्न होते हैं जिसका हानिकारक प्रभाव आगामी फसल पर पड़ता है। जैसे सूर्यमुखी के डण्ठल को बिना जुताई वाले ज्वार के खेत में मल्च के रूप में डालने पर ज्वार की वृद्धि रूक जाती है। इसके विपरीत किसी पौधे के द्वारा उत्पन्न हार्मोन्स जैसे पदार्थ का लाभदायक प्रभाव दूसरे पौधे पर पड़ सकता है। जिसे ऋणात्मक एलीलोपैथी कहा जा सकता है। लेकिन दलहन की जड़-गांठों से दूसरे पौधों को नाइट्रोजन मिलना ऋणात्मक एलीलोपैथी नहीं कहलाता।

कपास प्रभाव : कपास की जड़ें मृदा की निचली तहों में जाकर वहां के पोषक तत्वों का उपयोग करती हैं और साथ ही पोषक तत्वों की कम मात्रा अपने उपयोग में लाती हैं। आगामी फसल भूमि की ऊपरी सतहों के पोषक तत्वों का उपभोग करती हैं। अतः आगामी फसल पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता। इसे ही कपास प्रभाव कहते हैं।

ज्वार प्रभाव : तीव्र वृद्धि करने वाली धान्य फसलें मिट्टी का भरपूर दोहन करती हैं और इसके अधिक सी.एन. अनुपात वाले डण्ठल तथा अवशेषों को सड़ने में भी ज्यादा वक्त लगता है। सड़न प्रक्रिया के क्रम में मृदा नाइट्रोजन का कुछ भाग सड़न में कार्यरत सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा अपने विकास हेतु ग्रहण कर लिया जाता है। जिससे मिट्टी में तत्क्षण नाइट्रोजन की कमी हो जाती है। इसे स्थरीकरण कहते हैं और आगामी फसल को शुरूआती दौर में नाइट्रोजन की कमी से गुजरना पड़ता है। इसके सबसे अच्छा उदाहरण ज्वार है। *'सौरघम इफ़ैक्ट'* कम उर्वर मिट्टी में ज्यादा देखने को मिलता है। रागी इसका अपवाद है। क्योंकि इसका अवशेष तुरंत सड़ जाता है। ज्वार प्रभाव से बचने के लिए आगामी फसल में प्रथम बार उर्वरक डालने के क्रम में 25 प्रतिशत अधिक नाइट्रोजन डालना चाहिए। जिससे सड़न प्रक्रिया तीव्र हो सके।

दलहन प्रभाव : दलहनी फसलों की जड़ की गांठें एवं अवशेष सड़ने पर मिट्टी में नाइट्रोजन उपलब्ध कराती हैं तथा दलहन मृदा फास्फोरस को अवशोषित कर उसे कार्बनिक फास्फोरस में बदलता है। इस प्रकार अकार्बनिक फास्फोरस को कार्बनिक फास्फोरस में बदलकर दलहन मृदा फास्फोरस के अघुलनशील रूप को भी आगामी फसल के लिए उपलब्ध कराता है। धान्य फसलों की अपेक्षा दलहन की जड़ों में धन आयन विनिमय क्षमता अधिक होती है। जिससे यह द्विआवेशित धन आयन जैसे Ca^{++} एवं Mg^{++} का अवशोषण अधिक करते हैं, जबकि धान्य फसलें एवं दलहन फसलों में प्रतियोगिता नहीं के बराबर होती है। ज्यादातर दलहनी फसलों में कुछ छाया भी बर्दाश्त करने की क्षमता होती है। इन्हीं सब कारणों से किसी भी फसल चक्र एवं सघन प्रणाली में दलहन फसलों का समावेश आवश्यक होता है।

एलीलोपैथी प्रभाव को कम करने हेतु प्रमुख बिन्दु

- खाद्यान्न फसलों के बाद ली जाने वाली फसलों में प्रथम बार उर्वरक डालने के क्रम में 25 प्रतिशत नाइट्रोजन की मात्रा अधिक डालनी चाहिए।
- फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश करना चाहिए।
- फसलों के बीच उगने वाले खरपतवारों को खेत से निकाल देना चाहिए।
- फसलों की मल्चिंग के समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि जो अवशेष हम मल्च के लिए उपयोग कर रहे हैं उसका कोई हानिकारक प्रभाव उस फसल में न हो।

बहुफसली कृषि प्रणाली में एलीलोपैथी का प्रभाव एवं निराकरण में जहां एक तरफ बहुफसली कृषि प्रणाली लाभदायक है वहीं दूसरी तरफ इससे कई नुकसान हैं। अतः अब हम अपनी सूझ-बूझ या नवीनतम तकनीक को अपनाकर एलीलोपैथी प्रभाव को कम कर सकते हैं तथा इससे होने वाली हानि से बच सकते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

lefor ihMd i{kh çcU/ku fof/k }kjk d`f"k mit dk gkfudkjd if{k;ksa ls cpko

;hrs'k dqekj[1] vfHk"kd dqekj flag[2] iadt Hkkxo[1] ,oa vuqfç;k pæakdj[3]
[1]bfUnjk xka/kh d`f"k fo'ofo|ky;] jk;iqj
[2]Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ
[3]tokgjyky usg: fo'ofo|ky;] fnYyh

किसी भी पीड़क पर नियंत्रण पाने हेतु लगातार प्रयास की आवश्यकता होती है, आज के दौर में जहां जनसंख्या तेज गति से बढ़ रही है, वहीं दूसरी ओर खाद्यान्न आपूर्ति में कमी आ रही है। अतएव हमें जरूरत है कि हम कृषि उत्पादन में वृद्धि का प्रयास करें। इस हेतु हमारा मुख्य प्रयास यह होना चाहिए कि हम अपने खाद्यान्नों को पीड़कों के प्रकोप से बचा सकें। इन पीड़कों में पक्षियों जैसे हानिकारक पीड़क भी हैं जो हमारे कृषि उत्पाद को भारी मात्रा में क्षति पहुंचाते हैं। अतः इन हानिकारक पक्षियों का नियंत्रण किसी एक उपाय से न करके अपितु, हमें समाकलित प्रबंधन उपायों का प्रयोग पीड़क पक्षियों के नियंत्रण में करना चाहिए। समाकलित नियंत्रण उपायों को यहाँ हम दो भागों में बाटेंगे:- 1. रसायन रहित पीड़क पक्षी नियंत्रण उपाय 2. रसायन द्वारा पीड़क पक्षियों का नियंत्रण।

रसायन रहित पीड़क पक्षी नियंत्रण के उपाय

इस प्रकार के नियंत्रण उपायों में ऐसे उपाय शामिल किए जाते हैं जो पर्यावरण के लिए सुरक्षित हों अर्थात जो पर्यावरण मित्र हों। ये निम्नलिखित हैं :

फंदा और जाल में फाँसना: इस विधि में पक्षियों को फाँसने के लिए विभिन्न प्रकार के फंदों का उपयोग किया जाता है जैसे कि *''फ्लड लाइट ट्रैप''* और 'डिकोय ट्रैप'' अत्यधिक प्रचलित फंदे हैं।

फ्लड लाइट ट्रैप (पांश) का निर्माण सयुंक्त राष्ट्र मत्स्य व वन्यजीव विभाग द्वारा वर्ष 1950 में किया गया था। इस ट्रैप में एक शंकवाकार जालीदार निकास द्वार होता हैं तथा ट्रैप के शामियाने के बगल में ही *फ्लड लाइट* को पक्षियों के बसेरों की ओर निर्देशित करके स्थापित कर दिया जाता है। रात्रिकाल के समय *फ्लड लाइट* को चालू कर दिया जाता है तथा पक्षियों के बसेरों की दूसरी तरफ से खूब सारे लोगों की मदद से पक्षियों को *फ्लड लाइट* के प्रकाश की ओर उड़ाया जाता है, जिससे पक्षी प्रकाश की ओर आकर्षित होते हैं व ट्रैप के अंदर फँस जाते हैं।

डिकोय ट्रैप, 3 मीटर लम्बी, 3 मीटर चौड़ी व 2 मीटर ऊँची एक वृहद ट्रैप होती है, जिसके अंदर कुछ पक्षियों को अनाज व जल के साथ स्थापित कर दिया जाता है, ताकि अन्य पक्षी भी इस प्रपंच की ओर आकर्षित हो सके। इस प्रपंच के प्रभाव से आखिरकार पक्षी अपने पंख को सिकोड़कर इसके अंदर प्रवेश कर फँस ही जाते हैं। रॉयल (1969) को इन फन्दों के उपयोग से 7.6 से 8.7 पक्षी पकड़ने का औसत दर मिला। वैसे तो विभिन्न प्रकार के पक्षियों को फाँसने के लिए अलग-अलग प्रकार के फंदों का प्रयोग होता है, विशेषतः गौरैया, मैना और कबूतर के लिए अलग-अलग

चित्र 1: शंकन प्रवेश द्वार वाला पक्षी ट्रेप

चित्र 2: बोंब प्रवेश द्वार वाला पक्षी ट्रेप

प्रकार के ट्रैप मौजूद हैं। इन ट्रैपों में दो प्रकार के प्रवेश द्वार का उपयोग होता है, शंकु/फनल के आकार का प्रवेश द्वार (चित्र 1) व बोंब के आकार का प्रवेश द्वार (चित्र 2)। शंकु/शंकन प्रवेश द्वार में पक्षियों का प्रवेश आसान होता है परंतु निकास कठिन हो जाता है। बोंब प्रवेश द्वार में ऊर्ध्वाधर छड़ ही बोंब कहलाता है। इसकी विशेषता यह है कि पक्षी इसमें आसानी से प्रवेश हो जाते हैं परंतु इन्हें बाहर निकलने में परेशानी महसूस होती है अर्थात वे बाहर नहीं निकल पाते।

आस्ट्रेलियन क्रो-ट्रैप (आस्ट्रेलियन कौआ पांश) (चित्र 3) को उपयुक्त प्रकार से परिवर्तित करके तोता तथा गौरैया को फॉंसने के लिए पाकिस्तान के कृषि प्रक्षेत्रों में प्रयोग किया गया, जिसे इन्होंने *''पैरो-ट्रैप''* नाम दिया। इस ट्रैप को फसल पकने की अवस्था में स्थापित करें तथा इनको पक्षियों के बैठने के पसंदीदा स्थान व उनके बसेरों के पास स्थापित कर सकते हैं। इस ट्रैप में प्रलोभक के रूप में ताजा फल या बाजरा के बीज उपयोग कर सकते हैं।

चित्र 3: *आस्ट्रेलियन क्रो-ट्रैप*

जाल का उपयोग: इस विधि में विभिन्न प्रकार के जालों (चित्र 4) जैसे- नायलॉन जाल, मछली पकड़ने का जाल, प्लास्टिक के अल्ट्रावॉयलेट स्थिरीकारक जाल इत्यादि का उपयोग किया जाता है। इसमें जाल को फसल के ऊपर तारों, डण्डियों व रस्सियों की मदद से फैला देते हैं। जिससे कि यह जाल पक्षियों के प्रवेश को अवरूद्ध कर देते हैं। मुख्यता 2.0 से 2.5 वर्ग सेंटीमीटर से 4×6 वर्ग सेंटीमीटर की मेश का जाल उपयुक्त होता है। स्टके (1973) के अनुसार ये अविषाक्त, ध्वनि रहित, पुनर्उपयोग और शत्-प्रतिशत प्रभावी होता है। इसके स्थापन में अत्यधिक खर्च आता है इसलिए इसे मुख्यतः अधिक आर्थिक महत्व की फसलों, फलों की फसलों जैसे-अंगूर, चेरी इत्यादि, शोधकार्य में लगी फसलों और बीज गुणन के लिए लगाई गई फसलों में कर सकते हैं।

चित्र 4: जाल के प्रयोग से पक्षियों को फसल से दूर रखना

बिजली के तारों का उपयोग: उन स्थानों पर जहाँ पक्षियों की समस्या अत्यधिक होती है वहाँ कभी-कभी हम बिजली के तारों का एक जाल खींच देते हैं। इन तारों में एक नियंत्रित आवेश की बिजली प्रवाहित की जाती है, जिससे कि जब इन पर पक्षी बैठते हैं तो उन्हें बिजली के हल्के झटके लगते हैं जिससे कि पक्षी उन स्थानों से दूर भाग जाते हैं।

कृषिगत् क्रियाएं/सस्य विधियां: बुवाई उपरांत यदि बीजों को अच्छी तरह से मिट्टी से ढक दिया जाए तो बोए हुए बीज काफी हद तक पक्षियों से सुरक्षित हो जाते हैं। यद्यपि बीजों की बुवाई हम गहरी (चित्र-5) भी कर सकते हैं या बुवाई के समय में बदलाव कर सकते हैं या फिर प्रलोभक फसलों की बुवाई कर सकते हैं। जैसे कि, कुछ वैकल्पिक पोषक फसलों की बुआई करने से पक्षी इनकी ओर आकर्षित हो जाते हैं तथा मुख्य फसल पक्षियों की हानि से बच जाती है। वैकल्पिक पोषक पौधों में जैसे-जंगली फल या सूरजमुखी के बीज को खेतों के बाड़े में चारों ओर लगा देते हैं, जिससे कि पक्षियों का ध्यान मुख्य फसल की ओर नहीं जाता।

चित्र 5: बीज की गहरी बुवाई

इन सब के अतिरिक्त, फसलों के पौधों में ऐसी आकारिकी संबंधी संरचनाएं पाई जाती हैं, जो इन्हें पक्षियों के प्रकोप से बचाती हैं, जैस-भुट्टे पर चढ़ा हुआ आवरण, भुट्टे पर दानों की रचना, बाजरे के भुट्टों पर बिछी पुंकेसरों की एक सतह, बड़े आवरण (ग्लूम), ज्वार में भुट्टों का खुला अथवा बंधा होना, इसके अतिरिक्त, ज्वार के लाल दाने वाले भुट्टों को पक्षियों द्वारा कम क्षति पहुँचायी जाती है।

प्राचीन समय में फसलों को पक्षियों से बचाने हेतु बीजों को धतूरा व *हेलीबोरस* के पौधों से उपचारित किया जाता था जिससे कि पक्षी बोए हुए बीजों का भक्षण नहीं करते थे।

फसल की प्रतिरोधी किस्मों का भी उपयोग बुवाई में कर सकते हैं, ये किस्में पक्षियों के लिए प्रतिरोधी होती हैं जिससे

हमारी फसल पक्षियों के प्रकोप से बच जाती है। यहाँ विभिन्न फसलों के कुछ ऐसे उदाहरण दिए जा रहे हैं जिन किस्मों में कबूतर, तोते और गौरैया का प्रकोप बहुत कम होता है। कुछ फसलों की किस्में इस प्रकार हैं :

- बाजरा-एम.बी.एच. 110, एम.एच. 38, एम.एच. 88, पी.एच. बी. 14, 23 डी. 2×356
- ज्वार-बर्ड गो, ए.के.एस. 614, जी.ए. 615, एस.गर्ल.एम. आर. 1, बी.आर. 62

प्रायः पाया गया है कि ज्वार की जिन किस्मों में टैनिन की मात्रा अधिक होती है, उसे पक्षी कम पसंद करते हैं। जिन ज्वार की किस्मों में ऑन अधिक होता है उन्हें पक्षी कम नुकसान पहुंचाते हैं। बर्न्स (1971) के अनुसार गहरे भूरे रंग के ज्वार के बीजों को पक्षी कम खाते हैं क्योंकि इन बीजों में टैनिन व फिनॉलिक यौगिकों की मात्रा अधिक होती है।

- गेहूँ- एस. 1982, सोनालिका, एन.पी. 710
- धान- सी. 6024, एम.टी.यू. 3626
- सूर्यमुखी- सूर्यमुखी की फसल को मुख्य रूप से पक्षियों द्वारा ही क्षति पहुँचाई जाती है। सर्वप्रथम हमें सूर्यमुखी की ऐंसी किस्मों का चयन करना चाहिये जिनका पुष्पमुख परागण के उपरान्त तुरन्त ही नीचें की तरफ झुक जाएं, जिससे कि तोता को बीज चुगने में समस्या होती है और सूर्यमुखी की फसल तोते के प्रकोप से बच जाती है। ग्रॉस एवं हेन्जेल (1991) के अनुसार सूर्यमुखी के फूल जिनके हेड का आकार अवतल, मोटी रेशेदार भूसा तथा हल्स में अत्यधिक मात्रा में ऐंथोसायनिन उपस्थित हो, भूसा लंबी हो, लंबी हरित दल से हेड तथा तने के बीच की दूरी 15 सेंटीमीटर हो तथा हेड की दिशा जमीनी सतह की ओर हो, ऐसे सूर्यमुखी की किस्में पक्षियों के लिए प्रतिरोधी होती हैं। भारत में सूर्यमुखी की कुछ किस्में जो पक्षियों के लिए प्रतिरोधी हैं इस प्रकार हैंः- सी.ओ.एल., इण्डिया 0992, एम. ए.एफ.एफ. 0028, ए.पी.एस.एच. 11, मॉडर्न, ई.सी. 68415।

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचलों में कुछ किसान सूर्य किरण परावर्तक झिल्लियों (चित्र 6) का प्रयोग सूर्यमुखी की फसल में तोता के नियंत्रण हेतु करते हैं। इस प्रकार की झिल्लियाँ बाजारों में बहुत ही सस्ते दामों पर मिल जाती हैं। इन चमकीली झिल्लियों को सूर्यमुखी की फसल के ऊपर खण्डों में लपेट देते हैं अर्थात इन झिल्लियों को फसल के ऊपर 2-3 वर्ग मीटर के क्षेत्र में एक ऊपरी आवरण के रूप में फैलाकर लपेट देते हैं। इस तरह से इन झिल्लियों के आवरण को खेत में जगह-जगह फैलाकर आच्छादित कर देते हैं और साथ ही साथ उसके ऊपर एक से दो सजीव तोते का खिलौने लटका देते हैं। इस पूरे प्रक्रम का सिद्धांत यह है कि जब तोता उड़ते हुए, खेतों में दिन के समय सूर्यमुखी का बीज चुगने आते हैं तो दिन में सूर्य की पीली किरणें इन झिल्लियों से टकराकर परावर्तित हो जाती हैं और ये दृश्य जब तोते को दिखाई देता है तो उसे लगता है कि फसल में आग लग गयी है तथा उस स्थान पर लटके हुए उल्टे सजीव तोते के खिलौने को देखकर वे सोचते हैं कि ये तोते आग से झुलसकर मर गए हैं और तोते का झुण्ड उस खेत से पलायन कर जाता है। याद रहे कि यह प्रक्रिया सूर्यमुखी की फसल में परागण के उपरांत ही अपनानी चाहिए अन्यथा परागण के ठीक तरह से न होने पर उपज में कमी आ सकती है।

चित्र 6: सूर्य किरण परावर्तक झिल्लियों द्वारा फसल की पक्षियों से बचाव

कृषि कैलेंडर में की जाने वाली कृषि क्रियाओं के समय में फेरबदल करने से भी पक्षियों द्वारा होने वाले क्षति दर में कमी आती है। स्कॉटलैंड में फियरे और उनके साथियों ने 1988 में पाया कि जौ और जई की शीघ्र व देर में की गई बुवाई पक्षियों द्वारा ज्यादा क्षतिग्रस्त होती है। इसकी तुलना में निश्चित फसल बुवाई समय में की गई बुवाई कम क्षतिग्रस्त होती है। इसका कारण यह है, कि निश्चित समय में बुआई करने पर पक्षियों के पास भोजन के लिए बड़े क्षेत्र होते हैं, इसलिए एक फसल में क्षति कम हो जाती है जबकि अनिश्चित समय में बुवाई की गई फसलों में कम क्षेत्र में भोजन उपलब्ध होने से उसमें क्षति अत्यधिक होती है। श्रीहरि और चक्रवर्ती ने 1998 में कर्नाटक में पाया कि यदि खीरे को ऊँची क्यारियों में लौकी व लताओं के साथ बोया जाए तो उनमें केवल 8.5 प्रतिशत ही फसल क्षति पक्षियों द्वारा होती है। जरमियर ने 1997 में बताया कि यदि मक्के की फसल के साथ दलहनी फसल को भी अंतरवर्ती फसल के रूप में लगाया जाए तो मक्के में पक्षियों द्वारा होने वाली क्षति में काफी कमी आती है।

आवासीय हेरफेर: प्रायः पाया गया है, कि पक्षियों के आवास में छेड़छाड़ करने से वे उस स्थान का त्याग कर देते हैं साथ ही साथ यदि पक्षियों के भोजन, जल और बैठने के स्थानों को फसल क्षेत्र से हटा दिया जाए तो उक्त स्थान में पक्षियों की क्षति दर में कमी आती है। यदि फसल क्षेत्र के चारों ओर फल वृक्ष जैसे मनीला, इमली, पलाश, शहतूत और मिस्वाक (टूथब्रश ट्री-*साल्वाडोरा परसिका*) का रोपण कर दिया जाए तो पक्षियाँ इनकी ओर आकर्षित होती हैं तथा हमारी मुख्य फसल क्षति से बच जाती है।

भौतिक व रासायनिक तौर पर पक्षियों को उनके पसंदीदा भोजन से दूर रखना: पक्षी कुछ खास फसलों को अत्यधिक पसंद करने की वजह से ज्यादा क्षति पहुंचाते हैं। इस हेतु हम कम पसंदीदा फसलों को लगाकर क्षति सीमा में कमी कर सकते हैं। यह पाया गया है कि रेड विन्गेड ब्लैक बर्ड मक्के में स्वाद चयन के लिए रंग का सहारा लेते हैं जिससे इनके क्षति को नियंत्रित किया जा सकता है। सामान्यतः भौतिक रूप से यदि मक्के के भुट्टों को उनकी पत्तियों से लपेट दिया जाए तो पक्षियों द्वारा क्षतिग्रस्त होने से बच जाती हैं। श्रीहरि और चक्रवर्ती ने 1998 में बताया कि यदि अनानास के फल को कांटेदार पत्तियों के गुच्छे से या सूखी पुवाल या घास से ढक दिया जाए तो यह पक्षियों के प्रकोप से बच जाते हैं। इसी तरह से यदि तेल प्राप्त होने वाले ताड़ के पेड़ की पुष्प गुच्छ माला को सूखे पुवाल या घास के गुच्छों से तार की सहायता से बांध दिया जाए तो उनमें पक्षियों द्वारा क्षति कम होती है। कुछ पौधों जैसे नीम, *मोरमोडिया फाइटिडा, वरनोनिया एमाइडालिना* और *ग्लाइरिसिडिया सेपियम* का सत् तथा पौधों से मिलने वाले टेनिन एक अच्छे अवरोधक के रूप में पक्षियों के विरूद्ध काम करते हैं।

जैविक नियंत्रण: केस्ट्रेल व स्पैरो-बाज को मैना, गौरैया व ब्लैक बर्ड के नियंत्रण के लिए अनुशंसित की जाती है। हरमन (1955) ने पक्षियों पर विभिन्न रोगाणुओं के अध्ययन में पाया कि पक्षियों की मृत्यु दर में रोगाणुओं का अहम योगदान है। रोगाणुओं में प्रमुख- प्रोटोजोआ, *ट्राईकोमोनास गैलिनी, क्लॉस्ट्रीडियम बोटुलिनम* टाइप-सी, *ल्युकोसाइटोजुन* और *कोक्सीडिया* जाति हैं। इन रोगाणुओं के प्रयोग से पक्षियों के नियंत्रण में कुछ आशातीत सफलता मिली है।

हवाई यातना: यह एक खर्चीला व आधुनिक विधि है जो कि केवल सामूहिक या सहकारिता की स्थिति में ही उपयोग किया जा सकता है। अमेरिका में सन् 1986 से 1994 में अमेरिकी सरकार ने ब्लैक बर्ड यातना प्रोग्राम के लिए उत्तर डाकोटा में धनराशि प्रदान की, जिसमें स्थिर पंखीय वायुयान जो कम ऊंचाई पर उड़ सकते थे, का उपयोग सूर्यमुखी की फसल से पक्षियों को दूर भगाने में किया गया। वायुयान की तेज आवाज से सभी पक्षी उस स्थान से परेशान होकर उन क्षेत्रों से दूर रहने लगे। अतः भारत सरकार भी इस तरह के कार्यक्रम उन क्षेत्रों में चला सकती है, जहाँ फसल को पक्षियों द्वारा अत्यधिक क्षति पहुंचाई जाती है। आजकल बाजार में बैटरी से चलने वाले छोटे-छोटे ड्रोन उपलब्ध हैं जो रिमोट कंट्रोल की सहायता से हवा में उड़ते हैं, अतः किसी छोटे क्षेत्र में नुकसान करने वाले पक्षियों को परेशान करने व उनको भगाने के लिए इनका भी मदद हम ले सकते हैं (चित्र 7)।

चित्र 7: ड्रोन और एयरक्राफ्ट का पक्षियों को डराने के लिए प्रयोग

पक्षियों को भयभीत करना अथवा दूर भगाना: पक्षियों को विभिन्न माध्यमों की मदद से डराकर उनको दूर भगाया जा सकता है या छितराया जा सकता है। सामान्यतः पक्षियों को डराने के लिए डरावने यंत्रों में दृश्यक व श्रवण दोनों ही यंत्रों को उपयोग में लाया जाता है। थोड़े समय के लिए यह यंत्र बहुत ही प्रभावी होते हैं परंतु लंबे समय तक उपयोग करने से पक्षी इनके आदी हो जाते हैं।

डरावना दृश्य विधि: हीलियम से भरा गुब्बारा (दृकबिंदु रहित या दृकबिंदु सहित) (चित्र 9), बाज या उल्लू की आकृति वाले पतंग (चित्र 10), अजगर व बड़े सर्पो के सजीव पुतले (चित्र 8), कागभगोड़ा, घूमने वाली तेज रोशनी (स्पॉटलाइट), चमकीली रोशनी *(फ्लैशिंग लाइट),* चकाचौंध करने वाली रोशनी *(स्ट्रोब लाइट),* पॉलिएस्टर की बनी टेप *(मायलर टेप),* चमकीले सी.डी. (चित्र 11) और लेजर का उपयोग डरावना दृश्य के रूप में कर सकते हैं। परंतु भारत देश में केवल कागभगोड़ा और मायलर टेप का ही उपयोग किया जाता है।

चित्र 8: अजगर के पुतले व सर्प की आकृति को पक्षियों को डराने हेतु प्रक्षेत्र में स्थापन

चित्र 9: पक्षियों को डराने हेतु नेत्र बिंदु आकृति वाले गुब्बारे

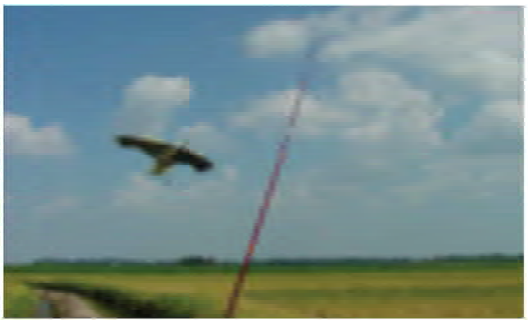

चित्र 10: नाशी पक्षियों को डराने हेतु बाज या अन्य परभक्षी पक्षियों के आकृति को खंभों से लटकाना या हीलियम गैस भरी इन आकृतियों को हवा में तैराना या परभक्षी के नेत्र बिंदु दर्शित पतंगों को उड़ना

चित्र 11: चमकीली सी.डी. का खेतों में पक्षियों को प्रतिकर्षित करने हेतु स्थापन

कागभगोड़ा : प्राचीन समय से ही कागभगोड़ा का उपयोग पक्षियों को दूर भगाने में होता आया है। ये मानव आकृति के पुतले होते हैं जिसे घास-फूस व पुआल की मदद से मानव सदृश्य आकृति प्रदान कर दी जाती है (चित्र 12)। कभी पुतले का सिर बनाने के लिए घड़े का भी उपयोग करते हैं जिन्हें विभिन्न रंगों से रंग देते हैं तथा पुतले को कुर्ता और धोती पहना देते हैं। यदि कपड़ा प्लास्टिक से बना है तो और अच्छा है क्योंकि यह अपनी आवाज से पक्षियों को प्रतिकर्षित करता है। हर 3 से 4 दिन बाद पुतले की जगह बदल देनी चाहिए जिससे पक्षी इसको इंसान समझ कर दूर भागते रहते हैं।

चित्र 12: काकभगोड़ा

मायलर टेप: यह पॉली-प्रोपाइलिन की बनी लचीली पारदर्शी तथा धात्विक चमक वाली टेप होती है जिसके एक ओर चांदी के रंग का लेपन होता है तथा दूसरी ओर लाल रेजिन का लेपन होता है, जिससे कि यह सूर्य प्रकाश का प्रतिकर्षण कर तीखी तेज चमक उत्पन्न करती है (चित्र 13)। इसको लकड़ी या पेड़ों की सहायता से एक सिरे से दूसरे सिरे की ओर बांध देते हैं। इसके हवा में हिलने पर जो आवाज उत्पन्न होती है वह भी पक्षियों के प्रतिकर्षण में मदद करती है। सामान्यतया 10 से 15 मीटर लंबे और 15 मिलीमीटर चौड़े टेप का चयन किया जाता है। एक एकड़ में इस प्रकार की 20 से 30 पट्टियों का स्थापन अनुशंसित किया जाता है, जिसकी ऊंचाई फसल से 1 फुट तथा 2 टेप के मध्य दूरी 5 से 8 मीटर होनी चाहिए।

चित्र 13: मायलर टेप के प्रयोग से पक्षियों को खेत से दूर भगाना

लेजर बीम: इसके उपयोग से भी पक्षी घबराकर दूर भाग जाते हैं। यह लंबी दूरी तक जाने वाली लाइट है जो पक्षियों को डरा देती है (चित्र 14)।

प्रतिकर्षक ध्वनि विधि : इस विधि में विभिन्न तीव्र आवृत्ति की ध्वनि उत्पन्न की जाती है जिससे पक्षी डर कर भाग जाते हैं।

पटाखों का उपयोग: इसमें तेज ध्वनि वाले पटाखों को समय-समय

चित्र 14: लेजर बीम द्वारा पक्षियों को खेत से दूर रखना

चित्र 15: राकेट

चित्र 16: शेल क्रैकर्स

चित्र 17: पटाखे

पर जलाया जाता है, जिसके तीव्र आवाज से पक्षी डर कर भाग जाते हैं। इसके लिए सामान्यतः बम व लड़ी वाले पटाखों का ही उपयोग किया जाता है, जिसमें राकेट बम सर्वाधिक कारगर हैं।

- **शेल क्रैकर्स का उपयोग**: इसको 12 गेज की बंदूक से दागा जाता है जो दागने के 65 से 75 मीटर दूर फटता है तथा तेज रोशनी व ध्वनि उत्पन्न करता है (चित्र 16)।
- **राकेट**: इसको लौन्चिंग रॉड की सहायता से ऊपर की ओर छोड़ा जाता है। ये शेल क्रैकर्स की अपेक्षा अत्यधिक ध्वनि उत्पन्न करता है जो हवा में काफी दूर तक गूँजती है (चित्र 15 व 17)।
- **एसिटिलीन एक्सप्लोडर:** इस विधि में पक्षियों को डराने के लिए बंदूक व एसिटिलीन गैस का सहारा लिया जाता है। एसिटिलीन गैस, पानी और कैल्शियम-कार्बाइड की अभिक्रिया से पैदा होती है। बंदूक से इस गैस को दागने पर तेज आवाज उत्पन्न होती है, जो पक्षियों को डराने के लिए काफी होती है। अतः इसे भिन्न-भिन्न समय पर दागना चाहिए अन्यथा पक्षी इसकी आवाज के आदी हो जाएंगे।

पक्षियों को डराने वाली स्वचालित यंत्र या पायरोटेक्निक विधि: यह मशीन बाजार में आसानी से उपलब्ध हो जाती है। यह केवल तब आवाज करती है जब पक्षी खेत में गमन करते हैं। बागानों के लिए यह बहुत उपयोगी होता है। 4 से 5 एकड़ के लिए एक मशीन काफी है।

संकटकालीन पुकार ध्वनि का उपयोग: संकटकालीन पुकार ध्वनि एक प्रकार की ऐसी आवाज है, जो पक्षियों द्वारा संकट काल की अवस्था में निकाला जाता है, अर्थात जब कोई परभक्षी इन्हें खाने के लिए पकड़ते हैं, तब यह जो ध्वनि उत्पन्न करती है वही संकटकालीन पुकार ध्वनि कहलाती है। सभी अलग-अलग पक्षियों के संकटकालीन पुकार ध्वनि को यंत्रों की मदद से रिकॉर्ड कर अलग-अलग आवृत्ति में अलग-अलग समय में बजाया जाता है, जिससे पक्षी डर कर भाग जाते हैं।

चित्र 18: पक्षियों को डराने वाली स्वचालित यंत्र

चेतावनी पुकार ध्वनि का प्रयोग: इस प्रकार की ध्वनि पक्षियों द्वारा तभी निकाली जाती है जब उस क्षेत्र में कोई परभक्षी मौजूद हो। इन ध्वनियों को रिकॉर्ड कर अलग-अलग समय में भिन्न आवृत्ति में बजाया जाता है, जिससे पक्षी डरकर दूर भाग जाते हैं।

अच्छा तो यह है कि संकटकालीन व चेतावनी पुकार ध्वनि को एक साथ बजाया जाए जिससे कि पक्षी अत्यधिक भयभीत होकर दूर भाग जाएं। इन डरावनी ध्वनि के साथ अन्य दृश्यक डरावनी कृतियों व मायलर टेप का प्रयोग करना चाहिए जिससे इनके आदी नहीं हो पाते।

कुछ अन्य डरावनी विधियां जैसे- बाज की आकृति को खेतों में स्थापित कर सकते हैं, जिससे कि पक्षी उस जगह के करीब नहीं आते या फिर टीन के डिब्बों को पीटकर भी इन्हें डराकर भगा सकते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

ljlk dh Qly e lefdr dhV çcU/ku

foukn dekj flg] _pk flg ,o lj'k flg
df"k foKku dUæ] vEcjiqj] lhrkiqj

सरसों कुल की फसलें भारत देश की तिलहन अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका निभाती हैं। हमारे देश में विभिन्न प्रकार की उगाई जाने वाली सरसों कुल की प्रमुख फसलें - राया या राई, सरसों (*ब्रैसिका कम्पेस्टिस* किस्म पीली और भूरी तथा तोरिया) और तारामीरा हैं। इनके अतिरिक्त, अन्य उगाई जाने वाली *ब्रैसिका* प्रजातियां - *ब्रैसिका नाइगरा, ब्रैसिका करीनारा, ब्रैसिका नेप्स* हैं। परन्तु उत्तरी भारत में उगाई जाने वाली सरसों कुल की प्रमुख तिलहनी फसल - राया या राई है।

प्राचीन काल से फसलोत्पादन में तिलहनी फसलों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विभिन्न रूपों में तेल का उपयोग सॉंवत एवं परिहार्य है। विभिन्न प्रकार की तिलहनी फसलों में राई-सरसों का विशेष महत्व है। राई-सरसों की खेती सिंचित या असिंचित अवस्था में की जा सकती है। इसके साथ ही गेहूँ, चना, मसूर तथा अन्य रबी फसलों के साथ मिश्रित फसल के रूप में भी अच्छी खेती होती है। तिलहनी फसलों के कुल क्षेत्रफल में हमारा देश विश्व के अन्य देशों से कहीं आगे है, लेकिन इन फसलों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में हमारा स्थान काफी नीचे है। कम उत्पादकता के जो प्रमुख कारण हैं उनमें रोग एवं कीटों द्वारा की गई हानि को काफी महत्वपूर्ण माना जाता है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि यदि हम फसलों की उत्पादकता बढ़ाना चाहते हैं तो हमें फसलों को रोगों तथा कीटों से सुरक्षित रखने के लिए कारगर कदम उठाने की आवश्यकता है। इन फसलों पर विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीटों का प्रकोप होता है जिनमें से प्रमुख हानिकारक कीट निम्नवत् हैं :

1. सरसों की आरा मक्खी

पहचान : इस कीट का प्रौढ़ आकार में घर में पाई जाने वाली मक्खी के बराबर 4-5 मि.मी. लम्बा होता है। कीट की देह पर नारंगी पीले रंग के निशान होते हैं तथा पंखों का रंग हरा-लाल,

सरसों की आरा मक्खी के प्रौढ़ एवं सूँड़ी

भूरा होता है। इस कीट की मादा का अंडा रोपक यंत्र बड़ा एवं आरी के समान होने के कारण ही इसे आरा मक्खी कहते हैं। इस कीड़े की सूड़ियां काले स्लेटी रंग की होती हैं।

क्षति की प्रकृति : इस कीट की सूड़ियां सरसों कुल की सभी फसलों को नुकसान पहुँचाती हैं। इस कीड़े की सूड़ियां पत्तियों को किनारों से अथवा विभिन्न आकार के छेद बनाती हुई बहुत तेजी से खाती हैं जिससे पत्तियों में अनेक अनियमित आकार के छेद हो जाते हैं। तीव्र प्रकोप की स्थिति में पत्तियों के स्थान पर शिराओं का जाल ही शेष रह जाता है। इस दशा में पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है। अधिक प्रकोपित पौधों में फलियां नहीं लगती हैं या बहुत कम लगती हैं। इस कीड़े का अधिक प्रकोप नवम्बर में होता है। अधिक आक्रमण के समय सूडियां तने की छाल तक भी खा जाती है।

आरा मक्खी से प्रकोपित पत्तियां एवं पौधे

प्रबन्धन

- फसल की कटाई के बाद गर्मी की गहरी जुताई करनी चाहिए।
- फसल की बुवाई 25 अक्टूबर से पहले पूरी करनी चाहिए।
- सूड़ियों को सुबह के समय एकत्रित कर नष्ट करना चाहिए।
- फसल की सिंचाई करने से आरा मक्खी की सूंड़ियां डूबकर मर जाती हैं।
- मूली, शलजम व तोरिया की अगेती फसलों पर कीट की रोकथाम कर राया/राई व सरसों की फसल पर इसके प्रकोप की सम्भावना को काफी हद तक कम किया जा सकता है।
- कीट आर्थिक क्षति स्तर एक सूँड़ी प्रति पौधा पर पहुँच जाता है तो मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल की 20 से 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 ई. सी. की 1 मि.ली. मात्रा/लीटर पानी की दर से घोलकर

छिड़काव करना चाहिए।

2. *पेन्टेड बग*/चित्रित कीट/चितकबरा कीड़ा

पहचान : इस कीट के प्रौढ़ 5 से 8 मि.मी. लम्बे, चमकीले काले, नारंगी एवं लाल रंग के धब्बेदार/चकत्तेयुक्त होता है। सिर छोटा तिकोना, आँखें काली तथा उभरी हुई होती हैं।

पेन्टेड बग के अण्डे, शिशु एवं प्रौढ़

क्षति की प्रकृतिः यह कीड़ा फसल को दो बार हानि पहुँचाता है- प्रारम्भिक अवस्था में (अक्टूबर-नवम्बर में) तथा फसल पकने की अवस्था में (मार्च-अप्रैल)। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही अपने चुभाने एवं चूसने वाले मुखांगों से पत्तियों, फूलों, तनों तथा फलियों का रस चूसते हैं जिससे प्रकोपित पत्तियाँ किनारों से सूखकर गिर जाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पौधों की बढ़वार रूक जाती है। अधिक आक्रमण से पौधे मर भी जाते हैं। प्रकोपित फलियों में दाने कम बनते हैं एवं फसल पकने के समय भी कीड़े के प्रौढ़ व शिशु फलियों से रस चूसकर दानों में तेल की मात्रा को कम कर देते हैं। जिससे दानों के वजन में भी कमी आ जाती है।

पेन्टेड बग से प्रकोपित पौधे

प्रबन्धन

- अण्डों को नष्ट करने के लिए फसल की कटाई के बाद गर्मी की गहरी जुताई करनी चाहिए।
- प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में कीड़ों को हाथ से एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए।
- छोटे पौधों में सिंचाई कर देना चाहिए जिससे पौधे इस कीट के प्रकोप को सहन कर पाने में काफी हद तक सक्षम हो जाते हैं।
- पकी हुई फलियों से जल्दी बीज निकाल लेना चाहिए।
- अधिक प्रकोप की दशा में मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल की 20 से 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 ई.सी. की 1 मि.ली. मात्रा/लीटर पानी की दर से घोलकर प्रातः या सांयकाल छिड़काव करना चाहिए।

3. पत्ती में सुरंग बनाने वाला कीट (खनक कीट)

पहचान : इस कीट का प्रौढ़ छोटी काले रंग की मक्खी होती है। इस कीट की मादा काफी छोटे आकार की होती है। इसकी मादा अपने अण्डरोपक को पत्तियों के अन्दर ऊतकों में धँसाकर अण्डे देती है, जिससे नवजात सूँड़ी निकलकर पत्तियों में सुरंग बनाकर खाती हैं जिसके फलस्वरूप पत्तियों में अनियमित आकार की सफेद रंग की रेखाएं बन जाती हैं और वहीं प्यूपा में बदल जाती हैं।

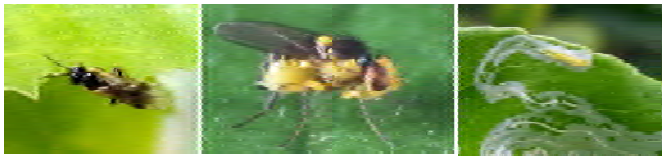

खनक कीट के प्रौढ़ एवं सूँड़ी

क्षति की प्रकृतिः इस कीड़े की नवजात सूँड़ियां पत्तियों में सुरंग बनाकर खाती हैं। यदि प्रकोप अधिक मात्रा में हो जाए तो पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है।

खनक कीट से प्रकोपित पत्तियाँ

प्रबन्धन

- कीट से प्रभावित पत्तियों को तोड़कर भूमि में गाड़ देना चाहिए एवं फसल पकने पर फसल के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- इस कीड़े का आक्रमण चेंपा के साथ ही होता है इसलिए चेंपा के नियंत्रण के लिए अपनाए जाने वाले कीटनाशियों के प्रयोग से इस कीट का आक्रमण भी रूक जाता है।
- वानस्पतिक अवस्था में 2 से 5 सूँड़ी या कृमिकोष प्रति पौधा पाये जाने पर नीम आधारित कीटनाशक का 2-3 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

4. बालदार सूँड़ी

पहचानः वयस्क अवस्था में इस कीट के पेट का रंग लाल होता है तथा पंखों का रंग मटमैले रंग का होता है। इसकी सूड़ियाँ पीले अथवा नारंगी रंग की काले सिर वाली होती हैं। इसका पूरा शरीर

बालदार सूँड़ी की सूड़ियाँ एवं प्रौढ़

घने बालों से ढका होता है। अधिक मात्रा में शरीर पर बाल होने से कीटनाशियों का इस पर प्रभाव कम पड़ता है।

क्षति की प्रकृति: इसकी सूड़ियाँ ही फसल को नुकसान पहुँचाती हैं। ये प्रारम्भ में झुण्ड में तथा बाद में एकल रूप में पौधों की कोमल पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं। शुरू की अवस्था में ये सूड़ियाँ समूह में तथा बाद में एकल रूप में रहती हैं और पौधों की कोमल पत्तियों को तेजी से खाकर नुकसान पहुँचाती हैं। यह कीड़ा तोरिया की फसल को ज्यादा नुकसान पहुँचाता है। कई बार फसल की प्रारम्भिक अवस्था में इस कीट के ज्यादा आक्रमण से फसल की बुवाई दुबारा करनी पड़ती है।

बालदार सूँड़ी से प्रकोपित पत्तियाँ एवं पौधा

प्रबन्धन

- फसल की कटाई के बाद गर्मी में गहरी जुताई करनी चाहिए ताकि मिट्टी में रहने वाले कृमिकोष नष्ट हो जाएं।
- अण्डों के समूह एवं झुण्ड में खा रही छोटी अवस्था की सूँड़ियों को भी पकड़कर मार देना चाहिए।
- 10-15 प्रतिशत प्रकोपित पत्तियों की दशा में इन्डेक्साकार्ब 14 5 एस.सी. के 1 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

5. चेंपा/माहूँ

पहचान: यह कीट पंखहीन अथवा पंखयुक्त, हल्के स्लेटी या सफेद-हरे रंग के 1.5-3.0 मि.मी. लम्बे चुभाने एवं चूसने मुखांग वाले छोटे कीट होते हैं। शरीर के पिछले सिरे में दो नलिकायें होती हैं। इनके झुण्ड पत्तियों, फूलों, डंठलों व फलियों आदि पर चिपके रहते हैं एवं रस चूसकर पौधों को कमजोर बना देते हैं। इसका प्रकोप दिसम्बर माह के अंतिम सप्ताह में तब शुरू होता है जब फसल पर फूल बनने शुरू होते हैं व मार्च तक बना रहता है। प्रौढ़ व शिशु पौधों के विभिन्न भागों में रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं।

माहूँ के प्रौढ़ एवं शिशु

क्षति की प्रकृति: यह कीट इस फसल का प्रमुख हानिकारक कीट है। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधे की पत्तियों, तनों, पुष्प एवं फलियों से समूह में रहकर रस चूसते हैं। इसके कारण पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा फलियों की संख्या कम तथा दानें कम एवं छोटे रह जाते हैं। ये कीट मधु जैसा पदार्थ भी डालते हैं जिसके बाद में काला फफूँद लग जाता है। इसके कारण पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है। बादलों वाला मौसम एवं कम तापमान इस कीट के प्रसार के लिए अतिउपयुक्त होता है। यह कीट सरसों की फसल को 25 से 40 प्रतिशत तक नुकसान पहुँचा सकता है।

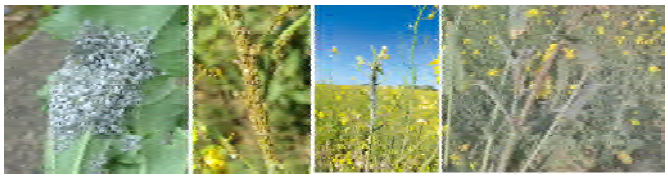

माहूँ से प्रकोपित पत्ती एवं पौधे

एकीकृत प्रबन्धन

- राया की अगेती बुवाई (15 से 25 अक्टूबर तक) करने से चेंपा कीट का प्रभाव बहुत कम होता है। राया फसल की तुलना में सरसों की फसल पर इस कीट का प्रकोप काफी ज्यादा होता है।
- फसल में संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि नत्रजन की अधिक मात्रा एवं पोटाश की कमी होने पर माहूँ से हानि होने की सम्भावना बढ़ जाती है।
- प्रारम्भ में सप्ताह के अन्तराल पर माहूँ का प्रकोप दिखाई देते ही सप्ताह में दो बार फसल का निरीक्षण अवश्य करना चाहिए।
- माहूँ कीट के प्रकोप से प्रकोपित टहनियों को प्रारम्भिक अवस्था में ही तोड़कर भूमि में गाड़ देना चाहिए।
- माहूँ के प्राकृतिक शत्रुओं जैसे- क्राइसोपा, सिरफिड मक्खी, इन्द्रगोप भृंग आदि कीट के शिशु एवं प्रौढों को खाकर इनकी संख्या को बढ़ने से रोकते हैं। अतः प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या ज्यादा हो तो कीटनाशकों का प्रयोग न करके इनका संरक्षण करना चाहिए।
- वानस्पतिक अवस्था से फूल-फली आने तक 30-50 माहूँ प्रति 10 से.मी. मध्य ऊपरी शाखा पर या 30 प्रतिशत माहूँ से ग्रसित पौधे पाये जाने पर डाइमेथोएट 30 ई.सी. या मैलाथियान 50 ई.सी. की 10 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए तदुपरान्त परभक्षी कीट इन्द्रगोप भृंग के 5000 भृंग/हेक्टेयर की दर से पूरे खेत में छोड़ना चाहिए।

- माहूँ के नियन्त्रण के लिये परभक्षी कीट क्राइसोपर्ला के 45,000 से 50,000 शिशु/हेक्टेयर की दर से पूरे खेत में छोड़ना चाहिए।

6. गोभी की तितली

पहचानः प्रौढ़ तितली पीताभ श्वेत रंग की होती है तथा शरीर के पृष्ठ तल का रंग धुएं जैसा सफेद होता है। इसके अगले पंख पर एक काला निशान होता है।

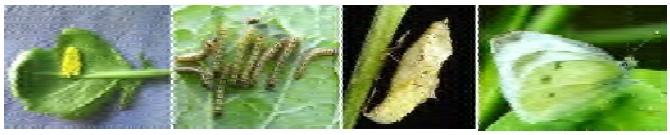

गोभी की तितली के अण्डे, सूड़ियाँ, कृमिकोष एवं प्रौढ़

क्षति की प्रकृतिः इसकी नवजात सूड़ियाँ झुण्ड में पत्तियों की सतह को प्रारम्भ में खुरचकर खाती हैं तथा बाद में पत्तियों को किनारे से खाना आरम्भ करके अन्दर की तरफ खाती रहती हैं। अधिक प्रकोप की दशा में पूरा का पूरा पौधा खा लिया जाता है।

गोभी की तितली से प्रकोपित पत्तियाँ एवं पौधा

एकीकृत प्रबन्धन

- झुण्ड में खा रही सूँड़ियों को पकड़कर मार देना चाहिए।
- अधिक प्रकोप की दशा में इन्डोक्साकार्ब 14 5 एस.सी. को 1 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कीटनाशियों का छिड़काव करते समय सावधानियां

- छिड़काव सायंकाल के समय करना चाहिए क्योंकि इस समय मधुमक्खियों तथा अन्य पर-परागण करने वाले कीटों की संख्या फसल पर कम होती है।
- साग-सब्जी के लिए डण्ठल एवं टहनियां कीटनाशियों के छिड़काव करने से पहले तोड़ लेना चाहिए।
- कीटनाशियों के छिड़काव के बाद सात दिन तक इंतजार करना चाहिए। इस बीच डण्ठल साग-सब्जी के लिए नहीं तोड़ना चाहिए। इसके बाद डण्ठलों को 3-4 बार पानी से अच्छी तरह धोकर ही साग के लिए इस्तेमाल करना चाहिए। ऐसा करने से कीटनाशियों के जहरीले अवशेषों की मात्रा कम हो जाती है।

फसल का निरीक्षण

फसल पर कीड़ों के आक्रमण की जानकारी रखने के लिये निरन्तर निरीक्षण किया जाना चाहिये। फसल की बुवाई के बाद सप्ताह में दो बार निरीक्षण जरूरी है। फसल की निम्न अवस्थाओं में कीट निरीक्षण समेकित नाशीजीव प्रबन्धन प्रणाली को लागू करने में सहायता करता है :

- **बीज प्ररोह अवस्थाः** अक्टूबर से नवम्बर में आरा मक्खी, *पेन्टेड बग* व *फली बीटिल* के आक्रमण का निरीक्षण करना आवश्यक है।
- **वानस्पतिक अवस्थाः** दिसम्बर से जनवरी में चेंपा का निरीक्षण आवश्यक है।
- **फूल व फली आने की अवस्थाः** जनवरी से मार्च के दौरान चेंपा का निरीक्षण कर आर्थिक चेतावनी स्तर के अनुसार ही कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

तेजस्वी सम्मान खोजते नहीं गोत्र बतलाके,
पाते हैं जग से प्रशस्ति अपना करतब दिखलाके।
हीन मूल की ओर देख जग गलत कहे या ठीक,
वीर खींचकर ही रहते हैं इतिहासों में लीक।

-रामधारी सिंह 'दिनकर'

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

tSfod [ksrh esa jksx ,oa dhV fu;a=.k ds fy, Lohdr [kfut inkFkZ

nh{kk tks'kh] ,l-,u- lq'khy ,oa ,l-d- voLFkh
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

फसल उत्पादन की जैविक विधि का उपयोग सभ्यता के प्रारम्भ से ही होता रहा है। इसके अंतर्गत सम्पूर्ण प्रबंधन तंत्र को संज्ञान में लिया जाता है जिसके फलस्वरूप कृषि वातावरण और मृदा स्वास्थ्य उत्तम रहते हैं। जैविक खेती में जैव विविधता, जैविक चक्र और मृदा जैव सक्रियता के संतुलन और संरक्षण पर मुख्य जोर दिया जाता है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में सन 2010 तक लगभग 0.75 हेक्टेयर क्षेत्रफल में जैविक खेती की जा रही है और एशिया महाद्वीप में सबसे ज्यादा जैविक खेती करने वाले कृषक वर्तमान में भारत में ही हैं।

सफल जैविक खेती मुख्यतः तीन चीजों पर आधारित है जो हैं: जैविक खादों का उचित प्रयोग, रोग नियंत्रण और कीट नियंत्रण। वैसे तो जैविक खेती में मुख्यतः आनुवांशिक उपायों, कर्षण क्रियाओं और जैव नियंत्रकों के प्रयोग से रोग एवं कीटों का नियंत्रण करने पर जोर दिया जाता है परंतु कुछ स्थिति में यदि इन तकनीक से नियंत्रण न हो पाये तो कुछ असंश्लेषित वानस्पतिक अथवा खनिजीय व्याधिनाशकों के प्रयोग की अनुमति जैविक खेती हेतु प्रदान की गयी है। चूंकि इनमें से कुछ रसायनों से पौध विषाक्तता अथवा वातावरण पर अनापेक्षित प्रभाव पड़ सकता है, इन व्याधिनाशकों का उपयोग सीमित कर दिया गया है। साथ ही यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि इनका प्रयोग सिर्फ एक अंतिम अस्त्र के रूप में और प्रमाणित विधि के अनुसार ही हो।

जैविक खेती में रोग नियंत्रण हेतु स्वीकार्य खनिज आधारित पदार्थ

तांबा आधारित: तांबा आधारित कुछ व्याधिनाशकों को जैविक खेती में कवक व जीवाणुओं के द्वारा होने वाले रोगों के नियंत्रण के लिए स्वीकृत किया गया है। इनमें कॉपर हाइड्रॉक्साइड, कापर ऑक्सीक्लोराइड तथा बोर्डो मिश्रण मुख्य हैं। ये रसायन संपर्क में आने पर ही रोगकारक पर असर कर सकते हैं इसलिए इनका मुख्य प्रयोग पौधों पर पर्णीय छिड़काव के रूप में किया जाता है। विभिन्न फसलों में लगने वाले रोग जैसे कि अंगूर में डाउनी मिल्ड्यू, आलू में पछेती झुलसा, सेब में धब्बे, विभिन्न फसलों में होने वाली चूर्णिल आसिता और ऐन्थ्रेक्नोस रोग, जीवाणुजनित पर्ण धब्बे आदि के नियंत्रण के लिए यह एक प्रभावी रसायन है। परंतु तांबा एक अकार्बनिक पदार्थ है और लगातार कई वर्षों तक इसका उपयोग करने पर इसका मिट्टी में अपघटन नहीं हो पाता और यह मृदा में ज्यादा मात्रा में एकत्र हो जाता है और जिससे पौधों और मछलियों में विषाक्तता उत्पन्न हो सकती है। इसी कारण जैविक खेती में रोग नियंत्रण के लिए इसका उपयोग सिर्फ निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति की दिशा-निर्देशों के तहत ही किया जा सकता है। साथ ही वर्ष भर में इसका प्रयोग 8 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर से अधिक करने की अनुमति नहीं है।

गंधक आधारित: गंधक आधारित पदार्थों का प्रयोग जैविक खेती में सिर्फ निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति की दिशा-निर्देशों के तहत ही किया जा सकता है। रोग नियंत्रण के लिए गंधक के प्रयोग का पहला रिकॉर्ड लगभग 2,000 वर्ष पुराना है। गेहूँ के कित्त रोग के नियंत्रण हेतु ग्रीस सभ्यता में इसका सबसे पहले प्रयोग का रिकॉर्ड पाया जाता है। गंधक एक चमकदार, ठोस, पीली क्रिस्टल की संरचना का होता है और इसका प्रमुख प्रयोग विभिन्न फसलों में माइट एवं चूर्णिल आसिता के प्रभावी नियंत्रण के लिए कारगर पाया गया है। चूना-गंधक (कैल्शियम पॉलीसल्फाइड) भी जैविक खेत में प्रयोग के लिए स्वीकृत है। गंधक आधारित रसायन रोगजनक की कोशिकाओं में प्रवेश करके उसकी उपापचीय क्रिया को प्रभावित करते हैं और रोगकारक की बढ़त को रोक देते हैं। तांबे की तरह ही गंधक आधारित रसायन भी रोगकारक के संपर्क में आने पर ही असर कर सकते हैं और इस कारण इनका प्रयोग पर्णीय छिड़काव के रूप में करने पर सबसे ज्यादा प्रभावी होता है। विभिन्न फसलों में होने वाले चूर्णिल आसिता रोग, आलू में ब्लैक स्कर्फ, आड़ू में पर्णीय कुंठन, चुकंदर में राइजोक्टोनियाजनित मूल विगलन आदि के नियंत्रण के लिए गंधक आधारित रसायनों का जैविक खेती में उचित स्वीकृति और निर्देशानुसार प्रयोग किया जा सकता है। विभिन्न सब्जी फसलों और फलों में लगने वाले स्पाइडर माइट, नींबू में थ्रिप्स आदि के नियंत्रण के लिए भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

सोडा: खाने वाला सोडा अर्थात सोडियम बाईकार्बोनेट, भी कई दशकों से कवकनाशी के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। जैविक खेती में इसके प्रयोग के लिए किसी प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है। इस रसायन को छिड़काव के रूप में

प्रयोग किया जाता है। यह रसायन रोगजनक में सोडियम/पोटैशियम आयन का संतुलन बिगाड़ देता है जिसके फलस्वरूप रोगकारक की कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं। आमतौर पर इसके अधिक सान्द्रण का छिड़काव किया जाता है। इस रसायन के प्रयोग से टमाटर में चूर्णिल आसिता, ऐन्थ्रेक्नोस, अगेती झुलसा आदि रोगों को कुछ हद तक नियंत्रित करने में सफलता पायी गयी है। सोडे के ज्यादा उच्च सान्द्रण के छिड़काव करने पर कभी-कभी पौधों की पत्तियों के किनारों पर जले हुए से भूरे रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं। ऐसी अवस्था में सान्द्रण को कम किया जा सकता है जिससे पौधों को हानि न हो।

क्ले (बैंटोनाइट, परलाइट, वर्मीक्युलाइट, जीओलाइट): जैविक खेती में रोग एवं कीट नियंत्रण के लिए क्ले का प्रयोग करने के लिए किसी प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है। यह पर्यावरण में मिलने वाला एक प्राकृतिक खनिज है। रोग नियंत्रण के लिए पानी में इसका घोल बनाकर इसका पौधों पर छिड़काव किया जाता है जिससे कि पौधों के ऊपर सूखी सफेद परत बन जाती है। यह परत विभिन्न कीटों द्वारा पौधों को खाने में रूकावट पैदा करती है और उन्हें पौधों पर अंडे देने से रोकती है। चूंकि कई रोग, खासतौर से विषाणुजनित रोग, कीटों द्वारा फैलते हैं, इसलिए अप्रत्यक्ष रूप से यह रोग नियंत्रण में सहायता करता है। साथ ही क्ले का प्रयोग कई जैविक फफूँदीनाशक एवं कीटनाशकों में वाहक के रूप में भी किया जाता है।

डाइएटोमेशियस अर्थ (डीई): यह प्रागैतिहासिक जीवाश्म *(फौसिलाइस्ड)* क्रस्टेशियन से बना पाउडर होता है और इसका प्रयोग कीट नियंत्रण के लिए किया जा सकता है। यह मुख्य रूप से असंगत हाइड्रेटेड सिलिका द्वारा रचित होता है। डीई के तेज किनारे कीड़ों के शरीर को काट देते हैं, जिससे कीड़े निर्जलीकरण के कारण मर जाते हैं। इसका प्रयोग सूखी परिस्थितियों में ज्यादा लाभकारी रहता है और गीले मौसम में इसका प्रभाव कम हो जाता है। संग्रहित अनाज में लगने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए इसका खासतौर से उपयोग किया जा सकता है। परंतु जैविक खेती में डीई का प्रयोग सिर्फ निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति के दिशानिर्देशों के तहत ही किया जा सकता है।

खनिज तेल: हल्के खनिज तेल रंगहीन, गंधरहित तेल हैं जो कि पेट्रोलियम के आसवन से प्राप्त होते हैं। जैविक खेती में खनिज तेलों का प्रयोग सिर्फ निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति के दिशा-निर्देशों के अंतर्गत ही किया जा सकता है। इनका प्रयोग कीट नियंत्रण के लिए 1860 के दशक से किया जा रहा है। रोग नियंत्रण के लिए इनका प्रयोग मुख्य रूप से अंगूर में चूर्णिल आसिता और कुछ हद तक केले में पर्ण धब्बों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। यह माइट एवं अन्य कीड़ों के अंडे देने की अवस्था में अंडों के आकार को प्रभावित करते हैं तथा अंडे की सतह से होने वाले आवश्यक गैसों के आदान- प्रदान में बाधा डाल देते हैं। कीड़ों की अन्य अवस्थाओं में खनिज तेल उनकी श्वसन प्रणाली को बाधित कर देते हैं। रोग नियंत्रण के लिए यह तेल रोगकारक फफूंदी की भित्ति को और साथ ही उसके बीजाणुओं के अंकुरण को बाधित कर देते हैं। सीधे तौर पर रोग नियंत्रण के अलावा, कई विषाणुजनित रोग, जो कीटों द्वारा फैलते हैं, उनके नियंत्रण के लिए भी यह खनिज तेल प्रयोग किए जा सकते हैं। परंतु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि, कुछ फसलों में, तांबा और गंधक आधारित कवकनाशियों के साथ इन तेलों का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा पौधों को नुकसान हो सकता है।

परमैंगनेट आफ पोटाश: यह एक बैंगनी रंग का पानी में घुलने वाला पदार्थ है। यह रसायन संपर्क में आने वाले सभी कार्बनिक पदार्थों का आक्सीकरण कर देता है। इसका प्रयोग अंगूर में होने वाली चूर्णिल आसिता, डाउनी मिलड्यू एवं पर्ण धब्बों के साथ-साथ सोलानेशियस फसलों में होने वाली *वर्टीसीलियम विल्ट* के नियंत्रण के लिए किया जा सकता है। परंतु ज्यादा मात्रा होने पर यह रसायन पौधों के लिए बहुत विषाक्त हो सकता है और इसीलिए इसका प्रयोग सिर्फ निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति के दिशा-निर्देशों के अंतर्गत ही किया जा सकता है। इसके प्रयोग के समय यह ध्यान रखना भी बहुत जरूरी है कि इसे किसी भी कार्बनिक पदार्थ जैसे कि रोटिनोन, बीटी आदि के साथ न प्रयोग किया जाये।

चूना/कैल्शियम आधारित (क्लोराइड आफ लाईम/ कैल्शियम क्लोराइड): जैविक खेती में इन रसायनो का प्रयोग निरीक्षण और प्रमाणन समिति द्वारा स्वीकृति होने पर और समिति के दिशा-निर्देशों के अंतर्गत किया जा सकता है। इनका उपयोग सीधे तौर पर रोग नियंत्रण के लिए किया जा सकता है। इसके अलावा इनका ज्यादा प्रयोग अन्य ज्यादा प्रभावी रसायन जैसे- *लाइम सल्फर* और बोर्डो मिश्रण बनाने के लिए करते हैं। *क्लोराइड आफ लाइम* का प्रयोग विभिन्न कृषि उपकरणों के *स्टलाइजेशन* के लिए किया जाता है ताकि रोगकारक को उनके द्वारा फैलने से रोका जा सके।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

eVj e: yxu: oky: ie[k jkx rFkk mud: lefdr icèku

jkgy dekj] f'k[kk ;kno ,o: Qkft ;k ckjh
ioh {k= d: fy, Hkk-d-vu-i- dk vu- ifjlj] iVuk

भारत में जाड़े के मौसम में मटर मुख्यतः एक स्वादिष्ट सब्जी के रूप में प्रयोग की जाती है। हमारे देश में मटर के अन्तर्गत कुल क्षेत्र 8 लाख हेक्टर और वार्षिक उत्पादन लगभग 8 लाख टन है। दलहन के रूप में इसकी खेती मुख्यतः उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, उड़ीसा, उत्तराखण्ड, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल और असम राज्यों में रबी में की जाती है। हमारे देश में इसकी उत्पादकता विश्व की औसत उत्पादकता से भी अत्यधिक कम है। मटर की उत्पादकता को प्रभावित करने में इसमें लगने वाले रोगों की बड़ी भूमिका है। इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि फसलों में लगने वाले प्रमुख रोगों की पहचान कर उनका प्रभावी नियंत्रण किया जाए, जिससे आर्थिक क्षति न्यूनतम हो। मटर में सामान्यतः लगने वाले प्रमुख रोगों की पहचान एवं उनका प्रबन्धन निम्न प्रकार किया जा सकता है :

बीज एवं मूल विगलन

कारक :- *पीथियम* जाति, *फ्यूजेरियम सोलानी, राइजोक्टोजिया सोलानी* इत्यादि।

कवक द्वारा संक्रमण से बीज विगलित हो जाते है अथवा अंकुरित होने के पश्चात पौधे मरने आरम्भ हो जाते हैं। संक्रमण के मुख्य अंग तना तथा जड़ हैं। बीज सड़न तथा आर्द्र पतन रोग द्वारा बहुत अधिक क्षति होती है। यदि अंकुरण पश्चात पौधे संक्रमण को वहन कर जाएं तब बड़े पौधों पर नुकसान ज्यादा नहीं होता है। पीथियम की प्रजातियाँ जैसे- *पीथियम डिबेरिएनम* एवं पी. अल्टीमम, फ्यूजेरियम तथा राइजोपस इत्यादि कवक इस रोग को उत्पन्न करते हैं। पीथियम प्रजातियाँ वैकल्पिक मृतजीवी तथा मृदूढ़ होती है। यह कवक की लैंगिक अवस्था से बने बिशिक्तांड के माध्यम से उतरजीवी रहती है। यह अनुकूल परिस्थिति में अंकुरित होकर कवक जाल बनाती है और प्राथमिक संक्रमण उत्पन्न करती है। अलैंगिक अवस्था में बीजानुधानी बनती है। जो अंकुरित होने तक कवक तन्तु के साथ लगी रहती हैं अथवा जल या वायु द्वारा प्रकीर्णित होकर द्वितीय संक्रमण हेतु निवेश द्रव्य का काम करती है।

प्रबंधन

- जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- रोग की रोकथाम के लिए थिरम या कैप्टान (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) द्वारा बुबाई पूर्व बीजोपचार करना चाहिए।
- खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर मेटालेक्सिल + मैंकोजेब मिश्रण (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिता *(डाउनी मिल्डयू)*

कारकः- *पेरोनोस्पोरा* पीसी

प्रायः पौधे जब तीन या चार पत्ती अवस्था के होते हैं, उनके पर्णकों की निचली सतह पर धब्बे या चकत्ते बन जाते हैं जिन पर रूई के समान सफेद सा क्रीम रंग की कवक वृद्धि दिखाई देती है। इन धब्बों पर कवक के फलककाय पाए जाते हैं। इन धब्बों के क्षेत्र में पर्णक की ऊपरी सतह पर पीले क्षेत्र बन जाते हैं। जो बाद में भूरे होकर सूख जाते हैं। यदि वयस्क तने में सर्वांगी संक्रमण हो जाय तब तनों की वृद्धि रूक जाती है और बाद में विकृत हो जाते हैं। ऐसे पौधे बौने रह जाते हैं। फलियों पर रोग के लक्षण भूरे दाग के रूप में प्रकट होते हैं। इन विश्रतों के पास लगे हुए बीज छोटे और भूरे रंग के हो जाते हैं। ऐसे बीज पर दबे हुए अनियमित धब्बे भी देखे जाते हैं। यह रोग प्रमुख रूप से मृदाजनित है।

प्रबंधन

- ऐसे खेत में दो-तीन वर्ष के लिए फसल चक्र अपनाएँ।
- रोगग्रस्त पादप अवशेषों को खेतों से निकालकर तुरंत नष्ट कर देना चाहिए।
- बुवाई के लिए सदैव स्वस्थ तथा निरोगी बीज का ही प्रयोग करना चाहिए।
- बुवाई के पूर्व बीज को थिरम या कैप्टान (2.5 प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित कर लेना चाहिए।
- रोग के लक्षण दिखाई देते ही रिडोमिल (मेटालेक्सिल) का छिड़काव 0.1 प्रतिशत की दर से करना लाभप्रद होता है।

चूर्णिल आसिता (पाउड्री मिल्डयू)

कारकः- *एरिसिफी पीसी*

रोग के प्रथम लक्षण पत्तियों पर तथा इसके उपरान्त पौधे के सभी हरे अंगों पर दिखाई देते हैं। इन अंगों पर सफेद चूर्ण के समान आसिता टुकड़ों में फैली हुई दिखाई देती है। लक्षण पत्तियों की दोनों सतहों पर पाए जाते हैं। संक्रमण के पश्चात् छोटे बदरंग धब्बे बनते हैं जो बाद में पूर्ण पटल पर फैल जाते हैं। चूर्णिल पदार्थ कवक जाल व फलन काय द्वारा निर्मित होती है। रोगजनक कवक बाह्य परजीवी है और चूषकांगों के अतिरिक्त, कवक काय सतह पर रहती है। संक्रमित पौधों का विकास रूक जाता है। दाने छोटे तथा अनियमित आकार के बनते हैं।

प्रबंधन

- रचना, अपर्णा, पन्त मटर 5, मालवीय मटर 2, मालवीय मटर 15, पूसा प्रभात जैसी रोगरोधी प्रजातियाँ उगाएँ।
- रोग की रोकथाम के लिए रोगग्रस्त पादप अवशेष को यथाशीघ्र खेत से हटाकर नष्ट कर देना चाहिए।
- रोग दिखने पर फसल पर घुलनशील गंधक (0.3 प्रतिशत) या सल्फेक्स (0.3 प्रतिशत) या कैराथान (0.2 प्रतिशत) के 2-3 छिड़काव 10-15 दिनों के अन्तराल पर करें।

किट्ट रोग या गेरूआ रोग *(रस्ट)*

कारकः- *यूरोमाइसिस फेबी*

इस रोग को पौधों की पत्तियों, तनों, प्रतानों, पर्णवृन्तों, फलियों इत्यादि सभी वायवीय अंगों पर किट्ट पीले गोल या लम्बे स्फोट समूहों के रूप में देखा जा सकता है। सभी संक्रमित भागों पर तथा पत्तियों की दोनों सतहों पर हल्के भूरे रंग के चूर्ण के रूप में युरीडो बीजाणु बनते हैं, बाद में स्फोटों का रंग गहरा भूरा या काला हो जाता है। जो टेल्यूटो बीजाणु अवस्था को प्रदर्शित करता है। तने और पर्णवृन्त पर ऐसे स्फोट पत्तियों की अपेक्षा अधिक पाए जाते हैं। रोग के प्रभाव से पत्तियाँ एवं तना सूख जाते हैं और उपज में काफी क्षति होती है।

प्रबंधन

- फसल की कटाई के पश्चात् रोगी पौधों और उनके अवशेषों को यथाशीघ्र खेत से निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- स्वच्छ बीज का प्रयोग करें।
- बुवाई से पूर्व थिरम 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
- संक्रमित पौधों को यथाशीघ्र खेत से उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
- रोग के लक्षण दिखलाई देते ही प्रोपिकोनाजोल (0.1 प्रतिशत) या मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) अथवा जिनेब (0.3 प्रतिशत) का 10-15 दिनों के अन्तराल पर 2-3 छिड़काव करें।

तना विगलन एवं अंगमारी

कारकः- *एस्कोकाइटा पीसी*

तना विगलन के लक्षण गहरे भूरे रंग के विक्षत के रूप में बीज के अंकुरित होने के साथ ही मिट्टी की सतह से नीचे वाले तने के हिस्से पर आरंभ हो जाते हैं और धीरे-धीरे नीचे जड़ों पर और ऊपर की ओर तने पर बढ़ने लगते हैं। तने पर विक्षत मृदा के ऊपर के हिस्से तक में मिलते हैं और वयस्क रोगग्रस्त पौधे के तने के चारों ओर का भाग काला व बदरंग हो जाता है। अन्ततः पौधे मर जाते हैं। पत्तियाँ, तने व फलियों पर चित्तियाँ पाई जाती हैं। पत्तियों पर गहरे भूरे किनारे वाले गोल, कत्थई से काले रंग विक्षत देखे जाते हैं। विक्षत के बाद आपस में मिलकर पूरे तने को चारों ओर से घेर लेते हैं तथा कमजोर कर देते हैं जो बाद में टूट जाता है। इसी प्रकार से पत्तियों पर भी देखे जाते हैं।

प्रबंधन

- रोगग्रस्त पौधों को खेत से हटाकर यथा शीघ्र नष्ट कर देना चाहिए।
- जल निकास की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।
- फसल वृद्धि के समय कम वर्षा वाले स्थानों का चुनाव करना लाभप्रद होता है।
- बुवाई के पूर्व बीजोपचार थिरम या अन्य कवकनाशी (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) द्वारा करना लाभप्रद होता है।
- पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार 10 दिनों के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करना चाहिए।

श्याम वर्ण (एन्थ्रक्नोज)

कारकः- *कोलिटोट्राइकम पीसी*

इस रोग के लक्षण पुरानी पत्तियों पर गोल धब्बों का बनना है। यह धब्बे बीच में हरे तथा किनारों पर भूरे रंग के होते हैं। तने पर लम्बे विक्षत बनते हैं और फलियों पर गोल, लाल और धंसे हुए विक्षत दिखाई देते हैं। रोगजनक कवक बीज में कवक जाल और कभी-कभी छोटी काली पीठिकाओं के रूप में पाया जाता है।

प्रबंधन

- फसल चक्र अपनाना इस रोग के रोकथाम में लाभदायक सिद्ध होता है।
- खेत में जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- स्वस्थ तथा निरोगी बीजों का इस्तेमाल करना चाहिए।
- खेत में खरपतवार नियंत्रण का पूरा ध्यान रखना चाहिए।

- बुआई के पूर्व बीजोपचार कैप्टान या थिरम से (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से करें।
- पौधों पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार 10 दिनों के अन्तराल पर पुनः छिड़काव करना चाहिए।

उकठा या म्लानि *(विल्ट)*

कारकः- *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम पीसी*

इस रोग से पौधों की वयस्क पत्तियों के किनारे मुड़ जाते हैं और पत्तियाँ गोल हो जाती हैं। इसके बाद पत्तियाँ पीली पड़कर गिरने लगती हैं। कभी-कभी पूरा पौधा ही पीला पड़ जाता है और वह पीलापन पौधे में नीचे से ऊपर की ओर बढ़ता जाता है। पौधे मुर्झाकर सूख जाते हैं। जड़ों का ऊतक बदरंग हो जाता है और दाने पतले और सिकुड़े हुए बनते हैं।

प्रबंधन

- फसल चक्र विधि अपनानी चाहिए।
- मई-जून के महीनों में गहरी जुताई करके मृदा का उपचार करना चाहिए।
- बुआई के पूर्व बीज का उपचार कार्बेन्डाजिम नामक कवकनाशी से 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से करें।
- बीटावेक्स 1 ग्राम + 5 ग्राम ट्राइकोडर्मा के साथ मिलाकर प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।
- फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही मैंकोजेब या काबेन्डाजिम का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करना लाभदायक सिद्ध होता है।
- संक्रमित पौधे को संक्रमण प्रारम्भ होते ही खेत से उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

जीवाणुज अंगमारी

कारकः- *स्यूडोमोनास पीसी*

यह रोग मटर के प्रत्येक वायुवीय भाग पर देखा जाता है। पर्णक, तने तथा कलियों पर विक्षत जलसिक्त लम्बे भूरे रंग के तथा प्रकाश के सम्मुख देखे जाने पर चमकीले और परिभाषिक होते हैं। पत्तियों की अपेक्षा तनों अथवा कलियों पर बने विक्षतों का आकार बड़ा होता है। रोगाणुजनक जीवाणु मृदा के रोगग्रस्त पादप अवशेषों के साथ तथा बीजावरण में उत्तरजीवी रहता है। रोग सर्वप्रथम रोगग्रस्त बीजों से उगने वाले निचले अनुपर्ण पर दिखाई देता है विक्षतों पर जलीय स्त्राव होता है जिसमें असंख्य जीवाणु होते हैं। ठण्डा तथा नम मौसम रोग के अनुकूल होता जबकि शुष्क मौसम में संक्रमण कम पाया जाता है।

प्रबंधन

- रोग नियंत्रण के लिए केवल स्वस्थ पौधों से ही प्राप्त बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- फसल चक्र अपनाया जाना चाहिए।
- खेत में जल निकास का उचित प्रबंध तथा सुचारू क्रियाओं का ध्यान रखना चाहिए।
- बुवाई के पूर्व बीजोपचार अवश्य करना चाहिए जिससे रोग की संभावना कम हो जाती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

cdjh ikyu % ,d ykHkçn 0;olk;

vry dekj lpku[1] vkj-d- flg[1] vfHk"kd dekj flg[1] cã idk'k[1] ,o uhye dekj flg[2]
[1]Hkkdvuq&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ
[2]oh-,u-ih-th- dkyst] jkB] gehjiqj

ग्रामीण क्षेत्रों में बकरी पालन एक ऐसा व्यवसाय है, जिसे कोई भी थोड़ी सी लागत/पूंजी और जानकारी के साथ शुरू कर सकता है। साथ ही साथ बकरी पालन में जोखिम और दूसरे व्यवसाय से काफी कम है। वैसे तो आपको बकरी पालन के अनेक व्यवसायिक *प्लान* मिल जायेंगे परन्तु जब तक व्यवहारिक ज्ञान नहीं होगा तब तक किसी भी व्यवसाय को बड़ा रूप नहीं दिया जा सकता है।

बकरे के माँस की मांग देश के हर क्षेत्र में है तथा इसके माँस की मांग लगातार बढ़ती ही जा रही है। जहाँ तक भारत में बकरी पालन व्यवसाय की व्यापकता का सवाल है तो हमें उसका जबाव सिर्फ इसी बात से मिल जाता है कि बकरे का माँस किसी भी धार्मिक विचारधारा या प्रतिबंध से मुक्त है अर्थात बकरे के माँस को सभी धर्मो, जातियों तथा सम्प्रदायों द्वारा खाने में व्यापकता से उपयोग किया जाता है। किसी तरह की धार्मिक पाबन्दी न होने के कारण बकरे का माँस अन्य माँस की तुलना में अधिक लोकप्रिय है।

बकरी पालन के लाभ

यदि हम बकरी पालन की तुलना अन्य पशुपालन जैसे- गौ पालन या भैंस पालन से करें तो हमें पहला लाभ यह मिलता है कि इसके लिए गौ या भैंस पालन के मुकाबले काफी कम जगह चाहिए। दूसरी लाभ जितनी जगह में आप एक भैंस या गाय पाल सकते हैं उतनी जगह में पाँच या सात बकरियां आराम से पाली जा सकती हैं।

- अधिकतर नस्ल की बकरियां को गर्मी हो या ठण्ड या बारिश किसी भी वातावरण में ढलने की अद्‌भुत क्षमता होती है।
- बकरियां अन्य बड़े पशुओं के मुकाबले बहुत छोटी होती हैं लेकिन ये परिपक्व बहुत जल्द हो जाती हैं।
- बकरी का जीवित तथा मृत्यु के उपरान्त केवल एकमात्र ही उपयोग नहीं है। जहाँ इसके माँस का उपयोग लोग खाने में करते हैं वहीं इसके दूध का उपयोग इसे पीकर 36 प्रकार की बीमारियों को दूर करने में किया जाता है।
- बकरी के दूध में सेलेनियम की मात्रा अधिक होने के कारण इसका महत्वपूर्ण उपयोग डेंगू बीमारी को दूर करने में किया जाता हैं।
- बकरी के बालों का उपयोग फाइबर बनाने में तथा खाल का उपयोग विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र बनाने में किया जाता है।
- बकरी पालन को बहुत कम पूँजी में भी शुरू किया जा सकता है। चूँकि बकरियों की अनेकों नस्ल होती हैं जो साल में दो बार बच्चे देती हैं और हर बार 2 से 3 बच्चे देती हैं। इसलिए इस व्यापार के जल्द से जल्द बढ़ने की अधिक सम्भावनाएं होती हैं।
- बकरी पालन को व्यवस्थित ढंग से चलाना अन्य प्रक्षेत्रों की तुलना में अधिक आसान होता है।
- यदि आप पहले से कोई पशुपालन कर रहे हैं और बकरी पालन भी करना चाहते हैं तो आप बकरियों को वही जगह दे सकते हैं, जिस जगह पर आप पहले से अन्य पशु पाल रहे हैं।
- बकरी का प्रयोग अब पर्यावरण बचाने में भी हो रहा है। अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका 'फोर्ब्स' में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व में बकरियों के झुंड को किराए पर देने का व्यापार तेजी से बढ़ रहा है। लोग अपने लॉन की घास को छोटी करने हेतु मशीन की बजाय बकरियों का इस्तेमाल कर रहें हैं। इससे सबसे बड़ा लाभ वायुमंडल में कार्बन उत्सर्जन के घटने के रूप में प्राप्त हो रहा है। साथ ही खरपतवारों के उन्मूलन में खरपतवारनाशी रसायनों के स्थान पर बकरियों द्वारा चराई अत्यंत लाभप्रद सिद्ध हो रही है जो मृदा, वायु एवं जल के प्रदूषण को रोकने में अहम भूमिका निभा रही है। बकरी की विशेषता है कि अन्य जीवों के लिए विषाक्त सिद्ध होने वाले पौधों को भी बड़े चाव से खा जाती हैं। बकरियों द्वारा खाए गए खरपतवारों के बीज उनके विशिष्ट पाचन तंत्र के कारण पुनः अंकुरित होने के लायक न रहने से उनके मल के साथ मृदा में मिलने पर भी वह पुनः पनप नहीं पाते। वनों में लगने वाली आग के फैलने से जानमाल की व्यापक क्षति होती है। बकरियाँ जंगलों में गिरे पेड़ों के पत्तों तथा वहाँ उपस्थित झाड़ियों को खा जाती हैं। जमीन पर गिरे यही पत्ते तथा झाड़ियाँ आग के फैलने का कारण बनती हैं। बकरियों को कहीं भी किसी भी स्थान पर लाया

ले जाया जा सकता है। घास या खरपतवारों को समाप्त करने के लिए वे दुर्गम स्थानों पर भी सुगमता से जा सकती हैं जबकि मशीन को प्रत्येक स्थान पर पहुंचाना मुश्किल होता है। एक अनुमान के अनुसार 38 बकरियाँ 50,000 वर्ग फीट क्षेत्र की घास को एक दिन में चर सकतीं हैं। नोबल रिसर्च इंस्टीट्यूट के अनुसार घास की तुलना में चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवार बकरियों की पहली पसंद होते हैं। उपरोक्त दोनों प्रकार की घासों से युक्त मैदान पर बकरियों को छोडने पर 85 प्रतिशत समय तक वे चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को ही चरेंगी तथा मात्र 15 प्रतिशत समय घास चरने में लगाएँगी। विश्व भर में *गोट्स ऑन गो, रेंट ऑन गोट* तथा *दी रेंट गोट्स* जैसी विभिन्न कंपनियाँ बकरियों द्वारा चरने के सफल व्यावसायिक मॉडल को बखूबी अंजाम दे रही हैं। किराए पर बकरियों को लेने वाले को उनकी आवश्यतानुसार सौ या इससे अधिक बकरियां किराए पर एक निश्चित समय के लिए दी जाती हैं। अमेजन जैसी *ई-कॉमर्स* कंपनी भी इस व्यापार में उतर चुकी हैं। कनाडा व पुर्तगाल जैसे विश्व के अनेक देशों में बकरी चराने का धंधा तेजी से फल-फूल रहा है। खरपतवारनाशक रसायन तथा लॉन की घास को छोटा करने वाली मशीनें पर्यावरण को क्षति पहुंचाती है। अतः बकरियाँ इसका सस्ता व प्रभावी विकल्प सिद्ध हो रही हैं। इसके लिए बकरियों को विशेष प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

- बकरी पालन में आपको अपने उत्पादों को बेंचने के लिए किसी बाजार की जरूरत नहीं पड़ती क्योंकि मांग अधिक होने के कारण ग्राहक आपको ढूँढते-ढूँढते आपके *फार्म हाउस* तक स्वतः पहुँच जाते हैं।

जमीन का चुनाव

हमारे देश का हर कोना बकरी पालन का व्यवसाय करने के लिए उपयुक्त है। हमें यह व्यवसाय शुरू करने के लिए अपने घर के आस-पास ही कोई जगह तलाश करनी है, जहाँ से हम इस व्यवसाय को आसानी से क्रियान्वित कर सकें। इसके अतिरिक्त जमीन का चुनाव करते समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाना अत्यनत आवश्यक है :

- ऐसी जगह जमीन की तलाश करनी चाहिए जहाँ शुद्ध पानी और हवा की प्रचुरता हो।
- आस-पास के क्षेत्र में खेत हों ताकि आप आसानी से घास और अनाज पैदा कर सकें ताकि बकरियों को खिलाने का खर्च कम किया जा सके।
- आस-पास के क्षेत्र में ऐसा बाजार हो जहाँ बकरी पालन से संबंधित वस्तुएं और दवाइयाँ आसानी से उपलब्ध हों।
- ग्रामीण क्षेत्रों के आस-पास ही बकरी पालन व्यवसाय शुरू करना चाहिये क्योंकि शहरों के मुकाबले गाँवों में जमीन और मजदूर बहुत सस्ते दामों में उपलब्ध रहते हैं।
- बकरी पालन के लिए क्षेत्र ऐसा हो जहाँ आस-पास कोई पशु चिकित्सालय हो ताकि आपको टीके व अन्य दवाइयाँ सुगमता से उपलब्ध हो सकें, अन्यथा आपको सारी दवाइयाँ और टीके अपने *फार्म* पर ही रखने पड़ेगें।
- यातायात की सुविधा का उपलब्ध होना भी जरूरी है ताकि जरूरत पड़ने पर आप अपनी जरूरत की वस्तुएं किसी नजदीकी बाजार से खरीद सकें तथा अपने *फार्म* के उत्पादों को आसानी से बाजार में पहुँचाया और बेचा जा सके।

बाड़े का निर्माण

बकरी पालन करने के लिए बकरियों के लिए घर या बाड़े का निर्माण बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। लेकिन हमारे देश में अभी तक इस क्रिया को एक महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया जाता क्योंकि जो लोग छोटे पैमाने पर बकरी पालन करते हैं, वे बकरियों के लिए अलग से आवास न बना कर उन्हें अन्य पशुओं के साथ ही ठहरा देते हैं, जिससे उनकी उत्पादकता पर असर स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है। व्यावसायिक रूप से बकरी पालन की जानकारी बहुत ही जरूरी हो जाती है कि बकरियों के रहने के लिए एक अलग मानक स्थान तैयार किया जाए और निम्नलिखित बातों का स्पष्ट ध्यान रखा जाए :

- कोशिश करें कि बकरियों के रहने का स्थान जमीन से दो-तीन फीट ऊँचा हो। इसके लिए आप तख्त इत्यादि का इस्तेमाल कर सकते हैं क्योंकि गीलेपन और नमी से बकरियों मे बीमारी पैदा हो जाती है।
- चूहों, मक्खियों, जूँ इत्यादि कीट पतंगे बकरियों के आवास में बिलकुल नहीं होने चाहिए।
- आवास को हमेशा पूर्व-पश्चिम दिशा में बनवाना चाहिए, ताकि हवा का आवागमन आसानी से हो सके।
- आवास से पानी निकास की उचित व्यवस्था पहले से ही करके रखें, ताकि फार्म की साफ-सफाई के दौरान पानी का निकास बाहर की ओर आसानी से हो सके।
- इस बात की उचित व्यवस्था करें कि बकरियों के आवास में किसी भी प्रकार का पानी चाहे वो बारिश का हो या कोई अन्य, अन्दर न आने पाए। यह पानी बीमारियों की जड़ है।
- आवास में तापमान को स्थिर रखने के लिए उचित प्रबन्ध करें। गर्मी तथा सर्दियों के लिए आवास में तापमान नियंत्रण के लिए उचित प्रबन्ध करें।
- बकरी पालन से सम्बन्धित सभी तरह के उपकरणों, बर्तनों की साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें।

चारे की व्यवस्था

इन सबके अलावा, बकरी पालन व्यवसाय के लिए बकरियों के खान-पान एवं आहार का उचित प्रबन्ध रखना होगा।

- बकरियों के लिए हरा चारा, गेंहूँ का भूसा (यदि संभव हो तो चना, अरहर तथा मसूर की दाल के भूसे का इंतजाम किया जा सकता है) आदि का प्रबन्ध कराना चाहिए।
- दाने के रूप में बकरियों को गेंहूँ और टूटी हुई मक्का देना चाहिए।
- इसके अलावा, कटहल, नीम, पीपल, पाकड़ की पत्तियों को समय-समय पर हरे चारे के रूप में दिया जा सकता हैं।

अन्य उपयोगी सलाह

बकरियां, बकरी पालन व्यवसाय की रीढ़ की हड्डी होती हैं इसलिए उनका अच्छी तरह से ध्यान रखें।

- बकरियों के रोजमर्रा के असामान्य लक्षणों को पहचानिए, जो भी बकरी आपको सुस्त व कमजोर नजर आए या चारा नहीं खा रही है, उसका अतिरिक्त ध्यान रखें तथा किसी भी तरह की बीमारी को पहचान कर उचित इलाज की व्यवस्था करें।
- बकरियों को समय-समय पर टीका अवश्य लगवाएं।
- बकरियों के बच्चों का बकरियों की तुलना में अधिक ध्यान रखना चाहिए ।
- बकरी पालन से सम्बन्धित समस्त *रिकार्ड* को सुरक्षित रखना चाहिए।

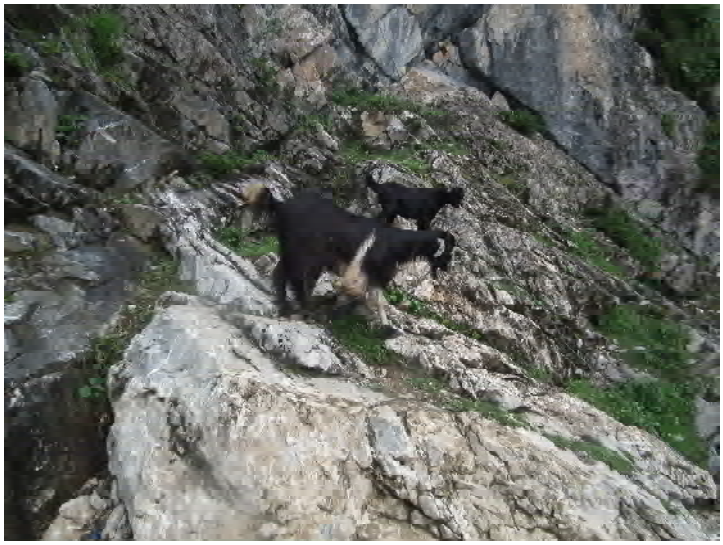

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

dspvk [kkn mRiknu dh fof/k

_rq ekoj[1], ,-d- eYy[2] ,oa ,l-vkj- dkVok[3]
[1]Hkkdvui&dæh; 'kq"d {ks= vuqla/kku laLFkku] tks/kiqj
[2]Hkkdvui&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ
[3]Hkkdvui&Hkkjrh; pjkxkg ,oa pkjk vuqla/kku laLFkku] >kalh

किसी छायादार स्थान की जमीन पर 3 मीटर लम्बी, 1 मीटर चौड़ी व 30 से.मी. ऊँचाई का ढांचा बनाकर वर्मीकम्पोस्ट बना सकते हैं। इसमें ढांचे की आधार सतह पर ईंट बिछाकर खांचों को सीमेंट, बालू की सहायता से भर देते हैं। इसके बाद कार्बनिक पदार्थों के मिश्रण को डालते हैं। दूसरी विधि से वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए जमीन के ऊपर 1.5 मीटर लम्बी, 1 मीटर चौड़ी व 0.75 मीटर ऊँचाई का ढांचा बना लिया जाता है। ढांचों की भराई के लिए कूड़ा-करकट, पुआल, खरपतवार व गोबर ढांचे में डालकर उसमें 1-2 कि.ग्रा. केंचुआ डाल देते हैं। ध्यान रहे जो भी पदार्थ ढांचे में डाला जाय 2-3 सप्ताह घूर में पड़े रहने के बाद तापक्रम कम हो जाने पर ही डालना चाहिए। वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए 40-50% नमी व 20-30° से. तापक्रम होना चाहिए। इस तापक्रम व नमी के स्तर को बनाए रखने के लिए आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करते रहें।

उपज

यदि ढांचे में सही तापक्रम (20-30° से.) व नमी (40-50%) बनाए रखा जाय, तो उपरोक्त आकार की संरचना से लगभग 3 कुन्तल वर्मीकम्पोस्ट तैयार हो जाती है। खाद्य पदार्थ, हवा, नमी व तापक्रम की उपयुक्त परिस्थितियों में केंचुए प्रजनन कर अपनी संख्या में गुणात्मक वृद्धि करते हैं। 1,000 केंचुओं से सामान्यत: 9,000 केंचुएं तैयार हो जाते हैं। इस प्रकार 80-90 दिन में कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाता है।

खाद निकालने की विधि

खाद निकालने से 2-3 दिन पूर्व पानी देना बन्द कर दें, इससे केंचुएं निचली सतह में चले जाते हैं। अब खाद को निकाल कर किसी छायादार स्थान पर ढेर लगा देते हैं। इस ढेर को 2 मि.मी. की छेद वाली छलनी से छानकर 20-25% नमी बनाए रखते हुए छायादार स्थान पर रख दें।

प्रयोग मात्रा

वर्मीकम्पोस्ट बुवाई से पूर्व सब्जी फसलों में 10-15 टन प्रति हेक्टेयर, खाद्यान्न फसलों में 5-8 टन प्रति हेक्टेयर, फलदार पेड़ों में आवश्यकतानुसार, 1-10 कि.ग्रा. प्रति पेड़ व गमलों में 100 ग्राम प्रति गमला प्रयोग करना चाहिए।

सावधानियां

- लगातार उपयुक्त नमी बनाए रखना चाहिए।
- ढांचे को धूप व वर्षा से बचाएं।
- ढांचे में ताजे वानस्पतिक पदार्थ प्रयोग न करें, बल्कि अधसड़ा पदार्थ ही डालें।
- केंचुओं को आवश्यक हवा देने के लिए प्रत्येक सप्ताह गुड़ाई करें।

केंचुआ प्राप्ति के स्थान

किसी भी राज्य के प्रत्येक जनपद के जिला प्रशिक्षण अधिकारी से सम्पर्क करके केंचुए प्राप्त किए जा सकते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

fdlkuk dh vk; c<krjh d lq>ko

vk|kr dekj] ccyw 'kek ,o çHkkr dekj flg

fc/kku pUæ df"k fo'ofo|ky;] ekgui|j] ukfn;k] if'pe cxky

भारत में खाद्य समृद्धि के बावजूद, जनसंख्या वृद्धि के कारण देश मे खाद्यान्न की कमी लगातार बनी हुई है। इसलिए कृषि से जुड़े लोगों का अधिक उपज और समृद्ध खेती की तरफ रुझान आवश्यक है। समृद्ध खेती भूमि की अवस्था, उपलब्ध कृषि यन्त्रों और खेत में पिछले वर्ष लगी फसल पर निर्भर करती है। खेती को लाभदायक बनाने के लिए दो ही उपाय हैं-पहला उत्पादन को बढ़ाएँ और दूसरा लागत को कम करें।

कृषि की लागत नियंत्रित करने के लिए कृषि के मुख्य आदान जैसे- बीज, उर्वरक, पौध सुरक्षा, रसायन और सिंचाई तंत्र का संतुलित एवं आधुनिक विधियों द्वारा प्रयोग करना चाहिए। कृषि की हर एक इकाई का सही समय पर सही तरह से उपयोग करके, इनका अपव्यय रोककर व इसके विकल्प ढूंढकर खेती को लाभदायक बनाना चाहिए।

निम्नलिखित सुझावों से किसानों को बेहतर एवं किफायती कृषि करने के साथ-साथ अधिक उपज लेने में मदद मिल सकती है :

अच्छे किस्म के बीजों का प्रयोग, बीजोपचार एवं समय पर बुवाई

कहते हैं जैसा आप बोओगे वैसा पाओगे, इसलिए बीज एक ऐसा आदान है, जिसकी समृद्ध खेती में काफी अहम भूमिका होती है। बीज के ऊपर लगभग 10 से 15 प्रतिशत लागत आती है और अच्छी पैदावार लाने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि बीज उन्नत किस्म का हो और उसे पनपने के लिए अनुकूल परिस्थितियां मिलें। फसलों, फलों और सब्जियों के प्रमाणित उत्तम बीजों का उपयोग करना चाहिए, जिनमें अधिक पैदावार देने की क्षमता, सिंचित एवं सूखा प्रभावित क्षेत्रों में पनपने की प्रवृत्ति और रोगों के प्रतिरोधन की गुणवत्ता हो। हालाँकि यह बीज थोड़े महंगे हो सकते हैं, परन्तु इनके इस्तेमाल से उत्पादकता एवं गुणवत्ता में काफी वृद्धि मिलती है। किसान बीजोपचार अवश्य करें ताकि कम लागत में फसलें निरोग रहें। इसके अलावा सिफारिश के अनुसार अगेती/पछेती किस्में अपनाएं ताकि अच्छी पैदावार हो।

आरंभिक जुताई एवं संरक्षण खेती का महत्व

शुरुआती जुताई से बीज को पनपने के लिया अच्छा माध्यम मिलता है एवं खरपतवार पर नियंत्रण प्राप्त होता है। अगर खेत समतल नहीं जुता है तो बीजों का अंकुरण प्रभावित होगा एवं पौधों का विकास कम होगा। शून्य जुताई *(जीरो टीलेज)* बुआई की एक विधि है जिसमें किसान पूरे खेत को नए सिरे से नहीं जोतता है, परन्तु पुरानी फसल काटकर उसी खेत पर ही बुवाई कर देता है। इससे किसान की जुताई का खर्च, डीजल, समय इत्यादि बच जाता है और साथ ही साथ जमीन में पोषक तत्व, आर्द्रता, मित्र जीवाणुओं का भी संरक्षण हो जाता है। इसके अतिरिक्त, किसान अपनी सुविधा एवं समय के अनुसार बुवाई कर सकता है। इस विधि से खरपतवार भी कम आते है जिससे खेती का खर्च भी कम रहता है एवं मिट्टी की प्राकृतिक संरचना भी बनी रहती है, जो भू-संरक्षण एवं पर्यावरण बचाव के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

बीज की संस्तुत मात्रा एवं बुवाई के नए तरीके

बीज की मात्रा, सिफारिश के अनुसार प्रयोग करना चाहिए और कतारों में बुवाई करें। बीज ड्रिल मशीन, कम बीज और कम समय में ज्यादा क्षेत्र में बुवाई करने में सक्षम होती है। यांत्रिक ड्रिल से एक दिन में औसतन 12 से 15 एकड़ क्षेत्रफल में बुवाई संभव है। बीज ड्रिल द्वारा बुवाई करने पर लागत लगभग 50 प्रतिशत तक कम हो सकती है। इस विधि से पौधों के बीच सामान दूरी बनी रहती है और उनका विकास भी अच्छा होता है।

उचित पौध-पोषण

फसल के विकास की महत्वपूर्ण अवस्थाओं में खाद एवं उर्वरकों की सही मात्रा का प्रयोग होना चाहिये। प्रायः यह देखा गया है कि किसान सिफारिश की सीमाओं से कहीं ऊपर नत्रजन उर्वरकों का फसल में प्रयोग करते हैं। इन नत्रजन-युक्त उर्वरकों के अंधाधुंध प्रयोग से न केवल भूमिगत जल प्रदूषित होता है, अपितु ओजोन परत, जो सूर्य की पराबैंगनी किरणों से हमें बचाती है वह भी बुरी तरह से प्रभावित होती है। कुछ तकनीकें जैसे *एलसीसी (लीफ कलर चार्ट)*, जो फसल में उचित नत्रजन की मात्रा उपलब्ध कराने में सहायक हैं और वैसे ही फॉस्फोरस की उपयोग क्षमता को बढ़ाने के लिए फॉस्फोरस घोलक जीवाणु का उपयोग करके उर्वरकों की सही मात्रा में उपयोग किया जा सकता है। किसान मिट्टी की जाँच करवाकर सिफारिश के अनुसार संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें ताकि उर्वरकों पर कम लागत आए।

जैव-उर्वरक का प्रयोग

हरित क्रांति के बाद रासायनिक खादों के अंधाधुंध प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता धीरे-धीरे कम हो गयी है, जिसने उत्पादकता पर भी गहरा नकारात्मक प्रभाव डाला है। अब समय है कि किसान फिर से जैविक खाद की तरफ रुझान करें। जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट या केंचुआ खाद आदि का प्रयोग भूमि के लिए लाभदायक पाया गया है। इसके अतिरिक्त, जीवाणु कल्चर (राइजोबियम या एजोटोबैक्टर) का प्रयोग भी उपज बढ़ाने में सहायक है। जैविक खाद के साथ-साथ उर्वरक के संतुलित प्रयोग से उच्च पैदावार प्राप्त होती है। जैविक खादें कम लागत के आदान हैं व तुलनात्मक रूप से इनसे अधिक लाभ प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए किसान गोबर के उपले बनाकर उसे ईंधन के रूप में प्रयोग करते हैं। अगर इसी गोबर को गोबर-गैस में इस्तेमाल करने के बाद, जैविक खाद के रूप में प्रयोग किया जाये तो और भी बेहतर परिणाम आएंगे। प्रायः यह देखा गया है कि किसान फसल की कटाई के बाद बचे हुए डंठलों को खेत में ही जला देतें हैं, जिससे मिट्टी के पोषक तत्व एवं मित्र जीव नष्ट हो जाते हैं और साथ ही यह प्रदूषण भी बढ़ाता है। किसानों को इसके विपरीत कटाई के बाद खेत में एक बार मिट्टी पलटने के लिए हल चलाना चाहिये ताकि डंठल मिट्टी में दबकर उचित नमी द्वारा खाद में परिवर्तित हो जाएं।

हरित खाद फसलें लगाएं

हरित खाद वे फसलें हैं जो दो फसलों के अंतराल में लगाई जाती हैं और बहुत तेजी से बढ़ती हैं। इन फसलों से न केवल भूमि के पोषक तत्वों में वृद्धि होती है अपितु इनके इस्तेमाल से भूमि कटाव रूकता है, पानी का रिसाव कम होता है, मिट्टी की संरचना बेहतर होती है एवं नमी संग्रहण होता है। जैसे कि फलीदार फसलें, सैंज इत्यादि का प्रयोग हरी खाद के रूप में किया जा सकता हैं।

अंतरवर्तीय फसल पर ध्यान दें

एक ही खेत में दो या दो से अधिक फसलों को एक साथ लगाने की विधि को अंतरवर्तीय कृषि कहते हैं। अंतरवर्तीय कृषि से फायदे मुख्यतः समान क्षेत्रफल में ज्यादा आमदनी, एक फसल क्षतिग्रस्त होने पर दूसरी द्वारा बचाव, मिट्टी से बेहतर पोषक तत्व लेने की शक्ति आदि हैं। किसान गेहूँ, ज्वार, मक्का, कपास आदि फसलों के साथ अंतरवर्तीय फसल के रूप में चना, उड़द, अरहर आदि लगाकर कृषि को लाभदायक बना सकते हैं।

उन्नत सिंचाई विधियों को अपनाएं

उन्नत सिंचाई साधनों के इस्तेमाल से किसान समय, श्रम व पानी की बचत कर सकता है और इससे पौधों का विकास भी बेहतर होता है। कतार सिंचाई, फुहार सिंचाई, टपक सिंचाई आदि सिंचाई विधियों का प्रयोग और फसल की कतारों के बीच अवरोध (मल्च) परत आदि तकनीकों का उपयोग करके सिंचाई करनी चाहिए। सीमित पानी की उपलब्धता के तहत वैकल्पिक फसल या फसल प्रणाली का प्रयोग करें। यद्यपि टपक एवं फुहार सिंचाई तकनीक महंगी होती है, परन्तु फलों एवं सब्जियों के लिए यह उपयुक्त हैं क्योंकि इनकी उपज के मूल्य भी बेहतर मिलते हैं।

पौध-सुरक्षा को अपनाएं

समेकित नाशी-जीव प्रबंधन पौध सुरक्षा की एक ऐसी प्रणाली है जिसमें जैविक, यांत्रिक और रासायनिक पद्धतियों से कीटों को नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है। इसमें कीटों का सम्पूर्ण उन्मूलन करने का प्रयास नहीं किया जाता अपितु उन्हें इस स्तर पर रखा जाता है कि वे नुकसान के न्यूनतम स्तर को पार न कर पायें। इस प्रणाली से कृषि पर खर्च भी कम होता है और पर्यावरण भी तुलनात्मक रूप से सुरक्षित रहता है। इनके नियंत्रण के लिए स्वच्छ कृषि, परजीवी व शिकारी कीड़ों व कीड़ों को हानि पहुँचाने वाले फफूँदों व विषाणुओं का प्रयोग किया जाता है। इनके अलावा नीम, हींग, लहसुन के उपयोग, अंतरवर्तीय फसलों, ट्रेप, प्रकाश प्रपंच आदि वैकल्पिक साधनों के उपयोग से भी लागत कम और उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। कीट या रोग से नुकसान की उचित सीमा *(इकोनॉमिक थ्रेशहोल्ड लेवेल)* को पहचानें या अपने निकटतम अधिकारी/वैज्ञानिक की सहायता लें और उनके द्वारा बताए गए उचित प्रबंधन का प्रयोग करें।

समाकलित खेती को अपनाएं

इस प्रकार की व्यवस्था में कृषि उत्पादन के साथ-साथ पशु-पालन, मछली पालन, वानिकी, रेशम-उत्पादन इत्यादि को भी सम्मिलित किया जाता है। जिससे प्रति इकाई क्षेत्रफल में बेहतर उत्पादकता अर्जित की जा सकती है। समाकलित कृषि से किसान की लाभप्रदता में वृद्धि होती है क्योंकि इसमें खाद और चारे का इंतजाम खरीदकर नहीं करना होता है। यह किसान को अपनी कृषि क्रियाओं से ही प्राप्त हो जाता है। इस व्यवस्था के तहत कई तरह की फसलों को उगाने से और अन्य माध्यमों से किसान को संतुलित आहार प्राप्त होता हैं।

सही समय पर कटाई, उचित छंटाई एवं भण्डारण

सही समय पर कटी फसल सही तरीके से पक जाती है जिसका बाजार मूल्य अच्छा मिलता है और किसान की सुखाने और संरक्षित करने की मेहनत और खर्च बच सकता है। किसान अपने उत्पाद को अलग-अलग किस्मों में छांट कर बेचें। श्रेणीकरण

करने से उत्पाद की भौतिक दिखावट में सुधार होता है और बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। अनुचित भंडारण कारणों से उत्पाद की गुणवत्ता कम हो जाती है फलस्वरूप अच्छा बाजार मूल्य नहीं मिल पाता।

प्राथमिक प्रसंस्करण विधियाँ अपनाएं

प्रसंस्करण से न केवल भण्डारण आयु बढ़ती है अपितु उत्पाद के मूल्य में भी वृद्धि होती हैं। किसान भाई स्वयं सहायता समूह बनाकर अपने उत्पाद स्वयं प्रसंस्कृत कर सकते हैं, जिससे गाँवों में लोगों को रोजगार भी मिलेगा।

सूक्ष्मता कृषि तकनीक एवं परिशुद्ध खेती

परिशुद्ध खेती उपग्रह के प्रयोग, कंप्यूटर, मोबाइल और अन्य सूचना तकनीकी यंत्र पर आधारित व्यवस्थित प्रबंधन है। इससे पोषक तत्वों की सही मात्रा और सटीक समय पर प्रयोग के लिए सही जानकारी मिल सकती है। इससे हम कीटनाशक तथा अन्य आदानों के संतुलित प्रयोग कर सकते हैं। यह आधुनिक तकनीक है और अभी इस तकनीक को व्यापक बनने में कुछ समय लगेगा।

फसल बीमा

भारत में कृषि प्राकृतिक आपदाओं जैसे सूखा, बाढ़ आदि से प्रभावित होती है जिससे किसानों की फसल पर काफी असर होता है। कृषि बीमा प्राकृतिक कारणों से होने वाले कृषि नुकसान की भरपाई सस्ते में करने का एक अच्छा समाधान है। फसल बीमा होने के कारण किसान फसलों की नई किस्म और नई कृषि तकनीकों को भी प्रयोग में ला सकता है क्योंकि यह जोखिम, बीमा द्वारा रक्षित होता है। फसल बीमा प्राकृतिक आपदाओं से किसानों की रक्षा और अगले सत्र के लिए अपने क्रेडिट पात्रता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिए भारत सरकार ने देश भर में कई कृषि बीमा योजनाओं की शुरूआत की है जैसेः व्यापक फसल बीमा योजना, प्रयोगिक फसल बीमा, कृषि आय बीमा योजना, राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना आदि।

कृषि भूमि और फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिए उत्पादन की लागत को कम करने के लिए सुधार कृषि प्रथाओं का उपयोग करें और सरकार द्वारा समर्थन मूल्य को ध्यान में रखें। इसके अलावा किसान विभिन्न कृषि कार्यक्रमों में भागीदारी बढ़ाएं जिससे उन्हें नवीनतम तकनीक एवं कृषि की जानकारी हो सके।

पुस्तकेशु च या विद्या परहस्तेशु यद्धनम।
उन्पन्नेशु च कार्येशु न सा विद्या न तद्धनम।।

अर्थ- जो विद्या पुस्तकों में लिखी है और कंठस्थ नहीं है तथा जो धन दूसरों के हाथ में गया है, ये दोनों आवश्यकता के समय काम नहीं आते।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

d"kdk dh vk; nxquk djus ds fy, d`f"k foKku dsUnz] nfgxkao] vgenuxj dk iz;kl

, l-, l- dkf'kd ,oa ikdk'k fgx
d`f"k foKku dsUnz] nfgxkao] vgenuxj] egkjk"V

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि आधारित है। इसलिए कृषि को भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी कहा जाता है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार आधी से अधिक भारत की जनसंख्या कृषि पर आधारित है। अभी 48.9 प्रतिशत रोजगार कृषि व कृषि से जुड़े आयामों से सृजित किया जाता है। वर्तमान में हमारी अर्थव्यवस्था में सकल घरेलू उत्पाद का 17.4 प्रतिशत का योगदान किया जाता है। लेकिन जोत आकार कम होने के कारण उत्पादकता में कमी आ रही है। वर्तमान में 67.1 प्रतिशत भारत के कृषकों की जोत का आकार एक हे. से भी कम है। इसको ध्यान में रखते हुए भारत के प्रधानमंत्री, श्री नरेंद्र मोदी जी ने भारतीय किसानों की आय वर्ष 2022-23 तक दुगुना करने का स्वप्न हम सभी को दिखाया है। जिसको फसलों की उत्पादकता में बढ़ोत्तरी करके, बाजार व्यवस्था में सुधारकर, कृषि उत्पादों का उचित मूल्य दिलाकर, भूमि आवंटन में नीतिगत सुधारकर व कुशल सहायता उपाय अपनाकर मूर्त रूप दिया जा सकता है। महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी, अहमदनगर महाराष्ट्र का एक उत्कृष्ट कृषि विश्वविद्यालय है जिसके तकनीकी मार्गदर्शन में कृषि विज्ञान केंद्र, दहिगाव, अहमदनगर ने विश्वविद्यालय की निम्नलिखित तकनीक को कृषक प्रक्षेत्र पर प्रचारित व प्रसारित कर कृषकों की आय दुगुना करने के लिए योजना बनायी है। जिसके सकारात्मक परिणाम परिलक्षित हो रहे हैं। जिसका विस्तृत विवरण निम्न प्रकार हैं :

रबी ज्वार उत्पादन के लिए पंचसूत्री तकनीक

कृषकों की आय दोगुना करने के लिए ज्वार की पंचसूत्री तकनीक को अपनाकर उत्पादन व आय को बढ़ाया जा सकता है। कृषि विज्ञान केंद्र, दहिगाव, अहमदनगर ने महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी, अहमदनगर द्वारा विकसित तकनीक को कृषकों तक प्रचारित व प्रसारित किया है। इस तकनीक को सरलता से समझने के लिए कृषकों को कुछ आंकड़े ध्यान में रखने चाहिए। जैसे 30, 25, 20, 15 व 10 के पांच आंकड़ों के माध्यम से तकनीक को समझा जा सकता है। जिसका मतलब साफ है मृदा व जल संरक्षण तकनीक से 30 प्रतिशत, जमीन के आधार पर विभिन्न प्रजातियों का चयन-25 प्रतिशत, खड़ी फसल में निराई के माध्यम से नमी संरक्षण- 20 प्रतिशत, संतुलित खाद व उर्वरकों के प्रयोग से 15 प्रतिशत तथा रोग व कीट सुरक्षा उपायों को अपनाकर 10 प्रतिशत तक उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

इन सीटू नमी संरक्षण

महाराष्ट्र में मुख्य रूप से वर्षा के रूप में प्राप्त जल का संरक्षण कर किया जाता है। इसे ही वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर 10×10 मी. की क्यारी एक विशेष प्रकार के यंत्र से बनायी जाती है। यह कार्य जुलाई महीने में कर लेना चाहिए क्योंकि महाराष्ट्र में 15 जुलाई से 15 सितम्बर के दौरान बारिश होती है जिसको संरक्षित कर ज्वार के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

जमीन के प्रकार के अनुसार प्रजातियों का चयन

महात्मा फुले कृषि विद्यापीठ, राहुरी द्वारा विकसित प्रजातियों को कृषि विज्ञान केंद्र के माध्यम से किसानों के प्रक्षेत्र तक पहुँचाया गया है। इसमें वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिये हल्की जमीन के लिए फुले अनुराधा, मध्यम जमीन के लिए-फुले सुचित्रा, भारी जमीन के लिए-फुले वसुधा व सिंचित क्षेत्रों के लिए फुले रेवती प्रजातियों के माध्यम से दाने व कड़वी दोनों के उत्पादन को बढ़ाने का कार्य किया गया है।

आज का पुरुषार्थ ही कल का भाग्य है।
-डा. भीमराव अम्बेडकर

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ d lrg&fpUg

v'kkd dekj JhokLro

io iz/kku oKkfud] Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

गन्ने के विविध आयामों में 67 वर्षों से बहुमुखी अनुसंधान तथा प्रसार एवं प्रशिक्षण में कार्यरत एवं गन्ना कृषकों तथा शर्करा उद्योग की सेवा में सन्नद्ध एवं अग्रणी भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान, लखनऊ के समय-बद्ध सतह-चिन्ह निम्नवत हैं :

1920: *'इंडियन शुगर कमेटी'* ने गन्ने की कृषि तथा शर्करा प्रौद्योगिकी से संबन्धित समस्याओं के निराकरण हेतु इंपीरियल शर्करा अनुसंधान संस्थान की स्थापना की संस्तुति की।

1948 (8 मई): लखनऊ में भारत सरकार के रक्षा मंत्रालय ने भदरुख ग्राम में 555.378 एकड़ भूमि 'शर्करा प्रौद्योगिकी एवं कृषि अनुसंधान केंद्र' स्थापित करने तथा कर्मचारियों एवं विद्यार्थियों को अनुसंधान एवं अध्यापन की सुविधा हेतु एक छोटी चीनी मिल लगाने के लिए स्थानान्तरित की। (भारत सरकार प्रपत्र संख्या 35/16/एल/सी-एल/47/4065-एल दिनांक 8 मई, 1948)। इस भूमि का अधिग्रहण 'इंडियन सेंट्रल शुगरकेन कमेटी' द्वारा किया गया। इस भूमि पर उस समय 'हिन्द फ्लाइंग क्लब' विद्यमान था जिसे अमौसी स्थानान्तरित किया गया, जो संभवतः आज के चौधरी चरण सिंह विमानपत्तन, अमौसी के रूप में विद्यमान है।

1948 (28 अगस्त): लखनऊ में भारतीय शर्करा प्रौद्योगिकी एवं गन्ना अनुसंधान संस्थान स्थापित करने हेतु योजना, भावी रूप-रेखा एवं व्यय पर विचार-विमर्श के लिए 'भदरुख परामर्शी उपसमिति' की लखनऊ में बैठक हुई। इसी बैठक में इस संस्थान की स्थापना हेतु अन्य आवश्यक वैज्ञानिक जानकारी जुटाने हेतु दो विशेषज्ञों डा. टी.एस. वेंकटरमण तथा श्री एस.सी. राय को विश्व के प्रमुख गन्ना उत्पादक देशों में भेजकर आवश्यक जानकारी जुटाने का प्रस्ताव भी किया गया।

1951 (10 सितम्बर): तत्कालीन खाद्य एवं कृषि मंत्री, भारत सरकार ने निर्णय लिया कि इस संस्थान को स्थापित करने की पहल के रूप में सस्य विज्ञान, कृषि अभियंत्रण, कीट विज्ञान एवं कवक विज्ञान अनुभागों की स्थापना भारतीय शर्करा प्रौद्योगिकी एवं गन्ना अनुसंधान संस्थान 'गन्ना अनुभाग प्रभाग' का प्रखण्ड बना कर की जाए।

1952 (16 फरवरी): भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ का शिलान्यास श्री के.एम. मुंशी, तत्कालीन माननीय केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मंत्री, भारत सरकार के कर कमलों द्वारा हुआ। इस संस्थान के निदेशक पद का कार्यभार राष्ट्रीय शर्करा संस्थान, कानपुर के निदेशक श्री जे.एम. साहा को सौंपा गया।

प्रारम्भ में इसका नाम 'केन्द्रीय गन्ना अनुसंधान केंद्र' था तथा इसके 1951-52 के वार्षिक प्रतिवेदन में इसके कार्यवाहक निदेशक श्री जे.एम. साहा ने उल्लेख किया है कि भारतीय शर्करा प्रोद्यौगिकी एवं गन्ना अनुसंधान संस्थान की आधारशिला दिनांक 16 फरवरी, 1952 को श्री के.एम. मुंशी, माननीय केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मंत्री, भारत सरकार के कर कमलों द्वारा रखी गयी।

1952-53: चार अनुभागों; सस्य विज्ञान, कृषि अभियंत्रण, कीट विज्ञान एवं कवक विज्ञान वाले मुख्य भवन का निर्माण हुआ। 21 अगस्त, 1951 को कृषि अभियंत्रण अनुसंधान हेतु श्री सी.पी. राजूय तथा 4 जनवरी, 1952 को कीट वैज्ञानिक श्री बी.डी. गुप्ता की नियुक्ति हुई। सस्य विज्ञान विशेषज्ञ के रूप में श्री ए.आर. खान तथा कवक विज्ञान विशेषज्ञ के रूप में श्री ए.आर. रफे की नियुक्ति हुई।

1954 (23 नवम्बर): डा.बी.के. मुखर्जी को संस्थान के प्रथम पूर्णकालिक निदेशक के रूप में नियुक्त किया गया।

1954 (1 जनवरी): भारत सरकार ने इस संस्थान को अपने नियंत्रण में लिया।

1955: इस संस्थान के विकास के निमित्त आस्ट्रेलिया व इंडोनेशिया गए प्रतिनिधिमण्डल की रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिसमें इन देशों में गन्ना अनुसंधान से संबन्धित प्रमुख विशेषताओं को इंगित करते हुए भारत में प्रति इकाई क्षेत्रफल गन्ना की उपज व शर्करा उत्पादन बढ़ाने के निमित्त सुझाव दिए गए।

1956: पादप कार्यिकी तथा कृषि रसायन एवं मृदा विज्ञान अनुभागों की स्थापना की गयी।

1966: सांख्यिकी अनुभाग की स्थापना हुई।

1969: वनस्पति विज्ञान एवं प्रजनन अनुभाग की स्थापना हुई।

1969 (1 अप्रैल): संस्थान का भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद,

नई दिल्ली द्वारा अधिग्रहण कर लिया गया। 31 मार्च 1969 तक यह संस्थान खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास एवं सहयोग मंत्रालय, भारत सरकार के कृषि विभाग के एक अधीनस्थ कार्यालय के रूप में कार्यरत रहा।

1970 (16 जुलाई): गन्ने से संबन्धित राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं से जुड़े अनुसंधान कार्य में समन्वयन तथा कृषि जलवायु की विभिन्न परिस्थितियों में गन्ने की अधिक उपज व शर्करा देने वाली कृषि प्रौद्यौगिकी के विकास हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने गन्ने से संबन्धित अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (गन्ना) की स्थापना की जिसका मुख्यालय इसी संस्थान में रखा गया। डा. श्यामा चरण श्रीवास्तव इसके पहले परियोजना समन्वयक नियुक्त किए गए।

1970: हमारे देश में चुकन्दर को एक वैकल्पिक शर्करा फसल के रूप में विकसित करने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने चुकन्दर से संबन्धित अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (चुकन्दर) की स्थापना की जिसका मुख्यालय इसी संस्थान में रखा गया। डा. आर. नरसिम्हन इसके पहले समन्वयक थे (इसे 1976 में कुछ अपरिहार्य कारणों के चलते गोबिन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्यौगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर स्थानान्तरित कर दिया गया)।

1976: संस्थान के 'चुकन्दर प्रजनन आउट-पोस्ट' की स्थापना भाकृअनुप-भारतीय पशुविज्ञान अनुसंधान संस्थान, बरेली के मुक्तेश्वर (नैनीताल, उत्तराखंड) परिसर में की गई।

1978 (28 मार्च): संस्थान के 'जैव-नियंत्रण केंद्र', की प्रवरानगर, जनपद अहमदनगर, महाराष्ट्र में स्थापना की गयी। इस केंद्र के प्रस्ताव का अनुमोदन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा दिसम्बर, 1977 में किया गया था।

1986: चुकन्दर से संबन्धित अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (चुकन्दर) को पंतनगर से पुनः भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में स्थानान्तरित किया गया।

1988 (8 दिसम्बर): अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (प्रसंस्करण, रखरखाव तथा भंडारण, गुड़ तथा खांडसारी) की स्थापना की गयी। इसे अप्रैल 2004 में, अखिल भारतीय समन्वित परियोजना (कटाई-उपरांत प्रौद्यौगिकी) जिसका मुख्यालय लुधियाना स्थित भाकृअनुप-केन्द्रीय कटाई-उपरांत इंजीनियरिंग तथा प्रौद्यौगिकी संस्थान (सिफेट), में है, संविलीन कर दिया गया।

1999 (25 अक्टूबर): लखनऊ जनपद में कृषि के समग्र विकास तथा कृषकों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु स्थापित कृषि विज्ञान केंद्र *(फार्म साइन्स सेंटर)* को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में स्थानान्तरित किया गया।

2004 (25 अप्रैल): क्षेत्रीय केंद्र मोतीपुर, मुजफ्फरपुर (बिहार) को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में स्थानान्तरित किया गया। इस केन्द्र को मूलतः 1988 में गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर द्वारा गन्ना जीवद्रव्य तथा प्रजातियों के भारत के उत्तर-मध्य गन्ना क्षेत्र में मूल्यांकन हेतु स्थापित किया गया था।

2014 (19 अगस्त): भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों/निदेशालयों/राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्रों के नाम के पूर्व 'भाकृअनुप' उपसर्ग के रूप में लगाना संरूप अधिदेशात्मक (भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कार्यालय आदेश सं. 95(9)/2014-Per. 3(2), दिनांक 19 अगस्त, 2014) किए जाने के उपरांत संस्थान का नाम 'भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ' हो गया।

''मिलन प्रीति किमि जाइ बखानी। कबिकुल अगम करम मन बानी।
परम प्रेम पूरन दोउ भाई। मन बुधि चित अहमिति बिसराई।''

अर्थात्- अतः ऐसे में आज भाई-भाई को इसी प्रकार से स्नेह व प्रेम की महती आवश्यकता है। अक्सर सुनने में आता है कि संपत्ति या व्यवसाय विवाद के चलते भाइयों में आपसी कटुता पैदा हो जाती है।

xUus dk jl dk Qk;nk vkSj uqdlku

fn0;k lkguh] lxhrk JhokLro] vf'ouh nÙk ikBd ,oa jk?koUnz dqekj
Hkk-d-vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

एक गिलास ठण्डा गन्ने का रस न केवल हमारी प्यास को बुझाता है बल्कि हमें ऊर्जा से भी भर देता है। गर्मी को दूर करने के लिए इसकी लोकप्रियता को देखते हुए यह कोई आश्चर्य नहीं है कि भारत गन्ने के प्रमुख उत्पादक देशों में से एक है। गन्ने का वैज्ञानिक नाम *'सैकेरम ऑफिसिनेरम'* है। इसे स्थानीय भाषा के आधार पर कई अलग-अलग नामों से बुलाया जाता है। गन्ने में प्रचुर मात्रा में कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन, कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, जस्ता, पोटैशियम और विटामिन-ए, बी-कॉम्प्लेक्स और सी भी पाया जाता है। गन्ने की 36 से भी अधिक किस्में पायी जाती हैं। सबसे पहले इसकी मूल खेती पापुआ न्यू गिनी में हुई थी।

गन्ने में वसा नहीं होता है। इसका रस 100 प्रतिशत प्राकृतिक पेय है। इसमें लगभग 30 ग्राम प्राकृतिक चीनी है। इसीलिए मिठास के लिए इसमें आपको अतिरिक्त चीनी मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है। जलवायु के आधार पर गन्ने के पौधे को पकने में 9-24 महीने लग सकते हैं। गन्ने के रस से प्राप्त चीनी में केवल 15 कैलोरी होती हैं। गन्ने का रस सुक्रोज, फ्रक्टोज और अन्य कई शर्कराओं का मिश्रण है। इसलिए यह स्वाद में मीठा होता है। एक गिलास गन्ने के रस में कुल 13 ग्राम आहार फाइबर होता है जो शरीर के कई कार्यों को पूरा करने में आवश्यक है।

गन्ने के रस के फायदे

बचाए मुहाँसों से: गन्ने के रस के नियमित सेवन से मुहाँसे जैसी त्वचा की समस्याएँ आसानी से ठीक की जा सकती हैं। यदि आप मुहाँसे की समस्या से ग्रस्त हैं तो प्रभावी परिणाम के लिए आप गन्ने के रस का मास्क आजमाएँ। इसके लिए आपको गन्ने के रस और मुलतानी मिट्टी की आवश्यकता होगी। गन्ने के रस की कुछ मात्रा में मुलतानी मिट्टी को मिलाकर एक तरल मास्क बनाएँ। इस मास्क को अपने चेहरे व गर्दन पर 20-25 मिनट के लिए लगाएँ। अब अपने चेहरे को ठण्डे पानी से साफ कर लें। यह उपाय सप्ताह में 2-3 बार करें।

गन्ने का रस अल्फा हाईड्रॉक्सी एसिड का एक अच्छा स्रोत है। जैसे ग्लाईकोलिक एसिड, जो *सैल टर्नओवर* को बढ़ाने में मदद करता है। इसके अलावा गन्ने का रस त्वचा की मृत कोशिकाओं के संचय को कम करने में मदद करता है।

त्वचा के लिए लाभदायक: क्या आप असामान्य रूप से झुर्रियों के बारे में चिन्तित हैं जिसकी वजह से अपनी आयु में भी ज्यादा बड़े लग रहे हैं? लेकिन गन्ने का रस बुढ़ापे के लक्षणों को कम करने में मदद करता है। गन्ने के रस में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट्स, फ्लेवोनोइड्स और फीमोलॉजिक यौगिकों की उपस्थिति चमकीली, नरम और मॉइस्चराईजिंग त्वचा पाने का एक अच्छा स्रोत्र है।

ऊर्जा का अच्छा स्रोत: यदि आप निर्जलीकरण का अनुभव कर रहे हैं, तो गन्ने का रस तत्काल ऊर्जा का सबसे अच्छा स्रोत है। यह आपको ताजा और ऊर्जा से भरपूर करने का बहुत अच्छा स्रोत है। गन्ने में सुक्रोज होता है जो आसानी से आपके शरीर द्वारा अवशोषित होता है। शरीर से खोई हुए शर्करा के स्तर को पुनः प्राप्त करने के लिए इस शर्करा का उपयोग किया जाता है।

गर्भवती महिलाओं के लिए वरदान: गन्ने का रस गर्भवती महिलाओं के आहार के लिए बहुत ही अच्छा माना गया है। यह सुरक्षित गर्भधारण की सुविधा प्रदान करता है। इस अद्भुत रस में फोलिक एसिड और विटामिन बी³ पाया जाता है, जो स्पाइना बिफाडा जैसे तंत्रिका जन्म दोषों से रक्षा के लिए जाने जाते हैं। इसके अलावा, शोध में पाया गया है कि गन्ने का रस महिलाओं की कई समस्याओं को कम कर देता है जिससे गर्भधारण की संभावना बढ़ जाती है।

साँसों में बदबू के लिए लाभप्रद: साँसों में बदबू सामाजिक शर्मिंदगी का एक प्रमुख कारण हैं। अकसर दाँत सड़ने की वजह से भी साँसों में बदबू आती है। लेकिन यदि आप नियमित रूप से गन्ने का रस पियेंगे तो आप इससे छुटकारा पा सकते हैं। यदि आपका दंत क्षय का इतिहास है जो साँसों में बदबू के लिए जिम्मेदार होता है तो आपको गन्ने के रस के घरेलू उपाय के रूप में विचार करना चाहिए। इसके अलावा, साँसों में बदबू पोषक तत्वों की कमी का एक लक्षण है। गन्ने के रस में कैल्शियम और फॉस्फोरस जैसे खनिजों की भी अधिक मात्रा होती है जो दाँतों को मजबूत करने में मदद करते हैं।

रखें हड्डियों को मजबूत: हर बढ़ते बच्चे को एक गन्ने की पोरी जरूर खाना चाहिए या स्वादिष्ट गन्ने के रस का सेवन करना चाहिए। इसे प्रयोग करने से आप हड्डी से संबंधित समस्याओं को खुशी से भूल सकते हैं। गन्ना कैल्शियम का बहुत अच्छा स्रोत है जो हड्डियों तथा आपके कंकाल के निर्माण में मदद करता है।

इसलिए यह बच्चों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

बुखार में लाभकारी: गन्ने का रस बुखार के उपचार में सहायक होता है। गन्ने का रस पीने से प्रोटीन की हानि को रोका जा सकता है जिससे कमजोरी और दर्द हो सकता है। इसलिए गन्ने के रस को बुखार वाले विकारों के मामलों के इलाज के लिए बेहद फायदेमंद माना जाता है जो बढ़ते बच्चों में बेहद आम होते हैं।

यकृत के लिए लाभप्रद: गन्ने का रस पीलिया जैसी यकृत से संबंधित बीमारियों के लिए सबसे अच्छा इलाज माना जाता है। पीलिया होने पर एक गिलास ताजा गन्ने के रस में थोड़ा सा नींबू का रस मिला करके दिन में 2-3 बार पिएं। पीलिया यकृत के खराब कामकाज के साथ भारी हुई पित्त नलिकाओं के कारण होता है। गन्ना आपके शरीर में ग्लूकोज का स्तर बनाए रखता है। इसके अलावा प्रकृति में क्षारीय होने के नाते गन्ने का रस आपके शरीर में इलेक्ट्रोलाइट संतुलन बनाए रखने में मदद करता है और इस तरह यह आपके यकृत को तेजी से खराब होने से रोकता है।

पाचन विकार को दूर करे: यदि आप पाचन की समस्या से पीड़ित हैं तो आपको अपने आहार में गन्ने का रस अवश्य शामिल करना चाहिए। गन्ने का रस एक स्वस्थ और तनावरहित जीवन के लिए बेहद जरूरी है। गन्ने के रस में मौजूद पोटैशियम आपके पेट के पीएच स्तर को संतुलित करने और पाचन रस के स्राव की सुविधा प्रदान करता है।

कैंसर से बचाव में मददगार: यह आपको आश्चर्यचकित कर सकता है लेकिन गन्ने का रस कैंसर, विशेष रूप से प्रोस्टेट और स्तन कैंसर जैसे घातक रोगों के लिए एक व्यापक निवारक हो सकता है। एक शोध में पाया गया है कि गन्ने में फ्लेवोनोइड की उपस्थिति स्तन ग्रंथियों में कैंसर की कोशिकाओं को बढ़ने से रोकती है। इस प्रकार यह स्तन कैंसर के जोखिम को कम कर सकता है।

मधुमेह के नियंत्रण में: क्या गन्ने का रस मधुमेह रोगियों के लिए अच्छा है? यदि आपको लगता है कि गन्ने का रस एक, खराब विकल्प है क्योंकि आप मधुमेह से पीड़ित है तो आप गलत है। वास्तव में, गन्ना संयम से रहने वाले मधुमेह रोगियों द्वारा खाया जा सकता है।

गन्ने में सुक्रोज होता है जिसमें कम ग्लाइसेमिक सूचकाँक होता है। यह आपकी रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रण रखने में मद्द करता है।

खराब गले में फायदेमंद: यदि आपको गले में अचानक खुजली या जलन होती है तो उसे शांत करने के लिए आप गन्ने के रस में काला नमक व नींबू मिला करके पी लें। गन्ने के रस में भरपूर मात्रा में विटामिन सी पाया जाता है इसलिए यह खराब गले के लिए बहुत ही अच्छा घरेलू उपाय है। गन्ने का रस एक एंटीऑक्सीडेंट का समृद्ध स्रोत है जो कि *वायरल* या *बैक्टीरियल* संक्रमण को रोकता है।

वजन कम करने में लाभदायक: हालांकि यह एक मीठा पेय है फिर भी गन्ने का रस कुछ अतिरिक्त वजन को कम करने में मदद कर सकता है। गन्ने का रस हमारे शरीर में खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करने के लिए जाना जाता है जो वजन बढ़ने का मुख्य कारण है। यह घुलनशील फाइबर में भी अधिक होता है, जो हमें अपना वजन बढ़ाने में मदद करता है।

मूत्र पथ संक्रमण से बचाव: गन्ने का रस गुर्दे के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मद्द करता है और मूत्र पथ संक्रमण से जुड़ी समस्याओं को रोकता है। *यूटीआई* के इलाज के लिए इसका इस्तेमाल करने के लिए दिन में दो बार नींबू और नारियल का पानी मिलाकर गन्ने का रस लें।

गन्ने का रस शरीर में प्रोटीन के स्तर को बढ़ाने के लिए जाना जाता है। यह कई गुर्दा संबंधी रोगों जैसे पथरी, *यूटीआई* और *एसटीडी* से बचाता है। नियमित रूप से गन्ने का रस लेने से हानिकारक विषाक्त पदार्थों और अन्य तत्वों को निकालकर शरीर को शुद्ध करने में मद्द मिलती है। यह हमारे चयापचय को भी बढ़ा देता है।

नाखूनों को बेजान होने से बचाए: क्या आपने अपने रंग उतरे हुए और भंगुर नाखूनों को *'नेल आर्ट'* अथवा *'नेल पौलिश'* के विभिन्न प्रकारों से छुपाया हुआ है? इस समस्या का मुकाबला करने के लिए गन्ने का रस लगाने का प्रयास करें। पोषक तत्वों की कमी हमारे नाखूनों को बेजान तथा भंगुर बना देती है। चूँकि गन्ने का रस पोषक तत्वों से भरा हुआ है अतः यह आपके नाखूनों को पोषण देता है और उन्हें स्वस्थ बनाता है।

अम्लता को शांत रखे: चूँकि गन्ने का रस प्रकृति में क्षारीय है अतः यह हमारे पेट और आँतों में अम्लता और जलन को शांत कर सकता है। यह हमारे शरीर में अम्ल क्षार संतुलन बनाए रखने में भी मद्द करता है। इस प्रकार यह हमें अम्लता से भी छुटकारा दिलाता है।

बढ़ाए प्रतिरक्षा: गन्ने का रस आवश्यक एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर है जो हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को कई परतों से मजबूत करने में सहायता करता है। एंटीऑक्सीडेंट कई रोगों से लड़ते हैं, जिनमें यकृत और पाचन तंत्र प्रमुख हैं। ये एंटीऑक्सीडेंट शरीर में बिलरूबिन स्तर को भी बेअसर करते हैं।

रक्त चाप में लाभकारी: गन्ने के रस में पोटैशियम मौजूद होता है जो रक्त वाहिकाओं के तनाव और धमनियों को कम करने में मद्द करता है और रक्त चाप को कम करता है तथा एथेरोस्कलेरोसिस

दिल के दौरे और स्ट्रोक को भी कम करता है।

गन्ने के रस से नुकसान

हालांकि गन्ने का रस किसी भी जोखिम का कारण नहीं है। यह आमतौर पर तैयार की जाने वाली स्थितियों पर निर्भर करता है। यहाँ कुछ बाते हैं जिनके बारे में आपको जागरूक अवश्य होना चाहिए :

- एक सड़क के किनारे की दुकान का गन्ने के रस का एक गिलास पीना बहुत आसान लगता है हालांकि अगर यह अस्वस्थ स्थितियों में तैयार किया जाता है जिससे यह दस्त का कारण बन सकता है। इसका कारण यह है कि गन्ने का रस सूक्ष्मजीवों के लिए सबसे अच्छा प्रजनन स्थल माना जाता है जिस कारण यह दूषित हो जाता है और हमें नुकसान पहुँचा सकता है।
- 15 मिनट से अधिक समय तक फ्रिज के बाहर रखे हुए गन्ने के रस को कभी नहीं पीना चाहिए क्योंकि आपके पेट और आँतों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है।
- सुनिश्चित करें कि जिस स्टॉल से आप गन्ने का रस खरीदने की योजना बना रहे हैं, उसकी गन्ने की मशीन पर ज्यादा तेल का उपयोग नहीं किया गया हो क्योंकि वह तेल आपके शरीर को नुकसान पहुँचा सकता है।
- दैनिक रूप से दो गिलास से अधिक गन्ने के रस का सेवन न करें इससे आपके शरीर को नुकसान पहुँच सकता है।

गन्ने की तासीरः गन्ने के रस की तासीर ठंडी होती है इसलिए इसे गर्मियों में पीने की सलाह दी जाती है और गर्मियों में इसका सेवन करना ज्यादा फायदेमंद होता है। गन्ने के रस का उपयोग स्वास्थ्य से जुड़े और भी कई फायदों के लिए करना चाहिए।

गन्ने का रस पीने का सही समयः कसरत करने के बाद गन्ने का रस पीना शरीर के लिए ज्यादा लाभदायक होता है। कसरत करने के बाद इसे पीने से शरीर में ज्यादा ऊर्जा आती है।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

fljdk % ,d cgqi;kxh mRikn

fefFkys'k frokjh[1]] ugk i/kku[2]] f='kyk lkg[2]] ,l-vkb- vuoj[1] ,o ,-d- flg[1]
[1]Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ
[2]bfnjk xka/kh df"k fo'ofo|ky;] jk;iqj

किसी भी खाद्य पदार्थ की आस्वाद्यता (Palatability) मुख्यतः उसके स्वाद पर निर्भर करती है। कुछ ऐसे पदार्थ भी हैं जो भोजन का स्वाद बढ़ा देते हैं। सिरका इनमें में एक है जो पाश्चात्य, यूरोपीय एवं एशियाई देशों के भोजन में प्राचीन काल से ही प्रयोग होता आया है।

सिरका शर्करा एवं स्टार्चयुक्त फलों एवं सब्ज़ियों को अंतिम रूप से सड़ाकर बनाया जाने वाला तरल पदार्थ है। इसमें 4 से 8 प्रतिशत एसिटिक अम्ल तथा जिस पदार्थ से यह बनाया जाता है, उसके अनुसार लवण होते हैं।

यह दो अवस्थाओं में सड़ाकर बनाया जाता है। प्रथम अवस्था में शर्करा युक्त पदार्थ की शर्करा किण्वन *(फर्मेन्टेशन)* की क्रिया से अल्कोहल में परिवर्तित होती है। इस क्रिया को अल्कोहलीय किण्वन अथवा *'इथेनॉल फर्मेन्टेशन'* कहते है। द्वितीय अवस्था में इथेनॉल या अल्कोहल एसिटिक अम्ल में परिवर्तित होता है। जिसे एसिटिक एसिड किण्वन कहते हैं। एसिटिक एसिड ही सिरके का मुख्य तत्व है। सिरका एक ख़मीर पदार्थ है, जिसमें तीव्र गंध एवं खट्टा स्वाद एसिटिक अम्ल के कारण होता है।

गन्ने का सिरका

सिरके का पीएच मान प्रायः 2.4 से 3.4 होता है। भोजन में प्रयुक्त सिरके में प्रायः 4 से 8 प्रतिशत तक एसीटिक अम्ल होता है। सिरके का घनत्व लगभग 0.96 ग्राम/मि.ली. होता है। घनत्व का स्तर सिरके की अम्लता पर भी निर्भर करता है। खाना पकाने में इस्तेमाल होने वाले सिरके का घनत्व 1.05 ग्राम/मि.ली. होता है।

सिरके का इतिहास

सिरके का अंग्रेजी शब्द *'विनेगर'* है। *'विनेगर'* लैटिन शब्दों, *'विनम'* एवं *'एसर'* से मिल कर व फ्रांसीसी शब्द *'विन'* और *'ऐग्रे'* से आता है, जिसका अर्थ है खट्टी शराब। यह सेब द्वारा उत्पादित किया गया था, जिसे लोकप्रिय सेब साइडर सिरका के रूप में जाना जाता है, लेकिन अब सिरका गन्ने, चावल, माल्ट, नारियल, किशमिश, शहद, कीवी इत्यादि से भी बनाया जा सकता है। यह जिस पदार्थ से बनाया जाता है उसी के अनुसार इसका नाम भी होता है, जैसे- गन्ने का सिरका, चावल का सिरका, जामुन का सिरका आदि। यह मसाले, परिरक्षक एवं स्वादिष्ट कारक के रूप में अचार, विनाइग्रेटे, मर्गीड, सॉस और कई अन्य चीज़ों में प्रयोग किया जाता है। दुनिया भर के मानव विज्ञानी मानते हैं कि सिरका प्राचीन मिस्र, रोमन और यूनानियों के लिए जाना जाता था और इसका उपयोग लगभग 3,000 ईसा पूर्व से होता आ रहा है। प्राचीन यूनानी चिकित्सक हिप्पोक्रेट्रस ने इसे अपने मरीज़ों के लिए 400 ईसा पूर्व के आसपास दवा के रूप उपयोग किया था। चीनी चिकित्सक सुंगत्से, जिन्हें फ़ॉरेंसिक दवा के पिता के रूप में माना जाता है, उन्होंने संक्रमण से बचने के लिए सर्जरी से पहले हाथों की सफ़ाई के लिए इसका इस्तेमाल करने का सुझाव दिया था। यह ईसा मसीह के समय में भी मौजूद था और इसका उपयोग टॉनिक के रूप में किया जाता था जिससे स्वास्थ्य में लाभ हुआ करता था। इसका उपयोग यूरोप भर में किया जाने लगा और इतिहासकारों का कहना है कि क्रिस्टोफ़र कोलंबस ने उत्तरी अमेरिका की यात्रा पर सिरके की बैरल भी रखी थी। इसका उत्पादन शराब उत्पादन से अगला क़दम है। शराब के उत्पादन में ख़मीर को शर्करा के साथ संयोजित किया जाता है जो शर्करा को अल्कोहल में परिवर्तित कर देता है। इसके बाद एसिटिक अम्ल जीवाणु अल्कोहल को धीमी गति से सिरके में परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रक्रिया में कुछ सप्ताह से महीनों तक का समय लग जाता है। आजकल बेहतर तकनीक का उपयोग करके इस प्रक्रिया को त्वरित किया जा रहा है।

बनाने की विधि

इसे बनाने की दो विधियाँ (धीमी एवं तीव्र) प्रचलित हैं :

धीमी विधिः इस विधि में ख़मीरण पदार्थ को, जिसमें 5 से 10 प्रतिशत अल्कोहल होता है, बर्तनों या कड़ाहों में तीन चौथाई तक भरकर रख दिया जाता है। एक चौथाई स्थान इस कारण छोड़ा जाता है ताकि हवा के संपर्क के लिए पर्याप्त स्थान रहे। इसमें थोड़ा सा पहले से बना सिरका, जिसमें एसीटिक अम्ल के जीवाणु होते हैं, डाला जाता है जिससे किण्वन प्रक्रिया धीरे-धीरे आरंभ हो जाती है। इस विधि में किण्वन धीरे-धीरे होता है और इसके पूरा

होने में 3 से 6 माह तक लग सकते हैं। 30^0 से 35^0 सेल्सियस तापमान इसके लिए उपयुक्त होता है।

तीव्र विधिः यह औद्योगिक विधि है और इसका प्रयोग अधिक मात्रा में सिरका बनाने के लिए किया जाता है। बड़े-बड़े लकड़ी के पीपों को लकड़ी के बुरादे, झामक (प्यूमिस), कोक या अन्य उपयुक्त पदार्थों से भर देते हैं ताकि जीवाणु हवा के सम्पर्क में आ सकें। इनके ऊपर अल्कोहलीय और एसीटिक अम्ल जीवाणुओं को धीरे-धीरे टपकाया जाता है और फिर जिस रस से सिरका बनाना होता है, उसे ऊपर से गिराया जाता है। रस के धीरे-धीरे टपकाने से हवा पीपे में ऊपर की ओर उठती है और एसिटिक अम्ल तेजी से बनने लगता है। क्रिया तब तक चलती रहती है जब तक निश्चित पीएच का सिरका नहीं प्राप्त हो जाता।

सिरके का पोषण मूल्य

मानक संदर्भ के लिए राष्ट्रीय पोषक तत्व *डेटाबेस* के अनुसार 100 ग्राम सिरके में लगभग 93 ग्राम पानी, 1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 7 मि.ग्रा. कैल्शियम, 0.2 मि.ग्रा. लोहा, 5 मि.ग्रा. मैग्नीशियम, 8 मि.ग्रा. फॉस्फोरस, 73 मि.ग्रा. पोटैशियम, 5 मि.ग्रा. सोडियम और 5 ग्राम एसिटिक अम्ल एवं 21 किलो कैलोरी ऊर्जा होती है।

सिरके के प्रभावशाली लाभ

सिरके के कुछ स्वास्थ्य लाभों में मधुमेह एवं रक्तचाप नियंत्रण और *जेलीफ़िश स्टिंग* के लिए प्राथमिक चिकित्सा सम्मिलित हैं। यह शरीर के अम्ल-क्षार संतुलन को बेहतर बनाने में भी मदद करता है। एंटीबायोटिक गुणों में संभवतः कैंसर नियंत्रित करता है, और मुँह के जीवाणुओं से बचाता है। सिरके का स्वाद खट्टा और गंध तीखी होती है। घरों में खाद्य पदार्थों को संरक्षित रखने एवं स्वाद हेतु सिरके का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है लेकिन ऐतिहासिक रूप से इसका उपयोग दवा एवं टॉनिक के रूप में किया जाता था।

खाद्य को सुरक्षित रखने में सहायक

प्राचीन काल से ही सिरके को खाद्य परिरक्षक के रूप में प्रयोग किया जाता रहा है। सिरका जीवाणुरोधी गुणों के कारण सूक्ष्मजीवों को नियंत्रित करके आमतौर पर एक अच्छे परिरक्षक के रूप में कार्य करता है।

मधुमेह नियंत्रण में सहायक

सिरका मधुमेह रोगियों के लिए उपयोगी है। टाइप-2 मधुमेह रोगियों पर इसके प्रभाव जानने के लिए किए गए एक परीक्षण के अनुसार मधुमेह रोगियों में इंसुलिन पर सिरके का एक उत्तेजक प्रभाव पड़ता है तथा इंसुलिन प्रतिरोधी लोगों के मामले में इससे इंसुलिन संवेदनशीलता को बढ़ाने में मदद मिलती है।

खाद्य एलर्जी घटाने में सहायक

खाद्य एलर्जी में सिरके का उपयोग एक योजक के रूप में किया जा सकता है। वह लोग, जिनको अंडे, मुर्गे के मांस और दाल से एलर्जी हो, उसमें थोड़ी मात्रा में सिरका डाल कर खा सकते हैं।

जेलीफ़िश स्टिंग के इलाज में सहायक

बॉक्स जेलीफ़िश को ग्रह पर सबसे अधिक विषैले जीवों में से एक माना जाता है। इस जीव में विष ग्रंथियां होती है और इसका विष मनुष्य के लिए घातक हो सकता हैं। इस विष के प्राथमिक उपचार में सिरका सहायक होता है।

कैंसर से बचाव में सहायक

मानव कैंसर कोशिकाओं पर सिरके के प्रभाव पर अध्ययन किया गया है तथा यह पाया गया है कि सिरका कैंसर कोशिकाओं के विकास को नियंत्रित करता है।

मुँह के जीवाणुओं को नियंत्रित करने में सहायक

सिरके के रोगाणुरोधी गुण मुख के जीवाणुओं, जो दांतों और मसूड़ों के विभिन्न रोगों में पाए जाते हैं, को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं।

बालों की देखभाल

सिरका बालों को स्वस्थ बनाए रखने के लिए बहुत उपयुक्त है। सिर पर एक चम्मच सिरका लगाने से रूसी, खुजली एवं बालों के झड़ने को कम किया जा सकता है।

त्वचा की देखभाल

त्वचा पर सिरका लगाने से त्वचा स्वस्थ, नरम एवं चमकदार हो जाती है। यह *सनबर्न* रोकने के लिए भी अच्छी तरह से काम करता है।

सिरके के औषधीय प्रयोग और लाभ

- आयुर्वेद में सिरके का प्रयोग औषधि के रूप में किया जाता है। सिरका बालों के लिए अच्छा है। रूसी, जूं जैसी समस्याओं से बचने के लिए सिरके का प्रयोग लाभकारी है। बालों की अच्छी तरह से कंडीशनिंग के लिए भी सिरके का इस्तेमाल किया जा सकता है।
- बालों में होने वाली फुंसी, फंगस और इसी तरह की अन्य समस्याओं को दूर करने और जीवाणु इत्यादि को नष्ट करने में भी सिरके का प्रयोग किया जाता है।
- भोजन के साथ सिरका खाने से रक्त पतला होता है।
- सिरका बुद्धि में तीव्रता का कारण बनता है और हृदय के लिए लाभदायक होता है।
- सिरका शरीर में कैल्शियम निर्माण में सहायक होता है और

शरीर की भीतरी क्रियाओं के लिए लाभकारी होता है।

- सिरका पाचन क्रिया में हानिकारिक जीवाणुओं का नाश करता है। जिन लोगों को पाचनतंत्र की समस्या होती है वह सिरके की सहायता से इन समस्याओं से छुटकारा पा सकते हैं।
- सिरका आमाशय में आमाशीय स्राव को संतुलित करता है।
- सिरका दांतों की गंदगी दूर करने और मसूड़े की सूजन में भी लाभदायक है।

सिरके के अन्य उपयोग

फ़र्श और फ़्रिज को साफ़ करने में

सिरके का घोल फ़र्श और रसोई की अलमारियों को साफ करने में मददगार होता है लेकिन ध्यान रहे कि फर्श संगमरमर या ग्रेनाइट का न हो अन्यथा यह एसिड होने के कारण फ़र्श को हानि पहुँचा सकता है। यह फ़्रिज से बासी दुर्गन्ध को भी हटाता है।

दाग़ हटाने में

पसीने के ख़राब दाग़ों को हटाने के लिए स्प्रे करने वाली बोतल से कपड़ों को धोने से पहले सिरके से स्प्रे करने से दाग़-धब्बे ग़ायब हो जाते हैं।

कपड़ों को मुलायम करने में

कपड़ों को मुलायम करने के लिए वॉशिंग मशीन में आख़िरी धुलाई से पूर्व सिरका डालने से कपड़े नर्म हो जाते हैं। इससें साबुन के अंश भी हट जाते हैं।

फूलों को तरो-ताज़ा रखने के लिए

कटे फूलों को मुरझाने से बचाने के लिए फूलदान के पानी में एक चम्मच सिरका डालने से फूलों को लम्बे समय तक तरो-ताज़ा बने रहने में मदद मिलती है।

हिचकी की रोकथाम में

सिरके को हिचकी के लिए उपचार माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि हिचकी को रोकने के लिए एक चम्मच सिरका पी लेना चाहिए।

दुर्गन्ध मिटाने के लिए

अगर कोई भोज्य पदार्थ पकाने के दौरान जल गया हो तो कमरे में एक कटोरे में तीन-चौथाई भाग सफेद सिरका पानी के साथ मिलाकर रखने से दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है।

खरपतवार समाप्त करने के लिए

सिरका खरपतवारों को समाप्त कर देता है। बाग़वानी के लिए प्रयोग किया जाने वाला खरपतवार नाशक 25 प्रतिशत सिरके के साथ और भी शक्तिशाली हो जाता है।

गले में ख़राश के लिए

एक कप गरम पानी में एक चम्मच सिरका डालकर ग़रारा करने से गले की ख़राश में आराम मिलता है। इसमें कुछ चम्मच शहद डालने से यह और भी प्रभावशाली होने के साथ-साथ पीने लायक़ भी हो जाता है।

दुखती मांसपेशियों में राहत के लिए

एक कप पानी में एक चम्मच सिरके को मिलाकर एक कपड़े द्वारा दर्द वाले स्थान पर 20 मिनट तक लगाने से दुखती माँसपेशियों को आराम मिलता है।

एयर फ़्रेशनर

सिरके का एसिटिक अम्ल बदबू अवशोषित करता है इसलिए इसे कमरे में छिड़कने से बदबू दूर हो जाती है। इससे कमरों की सतहों को पोछ भी सकते हैं।

स्टिकर हटाने के लिए

थोड़ा सा सिरका गर्म करके एक कपड़े द्वारा उसे स्टिकर पर लगाकर थोड़ी देर के लिए छोड़ देने से स्टिकर हटाने में मदद मिलती है। इससे उस स्टिकर के हटने पर कोई दाग़ भी नहीं रह जाता है। इस उपाय से दीवार पर चिपकाए गए पोस्टर को भी हटाया जाता है।

माँस को मुलायम करने के लिए

माँस को रात भर सिरके में रखने से वह मुलायम हो जाता है।

भरी नालियों को खोलने तथा कचरे के डिब्बों को स्वच्छ करने में

नाली में तीन-चौथाई कप बेकिंग सोडा डालने के बाद आधा कप सिरका डालने से नाली साफ़ हो जाती है।

फफूँद संक्रमण का उपचार

सिरके के प्रयोग से अंगों पर लगने वाली फफूँद को समाप्त किया जा सकता है।

भोजन में मसालों को निष्क्रिय करने के लिए

सिरका अधिक मिर्च के दुष्प्रभाव को समाप्त कर सकता है तथा मसाले को निष्क्रिय करने के लिए एक चम्मच सिरका भोजन में डालने से मसालों की तीव्रता कम हो जाती है।

जंग हटाने के लिए

जंग लगे उपकरणों को सिरके से भरे एक बर्तन में गर्म करके पानी से अच्छी तरह धोने से जंग से छुटकारा पाया जा सकता है।

dyk&ik"kd rRo dh ek=k ,o vk"k/kh; x.k

,l-Mh- ik.M;[1]] lh-d- ukjk;u[1]] jktho jtu jk;[2] ,o vejUn dekj[1]
[1]Hkkd vui&jk"Vh; yhph vu l/kku dUn] e'kgjh] etQjij
[2]Hkkd vui&Hkkjrh; xUuk vu l/kku lLFkku] y[kuÅ

केला विश्व में उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति उपयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण फल है। यह वाणिज्यिक दृष्टि से भी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। विश्व के उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों में लगभग 120 देशों में इसका उत्पादन होता है। केला विश्व के कृषि उत्पादनों में धान, गेहूँ एवं मक्का के बाद चतुर्थ स्थान पर है। अच्छे उत्पादन, सर्वसुलभ उपलब्धता एवं सुपाच्य आहार के कारण एक यह एक जनप्रिय फल है।

केला भारत के उष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों में प्रमुख रूप से उगाया जा रहा है। वर्तमान में केले का उत्पादन 291.3 लाख टन है, जो लगभग 8.41 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, असम, गुजरात, बिहार, पं. बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश एवं केरल राज्यों में उगाया जाता है। क्षेत्रफल एवं उत्पादन की दृष्टि से महाराष्ट्र, तमिलनाडु एवं मध्य प्रदेश का स्तर अच्छा है। केले के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में निरंतर वृद्धि हुई है एवं वर्तमान में भारत का स्थान केला उत्पादक देशों में प्रथम है। यह वृद्धि अच्छी प्रजातियों के प्रचलन, उच्च उत्पादन तकनीकी एवं समन्वित कीट एवं बीमारियों के नियंत्रण के कारण संभव हो सकी है। अच्छे उत्पादन के बावजूद भारत का स्तर निर्यात की दृष्टि से संतोषजनक नहीं है या नगण्य है। यद्यपि भारत, केला उत्पादन में अग्रणी है फिर भी प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष उपयोग अन्य उत्पादक देशों से कम है। आज का युग भूमंडलीकरण एवं उदारीकरण का युग है। भारत के उद्योग एवं कृषि को बहुराष्ट्रीय कंपनियों से बड़ा मुकाबला करना पड़ रहा है। केला उद्योग भी इससे अछूता नहीं हैं। केला उत्पादक किसानों को अपनी उपज से अच्छी आय प्राप्त करने के लिये अत्यंत प्रतियोगिताक्षम होना होगा। उत्पादकता सुधार, फसल सुरक्षा, मूल्य संवर्धन एवं उत्पाद विविधीकरण आदि ही प्रतियोगिता क्षमता हासिल करने की कसौटियां हैं। किसानों एवं उद्यमियों को प्रतियोगिताक्षम बनने के लिए पहले नयी-नयी प्रौद्योगिकियों से अवगत होना होगा।

गेहूँ, धान, दूध के बाद केला महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ है। बदलते जीवन परिवेश एवं बढ़ते जनसंख्या दबाव में आने वाले समय में केला का खाद्य सुरक्षा में अहम योगदान होगा। संस्तुत आहार मात्रा (आर.डी.ए.) के अनुसार एक पूर्ण वयस्क को 3000 कैलोरी ऊर्जा, 0.5-0.6 मि.ग्रा. कैल्शियम, 25 मि.ग्रा लोहा, 750 माइक्रोग्राम रेटिनाल, 1.5 मि.ग्रा थायमिन, 1.70 मि.ग्रा राइबोफ्लोबिन, 50-100 माइक्रोग्राम फोलिक एसिड, 30-50 मि.ग्रा, विटामिन सी, 3000 माइक्रोग्राम कैरोटिन एवं 200 आई.यू विटामिन डी की आवश्यकता होती है।

पोटैशियम से भरपूर फल केला

केले में पोटैशियम की मात्रा 350-420 मि.ग्रा. तक उपलब्ध होती है। पोटैशियम उच्च रक्तचाप को कम करता है। साथ ही साथ कोशिकाओं को सक्रिय करता है, जो शरीर को ताजगी प्रदान करती है।

उम्र के अनुसार पोटैशियम की आवश्यकता

me	ikVf'k;e dh vko';drk ¼xke@fnu½
0.6 माह के बच्चों के लिए	0.40
7–12 माह के बच्चों के लिए	0.70
1–3 वर्ष के बच्चों के लिए	3.00
4–8 वर्ष के बच्चों के लिए	3.80
9–13 वर्ष के बच्चों के लिए	4.50
14–18 वर्ष के बच्चों के लिए	4.70
19 वर्ष एवं ऊपर के वयस्कों के लिए	4.70

पोटैशियम तत्व के गुणों एवं केले के फलों में उसकी उपलब्धता केले के उपयोग की महत्ता को दर्शाती है। इसी कारण इसको बच्चों के लिए प्रथम खाद्य पदार्थ *(बेबी फूड)* के रूप में उपयोग में लाया जाता है एवं बच्चों को आवश्यक पोषक तत्वों की प्रतिपूर्ति करता है।

केले के औषधीय गुण

केले के फलों एवं छिलकों में सेरोटोनिन, नार-इपीनेफरीन एवं डोपामाइन की उपलब्धता पायी जाती है। इनकी मात्रा गूदे एवं छिलका में निम्न प्रकार होती है :

सेरोटोनिन गैस्ट्रिक स्राव को कम करता है एवं शरीर (पेट की क्रियाओं) को स्वस्थ रखता है। इसकी 20 मि.ग्रा. तक की मात्रा का शरीर पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता है। पेट की बीमारियों,

भारत के केला उत्पादक राज्यों में गत तीन वर्षों में केला के अन्तर्गत क्षेत्र, उत्पादन व उत्पादकता

jkT;	{k= ¼000] g-½ mRiknu ¼000] efVªd Vu½ mRikndrk ¼efVªd Vu]@g-½								
	2014&15			2015&16			2016&17 ¼vuqekfur½		
	{k=	mRiknu	mRikndrk	{k=	mRiknu	mRikndrk	{k=	mRiknu	mRikndrk
गुजरात	67.02	4324.36	64.52	64.69	4185.52	64.70	64.69	4185.52	64.70
आंध्र प्रदेश	79.36	3487.31	43.94	75.72	3570.62	47.16	86.32	4143.55	48.00
उत्तर प्रदेश	95.24	4147.18	43.54	94.61	4331.65	45.78	94.99	3640.73	38.33
महाराष्ट्र	42.59	1990.58	46.73	67	3061.21	45.69	67.4	3078.73	45.68
कर्नाटक	74.03	4030.58	54.44	69.55	3025.15	43.50	74.68	3072.49	41.14
मध्य प्रदेश	102.89	2593.33	25.20	96.63	2370.95	24.54	101.53	2489.5	24.52
बिहार	27.8	1836	66.04	28.35	1858.05	65.54	24.31	1646.89	67.75
केरल	35	1535	43.85	34.8	1535.3	44.12	35.15	1550.65	44.12
पश्चिम बंगाल	83.98	1270.57	15.12	84.56	1292.41	15.28	81.51	1224.13	15.02
असाम	46.6	1124	24.12	48.07	1172.34	24.39	49	1195.6	24.40
छत्तीसगढ़	51.28	865.67	16.88	51.1	882.71	17.27	55.42	979.34	17.67
उड़ीसा	23.87	5643.43	236.42	25.76	587.42	22.80	27.06	618.92	22.87
त्रिपुरा	24.76	469.25	18.95	24.47	462.71	18.91	24.49	466.62	19.05
तेलंगाना	8.95	325.52	36.37	4.65	183.7	39.51	3.88	143.88	37.08
मिजोरम	10.87	141	12.97	10.91	141.03	12.93	10.94	141.04	12.89
नागालैंड	7.32	109.8	15.00	7.25	108.51	14.97	7.34	116.72	15.90
मेघालय	7.06	88.7	12.56	7.11	88.71	12.48	7.24	94.32	13.03
मणिपुर	6.99	94.22	13.48	6.95	93.95	13.52	6.65	89.86	13.51
अरुणाचल प्रदेश	6.5	20	3.08	5.42	31.64	5.84	5.48	31.96	5.83
झारखंड	0.54	1.3	2.41	12.53	33.28	2.66	9.02	31.47	3.49
पंजाब	0.13	7.51	57.77	0.11	6.43	58.45	0.12	6.72	56.00
सिक्किम	0	0	0.00	1.15	3.56	3.10	1.2	3.87	3.23
राजस्थान	0.03	0.25	8.33	0.03	0.41	13.67	0.04	0.41	10.25
हिमाचल प्रदेश	0.09	0.29	3.22	0.09	0.42	4.67	0.09	0.35	3.89
अन्य	4.92	53.31	10.84	5.03	53.55	10.65	5.08	57.19	11.26
कुल	821.80	29221.47		841.19	29134.82		858.10	29162.55	

स्रोतः उद्यानिकी सांख्यिकी विभाग

Ø-l	rRo	xnk	fNydk
1.	सेरोटोनिन	8.5 मि.ग्रा./ग्राम	47–93 माइक्रो ग्राम
2.	नार–इपीनेपरिन	1.9 मि.ग्रा./ग्राम	122 माइक्रो ग्राम
3.	डोपामाइन	7.9 बिमाक्रो ग्राम	700 माइक्रोग्राम/ग्राम

कब्ज एवं पेप्टिक-अल्सर में केला लाभदायक है। ऐसा हो सकता है कि ये इन पदार्थों की उपलब्धता इन बीमारियों में लाभदायक हो।

- केले के पके फलों में *लैक्जेटिव* गुण भी होते हैं। जो पेट को साफ रखने में मदद करता है। मान्यताओं के अनुसार पूवन या चंपा प्रजाति के फल इसमें विशेष लाभदायक है।
- केले के पके फल डायरिया, पेचिश एवं आंत के घाव (अल्सर) में भी लाभदायक है। विशेष रूप से वे प्रजातियां (करपूरावल्ली या कन्थाली) अधिक लाभकारी होती है। जिसमें पेक्टिन की मात्रा ज्यादा होती है।
- बच्चों के लिए केले के फलों से सुपाच्य खाद्य पदार्थ तैयार किये जाते हैं, जो बच्चों के ऊर्जा के अच्छे स्रोत होते हैं एवं फूलों से बने पदार्थ मधुमेह रोगियों के अत्यंत लाभदायक होते हैं।
- कच्चे फलों एवं फूलों से बने पदार्थ मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत लाभदायक होते हैं।
- केले के फूलों का जूस पेचिश में बहुत लाभकारी होता है।
- केले के तने के रस का उपयोग हैजा, हिस्टीरिया एवं मिर्गी में उपयोगी है।

केले के फलों में पोषक तत्वों की मात्रा

ik"kd rRo	dyk ¼ifr 100 xke½	¶ykWVu ¼ifr 100 xke½
कार्बोहाइड्रेट	23.0 ग्रा.	32.0 ग्रा.
वसा	0.0 ग्रा.	0.0 ग्रा.
प्रोटीन	1.0 ग्रा.	1.0 ग्रा.
खाने योग्य रेशा	3.0 ग्रा.	2.0 ग्रा.
ऊर्जा (कैलोरी)	89.0 कैलोरी	122.0 कैलोरी
[kfut yo.k ¼ifr 100 xke½		
कैल्शियम	5.0 मि.ग्रा.	3.0 मि.ग्रा
मैग्नीशियम	27.0 मि.ग्रा.	37.0 मि.ग्रा.
फॉस्फोरस	22.0 मि.ग्रा.	34.0 मि.ग्रा.
पोटैशियम	358.0 मि.ग्रा.	499.0 मि.ग्रा.
सोडियम	1.0 मि.ग्रा.	4.0 मि.ग्रा.
लौह तत्व	0.26 मि.ग्रा.	0.6 मि.ग्रा.
मैंगनीज	0.27 मि.ग्रा.	0.0 मि.ग्रा.
जस्ता	0.15 मि.ग्रा.	0.14 मि.ग्रा.
foVkfeu ¼ifr 100 xke½		
विटामिन ए	64.0 आई यू	1127 आई यू
विटामिन सी	8.7 मि.ग्रा.	18.4 मि.ग्रा.
विटामिन इ	0.10 मि.ग्रा.	0.14 मि.ग्रा.
विटामिन के	0.50 mcg	0.70 mcg
थाइमिन	0.031 मि.ग्रा.	0.052 मि.ग्रा.
राइबोफ्लेविन	0.073 मि.ग्रा.	0.054 मि.ग्रा.
नियासिन	0.665 मि.ग्रा.	0.686 मि.ग्रा.
विटामिन बी$_6$	0.367 मि.ग्रा.	0.299
फॉलेट	205.6 mcg	225.6 mcg
पेंटाथेनिक एसिड	0.334 mcg	0.260 mcg

- केले के तने की राख (रेशा) घाव के ऊपर लगाने पर घाव को भरने में लाभकारी है।
- पोटैशियम की ज्यादा मात्रा एवं नमक की कम मात्रा उच्च रक्तचाप को कम करने में सहायक होती है।
- शरीर एवं दिमाग को तुरंत ऊर्जा की प्रतिपूर्ति के लिए केले का फल अच्छा विकल्प है।

केले की पत्तियों का उपयोग

दक्षिण भारत में केले की पत्तियों का उपयोग लगभग सभी सामाजिक एवं धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा महत्व है कि पत्तों या प्लेट या पूजा में उपयोग में लाये पत्ते *बायोडिग्रेडेबिल* होते हैं, जो भूमि पर्यावरण प्रदूषण को कम करने में सहायक होते हैं। दक्षिणी भारत में केले की पत्ती का उत्पादन एक अच्छा व्यवसाय है। यह छोटे एवं मध्यम किसानों के जीविकोपार्जन का अच्छा साधन है। केले की पत्ती की मांग वर्ष भर रहने के कारण आय का माध्यम सालभर बना रहता है साथ ही साथ केले के बढ़ते-घटते मूल्य के कारण लाभ-हानि में संतुलन बनाए रखता है।

दक्षिणी भारत में केले के पत्ते पर भोजन करना बहुत अच्छा एवं धार्मिक माना जाता है। केले के पत्ते पर भोजन करने से भोजन का स्वाद बढ़ जाता है। यह पत्तियों में उपलब्धत खनिज पदार्थों के कारण हो सकता है। जो गर्म भोजन पत्तों पर परोसने के कारण पत्तियों से भोजन में मिलते हैं। केले की पत्तियों से लपेटकर कुछ दक्षिण भारतीय व्यंजन तैयार किए जाते हैं। जिससे व्यंजन की सुगंध बनी रहे। भोजन के समय पत्तियों को हटा दिया जाता है एवं व्यंजन परोसा जाता है। केले के तने का अंदरूनी भाग एवं फूल से स्वादिष्ट व्यंजन (सब्जियां) बनायी जाती हैं।

केले की कुछ प्रजातियों मूसा लिंकीनेंनासिस (0.58 प्रतिशत), मूसा एक्यूमिनाटा (1.05 प्रतिशत) एवं मूसा चिलो कारपा (1.41 प्रतिशत) से अच्छी गुणवत्ता वाले *वैक्स* (मोम) तैयार किए जाते हैं।

केले के विशेष गुणों के साथ-साथ इसके उपयोग से कुछ नुकसान भी होते हैं जो निम्नवत हैं :

- कार्बोहाइड्रेट की ज्यादा मात्रा के साथ ट्रिप्टोफेन की उपलब्धता के कारण ज्यादा मात्रा में उपयोग शरीर को शिथिल करता है।
- माइग्रेन का प्रभाव केले एवं अल्कोहल के प्रभाव से बढ़ता है अतः केले का उपयोग अल्कोहल के साथ न किया जाय।
- केले का उपयोग अस्थमा रोगियों के लिए लाभदायक नहीं है, साथ ही साथ कुछ मनुष्यों में एलर्जी का भी कारण होता है।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

isV dk jksx

d".k eqjkjh flag ^fdlku*

xzke&cjek] iksLV&dSFkkok okik&fljkjh] ftyk&'k[kiqjk] fcgkj

- अरीठे की छाल और समुद्रफेन खाने से सभी उदर-रोग मिट जाते हैं।
- गौर-मूत्र के साथ समुद्रफेन खाने से पेट संबंधी सभी रोग ठीक हो जाते हैं।
- कालीमिर्च, मोचरस तथा एलुआ 1-1 टंक का चूर्ण बनाकर 6 माशा पानी के साथ खाने से उदर-रोगों में आराम होता है।
- गुड़ में काकजंगा मिलाकर खाने से पेट-विकारों में लाभ होता है।
- केले को सूखाकर चूर्ण बना लें। इसे प्रातः जल के साथ खाने से उदर-रोगों में आराम मिलता है।
- शितोपलादि चूर्ण मक्खन में मिलाकर या पानी के साथ लेने से उदर-विकार दूर होता है।
- एक माशा लवण-भास्कर चूर्ण मटठे के साथ खाने से पेट के सभी रोगों में आराम मिलता है।
- सौंठ, काला नमक, अनारदाना और भुनी हींग 1-1 तोला मिलाकर चूर्ण बना लें। एक बार में 4 माशा चूर्ण सेवन करने से पेट के सभी रोग मिट जाते हैं।

पेट-दर्द

- दालचीनी और नागदोन के पत्तों का क्वाथ बनाकर पीने से पेट-दर्द मिट जाता है।
- अगर को पानी में पीसकर गरम करके पेट पर लेप करने से पेट-दर्द ठीक हो जाता है।
- अजमोद और काला नमक मिलाकर पीस लें। इसकी फंकी लेकर थोड़ा जल पीने से पेट-दर्द दूर हो जाता है।
- पीपल के मुलायम ढाई पत्तों को पीसकर गुड़ मिलाकर गोली बना लें। सुबह शाम 1-1 गोली खाने से पेट-दर्द ठीक हो जाता है।
- तुलसी और अदरख का आधा-आधा तोला रस मिलाकर पीने से पेट-दर्द ठीक हो जाता है।
- पाषाणभेद के पत्तों के रस में सौंठ का चूर्ण डालकर पीने से पेट का दर्द मिट जाता है।
- गोरखमुण्डी की जड़ उबालकर पीने से उदर-पीड़ा शांत हो जाती है।
- आँवला, हल्दी और काला नमक मिलाकर जल के साथ लेने से पेट का दर्द मिट जाता है।
- दो महीने के बछड़े का मूत्र पीने से उदर-पीड़ा शांत हो जाती है।
- सौंठ और नमक मिलाकर पीस लें। इसे एक माशा की मात्रा में गरम पानी के साथ दिन में 2-3 बार खाने से पेट-दर्द मिट जाता है।
- एक गिलास चूने के पानी में एक चम्मच सोडा बाई-कार्ब डालकर पीने से पेट-दर्द शान्त हो जाता है।
- खुरासानी अजवायन और गुड़ मिलाकर खाने से पेट की वायुयुक्त पीड़ा मिट जाती है।
- दाख के रस में शक्कर मिलाकर पीने से उदर-शूल मिट जाता है।
- दाख और अडूसे का क्वाथ बनाकर पीने से कफयुक्त उदर-शूल मिट जाता है।
- अजमोद को गुड़ के साथ उबालकर पीने से उदर-शूल मिट जाता है।
- कायेली की जड़ के कल्क में शहद, घी और शक्कर मिलाकर चाटने से उदर-पीड़ा शांत हो जाती है।
- ओंगा की जड़ और अजवायन समान भाग पीसकर इसकी फंकी लेने से उदर-पीड़ा दूर हो जाती है।
- नारंगी की फाँक के छिलके खाने से उदर-शूल, मन्दाग्नि और निर्बलता मिट जाती है।
- करणे की छाल का चूर्ण खाने से उदर-शूल शांत हो जाता है।
- अजवायन का चूर्ण खाकर फालसे का गरम-गरम रस पीने से उदर-पीड़ा मिट जाती है।
- पाढ की जड़ का चूर्ण खाने से उदर-शूल में लाभ होता है।
- बड़ी इलायची का चूर्ण नमक मिलाकर खाने से पेट-दर्द मिट जाता है।
- कौड़ी की भस्म और काली मिर्च का चूर्ण नीबू के अन्दर भरकर आग पर गरम करें। इसे चूसने से उदर-शूल मिट जाता है।
- चम्पा के पत्तों के रस में शहद मिलाकर पीने से उदर-शूल मिट जाता है।
- ग्वारपाठे की जड़ उबालकर उसी पानी में थोड़ी हींग भून-पीसकर मिला लें। इसे पीने से उदर-शूल नष्ट हो जाता है।
- शुद्ध कुचला (लगभग चौथाई रत्ती) जायफल और जावित्री के चूर्ण के साथ खाने से तीव्र उदर-पीड़ा मिट जाती है।

- अनार-दाने का रस पीने से उदर-शूल में लाभ होता है।
- चिरायता और अरण्ड की जड़ पानी में उबालकर पीने से उदर-पीड़ा मिट जाती है।
- गुड़ में लपेट कर लाल मिर्च खाने से पेट का दर्द शांत हो जाता है।

पेट की वायु

- भुनी हुई हींग पीसकर शाक-सब्जी में डालकर खाने से पेट की वायु मिट जाती है।
- थोड़ा-सा नमक, 4 काली मिर्च और 4 लौंग पीसकर आधी कटोरी पानी में उबालकर पीने से पीने से आराम मिलता है।
- अलसी के पत्तों की सब्जी बनाकर खाने से पेट की बादी मिट जाती है।
- हरड़ का चूर्ण गुड़ में मिलाकर खाने से वात-रक्त के कारण होने वाली उदर-पीड़ा दूर हो जाती है।
- बच और सोनामाखी खाने से वायुगोला में लाभ होता है।
- 5 ग्राम अजवायन, 10 काली मिर्च और 2 पीपल रात को पानी में भिगो दें। सुबह पीसकर शहद में मिलाकर एक पाव पानी के साथ लेने से वायु गोला-दर्द मिट जाता है।
- घी के साथ काकजंघा मिलाकर पीने से वायु-विकार में लाभ होता है।
- छः माशा हिंगाष्टक चूर्ण पानी के साथ खाने से सभी प्रकार के वायु-विकार मिट जाते हैं।
- एक पुतिया लहसुन की कली एक पाव और सोंठ एक पाव अलग-अलग पीस लें। फिर दोनों को आधा कि.ग्रा. शहद में मिलाकर रख लें। एक-एक तोला की मात्रा में यह अवलेह खाने से वात-पीड़ा मिट जाती है।
- तीन ग्राम सज्जीखार और 3 ग्राम पुराना गुड़ लें। दोनों को रगड़कर गोली बना लें। प्रतिदिन सुबह 1 गोली खाने से वायु गोला रोग नष्ट हो जाता है।
- आक की जड़ छाया में सुखाकर पीस लें। इसे 2 रत्ती से 4 रत्ती तक खाकर ऊपर से दूध पी लें। इससे मन्दाग्नि और वायुगोला नष्ट होता है।

अजीर्ण

- सोंठ, हींग और सेंधा नमक का चूर्ण गरम जल के साथ लेने से अजीर्ण दूर होता है।
- 100 नग नीबू का रस निकालें। इसमें 10 तोला नौसादर, 5 तोला टंकणखार तला 30 तोला लहसुन पीसकर मिला लें। इसके सेवन से अजीर्ण दूर होता है।
- बरफ का पानी 25 तोला, मिश्री 2 तोला और नीबू का रस 2 तोला मिलाकर पीने से अजीर्ण दूर होता है।
- काली मिर्च, पीपल, सेंधा नमक और शुद्ध गन्धक समान भाग लेकर नीबू के रस में घोटकर गोली बना लें। गोली खाने से बदहजमी मिट जाती है।
- मूली के पत्ते खाने से बदहजमी दूर हो जाती है।
- लौंग और हरड़ के क्वाथ में सेंधा नमक मिलाकर पीने से बदहजमी और अजीर्ण मिट जाता है।
- मुनक्का 10 छटाँक तथा अनारदाना, पीपल, काली मिर्च, अकरकरा, सफेद जीरा, स्याह जीरा और नौसादर 4-4 तोला लें। इसमें सेंधा नमक 5 तोला मिलाकर चूर्ण बना लें। इसके सेवन से अजीर्ण तथा पेट के रोगों में लाभ होता है।
- 3 ग्राम भाँग को 2 ग्राम घी में डालकर भून लें। इसके चूर्ण को शहद में मिलाकर चाटने से बदहजमी दूर होती है।

अफरा

- 5 ग्राम अजमोद को 15 ग्राम गुड़ में मिलाकर खाने से पेट का अफरा दूर हो जाता है।
- तस्तुम्बे की गिरी और एलुआ पीसकर गरम करके लेप करने से अफरा दूर हो जाता है।
- एलुआ पीसकर नाभि पर लेप करने से दस्त आकर अफरा मिट जाता है।
- काली मिर्च पीसकर गौमूत्र के साथ सेवन करने से पेट का अफरा नष्ट हो जाता है।
- दही का तोड़ पीने से अफरे में लाभ होता है।
- तीन माशा काली मिर्च और 6 माशा मिश्री पीसकर फाँकने से अफरा मिट जाता है। ऊपर से पानी नहीं पीना चाहिए।
- अरणी के पत्तों को उबालकर पीने से अफरा और उदर-पीड़ा मिट जाती है।
- मरोड़फली और काला-नमक का चूर्ण खाने से उदर-शूल और अफरा मिट जाता है।
- प्याज के रस में हींग और काला नमक पीसकर मिलाकर पीने से अफरा और उदर-शूल दूर हो जाता है।
- ढाक के पत्ते उबालकर पीने से अफरा और उदर-पीड़ा में लाभ होता है।
- गुड़ और मेंथीदाना को उबालकर पीने से अफरा मिट जाता है।
- अजवायन देशी 250 ग्राम और काला नमक 60 ग्राम को किसी चीनी-मिट्टी या काँच के बर्तन में रख दें, ऊपर से इतना नीबू का रस डालें कि दोनों दवाएं डूब जाएं। इस बर्तन को छाया में रख दें। जब नीबू का रस सूख जाए तो फिर और रस डाल दें। इसी तरह सात बार करें। इस 2 ग्राम दवा को गुनगुने पानी से सुबह-शाम खाने से पेट के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं।
- दस तोला हरे पुदीने का रस गरम करके उसमें 9 माशा शहद और साढ़े चार माशा नमक मिलाकर पीने से उल्टी होकर आमाशय के विकार दूर हो जाते हैं।
- बबूल का गोंद पानी में घोलकर पीने से आमाशय और आँत की पीड़ा मिट जाती है।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

cjeMk f=dk.k ¼Vkbxy½ & ,d jgL;e; LFkku

o:pk feJk] ,l-ih- 'kDyk] vkj-,l- pkjfl;k ,oa x.k'k uxh
HkkÑvuq&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku lLFkku] y[kuÅ

आज की दुनिया में जहाँ विज्ञान के क्षेत्र में कई मील के पत्थर पार हो चुके हैं फिर भी दुनिया में एक ऐसा हिस्सा है जिसका रहस्य आज भी रहस्य है। यह वह जगह है जहाँ पर कई वायुयान एवं जहाज लुप्त हो चुके हैं और इनका पता आज भी नहीं चल सका है। संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिण पूर्वी अटलांटिक महासागर के अक्षाँश 25^0 से 45^0 उत्तर तथा देशांतर 55^0 से 85^0 के बीच 39,00,000 वर्ग किमी के बीच फैली जगह है जोकि एक काल्पनिक त्रिकोण जैसी दिखती है जिसे बरमूडा त्रिकोण व बरमूडा त्रिभुज के नाम से जाना जाता है। इस त्रिकोण के तीन कोने बरमूडा, मियामी तथा सेनजआनार, पोरटो को स्पर्श करते हैं। यह उत्तरी अटलांटिक महासागर का वह हिस्सा है जिसे *'डेविल्स ट्राइंगल'* अर्थात् 'शैतानी त्रिभुज' के नाम से भी जाना जाता है। इस स्थान से कई ऐसी असाधारण बातें जुड़ी हैं जिनका विश्वास कर पाना मुश्किल ही नहीं असंभव है। कई दस्तावेजों से यह ज्ञात हुआ है कि इस स्थान से कई ऐसी घटनाएँ जुड़ी हैं जो डराने वाली हैं तथा रहस्य से सराबोर है। हालांकि अमेरिकी जलसेना का मानना है कि ऐसा कोई त्रिकोण नहीं है परन्तु समय-समय पर इस स्थान की रहस्यमय घटनाओं का जिक्र हमेशा होता रहता है जिससे इसके अस्तित्व का पता लगता है। हालांकि यह आज भी रहस्यमय है कि *'ट्राइंगल'* का क्षेत्र कितना व्यापक और कहाँ तक है। परन्तु ऐसा माना जाता है कि इस *'ट्राइंगल'* का प्रभाव इसके क्षेत्र के बाहर भी होता है। ऐसा अनुमान किया गया है कि इसका क्षेत्र इतना अधिक है कि यदि हम राजस्थान, मध्य प्रदेश व महाराष्ट्र को भी मिलाएँ तब भी इसका क्षेत्र अधिक होगा।

वर्ष 1854 से इस क्षेत्र में कुछ ऐसी घटनाएँ घटित होती जा रही हैं कि इसे मौत के त्रिकोण के नाम से जाना जाता है। यह रहस्यमय त्रिकोण पहली बार विश्व स्तर पर उस समय चर्चा में आया जब वर्ष 1964 में आरगोसी नामक पत्रिका में इस पर लेख प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात् इस पर सम्पूर्ण विश्व में इतना कुछ लिखा गया कि 1973 में इस स्थान के बारे में *'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका'* में भी लिखा गया। सबसे रहस्यमय व विख्यात दुर्घटना 5 सितम्बर 1945 की है जिसमें पाँच तारपीडो यान नष्ट हो गए थे। इसके साथ ही इस यान का पता लगाने के लिए मैरिनर लाइंग नाव भेजी गई जिसमें 13 लोग सवार थे परन्तु उस नाव का भी पता नहीं लग पाया। इस तरह की कई घटनाएँ समय-समय पर सामने आती रहती हैं लेकिन यह सब किन कारणों से हो रहा है, इसका उत्तर किसी के पास नहीं है। हालांकि कई कोशिशें की गई हैं कि इसकी यह रहस्यमय गुत्थी सुलझ जाए। कुछ लोगों का मानना है कि इस क्षेत्र में मीथेन हाईड्रेट नामक रसायन उत्पन्न होता है जिसके कारणवश ऐसी घटनाएँ होती हैं। समुद्र में बनने वाला यह रसायन जब अचानक फटता है तो अपनी चपेट में आसपास के सभी जहाजों को ले लेता है। वैज्ञानिकों का यह मानना है कि इस हाईड्रेट के विस्फोट के कारण डूबे हुए जहाज जब समुद्र की अटल गइराई में समा जाते हैं तो वहाँ पर बनने वाले इस रसायन की तलछट के नीचे दबकर गायब हो जाता है। इसी कारण से डूबे हुए जहाजों का कोई भी निशान नहीं मिल पाता है। वैज्ञानिकों का यह भी मत है कि जब यह रसायन वायुमण्डल में फैलता है तो उसके क्षेत्र में आने वाले वायुयान इस रसायन की सांद्रता के कारण इंजन में ऑक्सीजन का अभाव पाते हैं, जिसके कारण से वायुयान स्वतः बंद हो जाता है। इस रसायन का अनुमान अमेरिकी भौगोलिकों ने भी किया है।

उनका मानना है कि बरमूडा के समुद्र की तलहटी में मीथेन का अकूत भण्डार भरा हुआ है। हालांकि इस तर्क से सभी वैज्ञानिक सहमत नहीं हैं। यही कारण है कि बरमूडा त्रिकोण अभी भी एक अनसुलझा रहस्य है। वर्ष 2016 में मौसम वैज्ञानिकों ने इस स्थान पर कुछ *हेक्सागोनल* आकार वाले बादलों का गठन होते देखा था। ऐसा माना गया है कि समुद्र में इस प्रकार से *हेक्सागोनल* बादलों का गठन हवा व बम के तत्व हैं। इससे उत्पन्न होने वाला विस्फोट इतना शक्तिशाली होता है कि यह 273 किलोमीटर/घंटा क्षेत्र तक पहुँच सकता है। यह एक तूफान की तरह उत्पन्न होती हैं जिसमें इतनी शक्ति होती है कि वह आसानी से किसी भी जहाज को डुबो सकती है। इस नई खोज ने बरमूडा *ट्राइंगल* के रहस्य को कुछ हद तक सुलझा दिया है हालांकि अभी भी इसके रहस्य को पूरी तरह अनावृत्त नहीं किया जा सका है।

bl&ey djrs le; vo'; /;ku j[ksa

cã çdk'k] vriy dekj lpku] ekgEen v'kQkd ,o vk'kh"k flg ;kno
Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

आधुनिक युग में इंटरनेट केवल मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है अपितु यह संचार का सस्ता, सशक्त, सुनिश्चित व तुरंत प्रेषण का एक सुदृढ़ माध्यम है। इंटरनेट प्रयोग करने वाले व्यक्तियों के मध्य आपस में सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए ई-मेल एक अत्यंत सरल व सशक्त संचार माध्यम है। यद्यपि ट्वीटर व फेसबुक जैसे *माइक्रो ब्लॉगिंग साइट्स* के आने से सूचना भेजने के तरीके में क्रांतिकारी बदलाव आया है परंतु *वेब* का प्रयोग करने वाले व्यक्तियों के मध्य संचार के लिए आज भी ई-मेल ही सबसे सरलतम व सर्वमान्य विकल्प है। इसका सबसे बड़ा कारण *माइक्रो ब्लॉगिंग साइट्स* पर प्रयोगकर्ता को निर्धारित शब्दों में ही अपनी बात कहनी होती है, परंतु ई-मेल में इस प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं है। यद्यपि यह माना जाता है कि सभी भेजे जाने वाले ई-मेल को *कम्पोज* करते समय उस पर पूरा ध्यान देना नितांत आवश्यक है। ई-मेल भेजते समय शिष्टाचार का पूरा ध्यान रखना चाहिए। ई-मेल भेजते समय निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखना चाहिए :

विषय अर्थपूर्ण रखें

जिस प्रकार समाचार पत्र में छपी किसी घटना अथवा ब्लॉग की पोस्ट पर डाला गया अर्थपूर्ण शीर्षक पाठक का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है, उसी प्रकार ई-मेल करते समय लिखा गया अर्थपूर्ण विषय आपको भीड़ से अलग करता है। कम शब्दों में लिखा गया अर्थपूर्ण विषय पाठक को आपके विचारों से कम से कम समय में अवगत करा देता है।

परिचयात्मक पैराग्राफ का प्रयोग न करके सीधे मुद्दे पर बात की जानी चाहिए

ई-मेल लिखते समय उद्देश्य पर मुख्य फोकस रखना चाहिए। अनावश्यक परिचय या लिंक देकर ई-मेल को लंबा करने का प्रयत्न नहीं करना ही बेहतर रहता है। आपकी ई-मेल के पाठक को आपके मेल के अतिरिक्त अन्य लोगों के मेल भी पढ़ने होते हैं। अतः यदि आपका ई-मेल लंबा होगा तो आपका पाठक बोर होकर पूरा पढ़े बगैर दूसरे मेल पर जा सकता है। इधर-उधर की बात न लिखकर सिर्फ मुद्दे की बात लिखना पाठक के साथ-साथ आपका बहुमूल्य समय भी बचाने में सहायक होगा।

साधारणतया पूछे जाने वाले प्रश्नों का उत्तर देने के लिए *सेव* किए हुए *टेम्पलैट्स* का प्रयोग करें

यदि आपको प्रायः ऐसे मेल मिलते हैं जिसमें एक से प्रश्न पूछे जाते हैं, तो आप अपने खाली समय में आराम से ऐसे प्रश्नों का उत्तर ड्राफ्ट कर सकते हैं तथा इनको *ड्राफ्ट्स फोल्डर* में *सेव* कर सकते हैं। जब भी आपको कोई ऐसा ई-मेल प्राप्त हो, जिसका जवाब आप पूर्व में दे चुके हों, तो आप *टेम्पलैट्स* को *पेस्ट* करके तुरंत जवाब दे सकते हैं।

मेल व्यक्तिगत रखें

सिर्फ आप प्रायः पूछे जाने वाले प्रश्नों का ही उत्तर *टेम्पलैट्स* को *पेस्ट* करके दें, परंतु अधिकांश मेल का जवाब इस प्रकार देना अशिष्टाचारात्मक माना जाता है। आपका व्यक्तिगत ध्यान आकर्षित करने वाले ई-मेल का जवाब देने से पूर्व उस पर कुछ समय व्यतीत करना आवश्यक होता है। ऐसे मेल को सम्मानपूर्वक जवाब देने से आपको भी सम्मान प्राप्त होगा, साथ ही उनकी नजरों में आपकी छवि भी अच्छी बनेगी।

कभी भी मेल *केपिटल लेटर्स* में न लिखें

अंग्रेजी के *केपिटल लेटर्स* में लिखा गया ई-मेल पढ़ना मुश्किल होता है जिससे पाठक को गुस्सा भी आता है तथा वह ऐसे मेल को बगैर पढ़े *ट्रेश फोल्डर* में भी डाल सकता है।

कभी भी मेल रोमन में न लिखें

रोमन में लिखा गया ई-मेल पढ़ना मुश्किल होता है जिससे पाठक को क्रोध भी आता है। यदि आप अंग्रेजी में लिखने में किसी प्रकार की परेशानी का अनुभव करते हैं तो आप पहले मंगल जैसे फॉन्ट का प्रयोग कर अपने भेजे जाने वाले संदेश को *टाइप* कर लें तदुपरान्त आप उसे *पेस्ट* या *अटैच* कर सकते हैं।

उचित संदेश भेजें

अपने जवाब में पूर्ववर्ती पत्र-व्यवहार का संदर्भ देना अच्छा रहता है क्योंकि मेल प्राप्त करने वाला विषय तथा पूर्व में किए गए पत्र-व्यवहार को भूल सकता है। अतः पूर्व पत्र व्यवहार के संदर्भों से व्यक्ति का कीमती समय बचता है तथा एक मेल पढ़ते ही सारी जानकारी मिल जाती है। किसी भी मेल का जवाब देते समय तथा

मेल कम्पोज करने की अपेक्षा *'इनबॉक्स'* के *मेल* में ही *'रिप्लाई' क्लिक* करके जवाब देना उचित रहता है।

भेजने से पूर्व एक बार पुनः पढ़ लें

टाइप किए गए मेल को भेजने से पूर्व एक बार पुनः ध्यानपूर्वक पढ़ लेना चाहिए। इससे *स्पेलिंग* तथा व्याकरण की छूट गयी गलतियों को सुधारा जा सकता है। ई-मेल को पढ़ते समय पाठक के दृष्टिकोण से पढ़ने का प्रयास करना चाहिए। इससे आपको यह ज्ञात हो जाएगा कि पाठक भी आपके जवाब का वही अर्थ निकाल रहा है या नहीं, जो आप मेल के माध्यम से कहना चाह रहे हैं।

औपचारिकता का ध्यान रखें

व्यापारिक ई-मेल औपचारिक होने चाहिए क्योंकि वे आपकी संस्था या कंपनी की छवि को प्रतिबिम्बित कर रहे होते हैं। *एबरेविएशन्स* व *स्माइलीज* इत्यादि के प्रयोग से आपका *क्लाइंट* आपको गंभीरता से नहीं ले सकता है।

फॉरमेटिंग पर ध्यान दें

कभी भी ई-मेल संदेश को विभिन्न रंगों से सजाने का प्रयत्न न करें। कभी भी किसी वाक्य को रेखांकित करने के लिए रंगों का प्रयोग न करें वरना आपका ईमेल *स्पेमी* नजर आएगा। श्वेत पृष्ठभूमि पर काले रंग से लिखे अक्षर ही सर्वमान्य होते हैं।

छोटे व साधारण वाक्यों का प्रयोग करें

ई-मेल में लिखे गए वाक्य छोटे व सरल होने चाहिए जिससे एक बार में ही पढ़कर पाठक उसका उचित अर्थ निकाल सके। क्लिष्ट भाषा के प्रयोग से आपकी मेल अधिक ध्यान नहीं आकर्षित करेगी। क्रोधित होने पर ई-मेल भेजने से बचना चाहिए। अन्यथा आपके मेल में गुस्से की भावना प्रदर्शित हो जाएगी।

अटेचमेंट को *अटैच* करना ना भूलें

कई बार हम संदेश के साथ भेजे जाने वाले *अटेचमेंट* को *अटैच* करना ही भूल जाते हैं। जिससे आपके द्वारा भेजी जा रही अति आवश्यक सूचना व संदेश नहीं पहुँच पाता है। अतः ई-मेल को भेजने से पूर्व यह अवश्य सुनिश्चित कर लें कि *अटेचमेंट* संलग्न कर दिया है अथवा नहीं।

ई-मेल भेजने से पूर्व पाने वाले का ई-मेल *एड्रेस* अवश्य चेक कर लें

ई-मेल भेजने से पूर्व पाने वाले का *ई-मेल एड्रेस* अवश्य चेक कर लें। *ई-मेल एड्रेस* में एक भी वर्ण की गलती होने पर आपके द्वारा भेजा गया संदेश पाने वाले व्यक्ति तक नहीं पहुँच पाएगा।

ई-मेल का प्रिंट न लें

जब तक अति-आवश्यक न हो, कभी भी ई-मेल का प्रिंट न लें। इस प्रकार प्रिंट न लेकर आप कीमती तथा पर्यावरण के हितैषी वृक्षों की कटान रोकने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

इस प्रकार, आप ई-मेल भेजते समय उपरोक्तलिखित बातों का ध्यान रखेंगे तो आपका ई-मेल अधिक प्रभावी होगा।

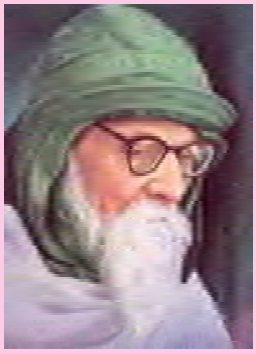

हिंदी को गंगा नहीं, समुद्र बनाना होगा।

-आचार्य विनोबा भावे

आमोद-प्रमोद प्रभाग

QkVkxkQh djr le; /;ku j[ku ;kX; dN ckr

;kx'k ekgu flg] cã çdk'k] vo/k'k dekj ;kno] fofiu /kou ,o ekgEen v'kQkd
Hkkd`vui&Hkkjrh; xUuk vuI/kku lLFkku] y[kuÅ

ऐसा कौन है जिसके जीवन में खुशियाँ नहीं आती तथा वह खुशियों की यादों को भविष्य के लिए संजोना नहीं चाहता। अतीत की सुखद यादों को सँजोने का फोटो ही सबसे सशक्त माध्यम है। परंतु फोटोग्राफी करते समय हमारे सामने कई दुविधाएँ रहतीं हैं कि फोटोग्राफी के लिए डिजिटल कैमरा ही उपयुक्त साधन है अथवा स्मार्टफोन से भी अच्छी फोटो खींची जा सकती है। फोटोग्राफी में रूचि रखने वालों प्रायः इस प्रश्न से जूझते हैं कि इन दोनों में बेहतर विकल्प कौन है? दोनों ही माध्यम के अपने-अपने लाभ हैं।

डिजिटल कैमरे के लाभ

ओप्टिक्स- छोटे से छोटे व सस्ते से सस्ते डिजिटल कैमरे में भी 5X ऑप्टिकल जूम अवश्य होता है। महंगे कैमरों में तो ऑप्टिकल जूम 30X तक हो सकता है। यद्यपि स्मार्टफोन में ऑप्टिकल जूम की सुविधा देने का प्रयास किया गया है। सैमसंग कंपनी ने अपने स्मार्टफोन में S4 जूम की सुविधा प्रदत्त की थी परंतु इसके प्रावधान किए जाने के कारण फोन अत्यंत भारी हो जाते थे, जिस कारण वे अधिक लोकप्रिय नहीं हो सके।

सेंसर साइज- स्मार्टफोन के सेंसर्स डिजिटल कैमरे की तुलना में अत्यंत छोटे होने के कारण फोटो की गुणवत्ता पर दुष्प्रभाव डालते हैं।

हार्डवेयर कंट्रोल्स- डिजिटल कैमरे में *वन टच क्लिक एक्सैस बटन* की सुविधा होती है। कुछ स्मार्टफोन में चतम-लेवल सेटिंग्स जैसे- 150 तथा *शटर स्पीड* की सुविधा होने के बावजूद भी, कुछ भी सेटिंग्स बदलने के लिए *टचस्क्रीन* पर *मैन्यू* में *सेटिंग्स* के *ऑपरेशन* को ढूंढ़ना पड़ता है।

माइक्रोसॉफ्ट- डिजिटल कैमरे माइक्रो फोटोज को *कैप्चर* करने में बेहतर होते हैं। मध्यम श्रेणी के डिजिटल कैमरे में भी 5 से.मी. तक नजदीक फोकस करने की सुविधा होती है। *फिजिकल कैप्चर फील्ड* के अधिक प्राकृतिक *शैलों डेप्थ* देने से डिजिटल कैमरे से खींची गयी फोटों कों *मैक्रो इफैक्ट* स्मार्टफोन से बेहतर होते हैं। यद्यपि *मैक्रो फोटोज* को *कैप्चर* करने में स्मार्टफोन कैमरों में भी काफी सुधार आएं हैं। अब तो कुछ स्मार्टफोन तो *डेडिकेटेड मैक्रो मोड* की सुविधा दे रहे हैं, परंतु स्मार्टफोन द्वारा *मैक्रो फोटोज* के *इफेक्ट्स* डिजिटल कैमरों की तुलना में अत्यंत कमजोर रहते हैं।

बैटरी लाइफ- डिजिटल कैमरों से चाहे *स्टिल इमेज* ली जाए या वीडियो, बैटरी अधिक साथ देती है।

स्मार्टफोन के मामले में कैमरों से स्मार्टफोन तो *स्टिल इमेज* के लिए तो बैटरी कोई समस्या नहीं है परंतु वीडियो रिकॉर्ड करते समय स्मार्टफोन की बैटरी डिजिटल कैमरों की तुलना में शीघ्र समाप्त हो जाती है।

लो लाइट फोटोग्राफी- फोटोग्राफी मुख्यतः प्रकाश के सिद्धांत पर कार्य करती है, अतः अच्छी फोटो लेने के लिए उचित प्रकाश अत्यंत आवश्यक है। कम प्रकाश में अच्छी फोटो *सेंसर साइज* पर निर्भर करती है। बड़ा सेंसर अच्छे परिणाम देता है। अतः सर्वश्रेष्ठ कैमरे द्वारा कम प्रकाश में ली गयी फोटो भी डिजिटल कैमरों की तुलना में अच्छा प्रभाव नहीं दर्शाती।

पावरफुल फ्लैश- डिजिटल कैमरे का जैनोन फ्लैश स्मार्टफोन के छोटे एलईडी फ्लैश की तुलना में कहीं अधिक चमकीला होता है तथा उसकी रेंज भी अधिक होती है।

परंतु डिजिटल कैमरों की उपरोक्त वर्णित विशेषताओं के बावजूद स्मार्टफोन द्वारा ली गयी फोटो के भी निम्नलिखित अनेक लाभ हैं :

तीव्र एडिटिंग- डिजिटल कैमरे में *बेसिक एडिटिंग ऑप्शन* होते हैं परंतु उन्नत प्रभाव के लिए फोटो को कम्प्यूटर में स्थानान्तरित करके *इमेज एडिटिंग सॉफ्टवेयर* का प्रयोग करना पड़ता है परंतु स्मार्टफोन में शीघ्रता से फोटो को *एडिट* किया जा सकता है।

सुगम *शेयरिंग* तथा *बैकअप-* डिजिटल कैमरे की फोटो की तुलना स्मार्टफोन से खीची गयी फोटो को *सोशल मीडिया,* मेल या *चैट सॉफ्टवेयर* पर शेयर करने में अत्यंत सुगमता रहती है। साथ ही फोटो को *बैकअप* हेतु *क्लाउड सर्विस* पर *ऑटो अपलोड* भी किया जा सकता है।

बेहतर *डिस्प्ले-* स्मार्टफोन में स्क्रीन साइज में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। 5.2 इंच या इससे अधिक की स्क्रीन आज सामान्य बात हो चुकी है। इसके फोटोग्राफ को *जूम* या *रोटेट* करना भी अत्यंत सुविधाजनक होता है।

डिजिटल कैमरों में इतनी सुविधा नहीं होती। प्रत्येक के पास हर समय स्मार्टफोन होने के कारण इसका प्रयोग अत्यंत

सुगम होता है। किसी भी अचानक मिले मौके को स्मार्टफोन द्वारा तुरंत भुनाया जा सकता है।

स्मार्टफोन से परफेक्ट फोटो कैसें खींचें?

सूर्य की सीधी रोशनी से बचें

सूर्य की सीधी रोशनी फोन के कैमरे पर पड़ने से फोटो में कुछ भी नहीं आएगा। अतः यदि आप बहुत धूप में फोटो खींच रहे हैं तो थोड़ा सी छाया ढूंढने का प्रयास कीजिये जिससे आपको फोटो खींचने के लिए उचित प्रकाश व्यवस्था मिल सकेगी।

भवन के भीतर फोटो खींचते समय खिड़की के पास फोटो खींचे

किसी भी भवन या निवास स्थल में फोटो खींचते समय जिन लोगों की फोटो खींची जा रही है, उनको खिड़की के सामने खड़ा कीजिये, जिससे खिड़की से आ रहा प्रकाश उनके चेहरे पर पड़े। कभी भी फोटो खिंचवाने वाले व्यक्तियों की पीठ खिड़की की तरफ नहीं होना चाहिए।

अंधेरे कमरे में फ्लैश के प्रयोग से बचें

जहां तक संभव हो, *क्लोज-अप मेकरो शॉट्स* खींचते समय *फ्लैश* का प्रयोग न करें। ऐसा करने से फोटो की पृष्ठभूमि तो *डार्क* हो जाएगी साथ ही फोटो खिंचवाने वाले व्यक्तियों एवं वस्तुओं की फोटो भी नहीं आएगी। अंधेरे वातावरण में जल्दी से *ब्रॉड शॉट* खींचते समय तो *फ्लैश* का प्रयोग किया जा सकता है परंतु *पोर्टेट फोटोग्राफी* के लिए *फ्लैश* का प्रयोग कभी भी नहीं करना चाहिए।

फ्रेमिंग महत्वपूर्ण होती है

यह आवश्यक नहीं है कि फोटो खींचे जाने वाले व्यक्ति अथवा वस्तु को फोटो के केंद्र में ही रखें परंतु इसको जितना अच्छा हो सके, फ्रेम करने की कोशिश कीजिये। फोटो को उचित फ्रेम देने से फोटो का *सब्जैक्ट पॉप* हो जाता है जिसकी फोटो में आपको आवश्यकता होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि यदि आप उपरोक्त बातों को ध्यान में रखें तो भले ही आपके पास कोई महंगा कैमरा नहीं भी हो, परंतु आप फिर भी अच्छी फोटो खींच सकते हैं।

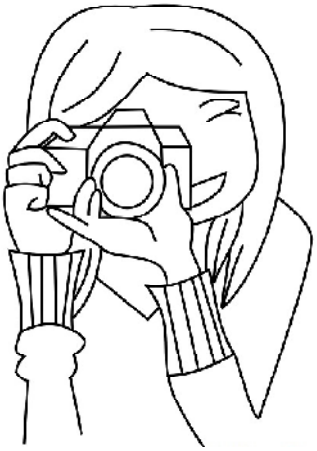

fopfyr eu

çoh.k dekj flag
Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku y[kuÅ

कुछ दिनों पहले की बात है, जब एक राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित प्रतियोगी परीक्षा को निरस्त कर दिया गया था। उस परीक्षा के एक प्रतियोगी से मिलने का अवसर मिला, तो उस प्रतियोगी ने दुखी होकर बताया कि उसका मन बड़ा विचलित है और वह अपने भविष्य को लेकर इस प्रतियोगिता से बड़ी उम्मीद लगाए बैठा था। मैंने उसको समझाने का प्रयास किया और उसे जीवन पथ पर अग्रसर होने के अन्य रास्ते भी सुझाए। किन्तु उससे बात करने के दौरान मेरे मस्तिष्क में यह विचार भी आया कि आखिर यह 'विचलित मन' की अवस्था है क्या? यदि हम सांख्यिकी की परिभाषा देखें तो यह पाएंगे कि 'मानक विचलन' का संदर्भ किसी मध्यमान से है। यदि हम मध्यमान को अपने जीवन की परिस्थितियों से तुलना करें तो स्थिति कुछ स्पष्ट होने लगती है। हम समाज से, सामाजिक विचारों से और सामाजिक परिस्थितियों से निर्मित एक प्रकार के तंत्र से बंधे हुए होते हैं, यानि किसी स्थापित सोच के दायरे में ही कार्य करते हैं। जैसे एक छात्र विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करके विश्वविद्यालय में प्रवेश लेगा, वहाँ शिक्षा प्राप्त करके नौकरी की तलाश करेगा, आदि-आदि। अब यदि किसी कारण से इस मध्यमार्गी विचार में बाधा उत्पन्न हो जाए, तो हमारे मन में भूचाल आ जाता है और हम विचलित हो जाते हैं। यही अवस्था वैवाहिक जीवन में, रोजमर्रा के कार्यों में, सरकारी सेवा में तथा करीब-करीब समाज के हर क्षेत्र में दिखायी देती है। हममें से शायद ही कोई ऐसा हो, जिसका मन विचलित न होता हो। तुलसीदास जी ने मन की अवस्था पर शायद इसीलिए यह चौपाई लिखी थी-

अस मन गुनइ राउ नहिं बोला। पीपर पात सरिस मनु डोला।
रघुपति पितहि प्रेमबस जानी। पुनि कछु कहिहि मातु अनुमानी।।

जिस प्रकार हल्की हवा से प्रभावित होकर पीपल वृक्ष के पत्ते डोलने लगते हैं, कुछ उसी तरह जीवन में परिस्थितियों के थोड़े से बदलावों से ही हमारा मन विचलित हो जाता है। इस प्रकार के विचलन की माप या आंकलन करना दुश्कर भी है और गैर-वैज्ञानिक भी, क्योंकि यहाँ सामाजिक परिस्थिति, मनुष्य का मस्तिष्क, उसकी मुश्किलों को समझने की क्षमता और ऐसे समय में उसके परिवार एवं प्रियजनों की भूमिका, सभी के आपसी अन्योन्यक्रिया के कारण अलग-अलग प्रकार तथा स्तर का विचलन हो सकता है। विचारणीय है कि परमेश्वर द्वारा प्रदत्त मानसिक शक्तियाँ हम सभी को ऐसे विचलित मन को पुनः स्थिर करने में सबसे ज्यादा सहायक होती हैं। यदि हम भली-भाँति यह समझ लें कि प्रकृति में कोई भी क्रिया मध्यमान होकर संपन्न नहीं होती बल्कि प्रत्येक क्रिया में कुछ न कुछ विचलन अवश्य होता है, तो शायद हमें यह समझने में भी आसानी होगी कि सम्पूर्ण जीवन-काल में कई बार हमें विचलन का सामना करना पड़ेगा। यह विचलन सुख या दुख दोनों ही दिशा में हमारे मन को ढकेल सकता है। सुख की अवस्था से हम स्वयं बाहर नहीं आना चाहते और दुख की दशा हमे अपने अंदर जकड़ लेती है। इसी लिए संस्कृत का यह श्लोक '**कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतेः स्वभावात, करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि**' यदि हम अपने मन में रोजाना दोहराएँ तो अपने आप प्रकृति द्वारा नियत जीवन पथ पर चलते रहने में हमें कोई समस्या नहीं होगी। तात्पर्य यह है कि विचलित मन को स्थिर करने के लिए हमें अपने शरीर, वाणी, मन, इंद्रियों, बुद्धि, स्वभाव इत्यादि को परमेश्वर को समर्पित करके ही कार्य निष्पादन करना होगा।

समय की रक्षा, धन की तरह करें।

-जवाहर लाल नेहरू

आमोद-प्रमोद प्रभाग

ifjJe

Ekd dUukft ;k ,o vkj-,l- pkjfl ;k
Hkkdvuli&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

एक गाँव में रामू नाम का एक लड़का रहता था। उसके परिवार में तीन सदस्य थे, जिसमें रामू की माता-कमला और उसकी छोटी बहन रेखा सम्मिलित थे। रामू का परिवार काफी गरीब था पर परिवार का हर सदस्य एक दूसरे से बहुत प्रेम करता था।

रामू का पढ़ाई-लिखाई में जरा भी मन नहीं लगता था। वह अपना समय खेलने में और गलत कार्यों में लगा देता था। एक समय की बात है, जब रामू पाँचवी कक्षा में पढ़ता था और उसकी बहन रेखा चौथी कक्षा में, दोनों एक साथ विद्यालय जा रहे थे तभी जोर से आँधी-तूफान आने लगा और बरसात भी शुरू हो गई। दोनों एक पेड़ के नीचे जाकर बैठ गए। काफी इंतजार के बाद भी जब बरसात नहीं थमी तो वे दोनों वापस घर लौट आए। घर आते ही रामू की माँ कमला ने दोनों से पूछा कि बेटा तुम लोग कैसे हो? मुझे तुम लोगों की बहुत फिक्र हो रही थी। कमला ने उनके कपड़े बदलवाये। ठंड बहुत थी इसलिए कमला ने आग जलाकर दोनों को बैठा दिया और उनके बगल में कमला भी जाकर बैठ गयी और बोली बच्चों, मेरा सपना है कि तुम दोनों पढ़-लिखकर अच्छे आदमी बन जाओ। हमारी गरीबी तो इतनी बुरी है कि हमारी मदद भी कोई नहीं करता। मैं दिन-रात मेहनत करके घर का खर्च चला रही हूँ। मुझे आज भी वह दिन नहीं भूलता जब तुम्हारे पिताजी ने तुम्हारी पढ़ाई के खर्च के लिए अपनी पुश्तैनी जमीन बेच दी थी। उस जमीन बेचने के बाद तो हमारी आर्थिक स्थिति और भी बुरी हो गई थी और हमें खाने के भी लाले पड़ गए थे। फिर भी वह तुम्हारी पढ़ाई के लिए दिन-रात मजदूरी करके पैसे को लाते रहे और तुम्हारी पढ़ाई बंद नहीं होने दी। बेटा इतनी दुःख-दर्द में जीने के बाद भी ईश्वर ने उन्हें हमसे छीन लिया और तुम्हारे पिताजी एक दुर्घटना में मारे गये।

बेटा, मैंने अपने जीवन काल में दुःख-दर्द के सिवा कभी खुशी नहीं देखी है। ईश्वर हर मोड़ पर हमसे इम्तिहान लेते रहे पर मैं धैर्य के साथ परिस्थितियों का सामना करती रही। बेटा अब मैं भी शारीरिक रूप से कमजोर हो गई हूँ फिर भी जब तक इस शरीर में प्राण रहेगें तब तक तुम्हारे लिए मेहनत-मजदूरी करती रहूँगी और तुम्हें पढ़ा-लिखाकर महान और कामयाब बनाऊँगी। अभी कमला आगे कुछ बोलती तभी रामू ने बीच में टोकते हुए बोला "माँ, आपने हमारे लिए बहुत परिश्रम किया है अब हम आपको और कष्ट नहीं दे सकते और अब हम आपका सपना भी जरूर पूरा करेंगे।"

माँ की बातों ने रामू के अंदर नयी उमंग व जोश भर दिया। उस दिन से रामू ने सुबह 4 बजे से उठकर पढ़ना शुरू कर दिया और रोज सुबह पढ़ाई करने के बाद माँ के काम में हाथ बटाने के बाद समय से वह स्कूल जाने लगा और वह स्कूल में प्रथम स्थान प्राप्त करने लगा। जब रामू बड़ा हुआ तो उसे पढ़ाई पूरी करने के लिए शहर भेज दिया गया। वहाँ पर उसने एम.बी.बी.एस. की तैयारी की और वह एम.बी.बी.एस. डाक्टर बन गया। जिस रामू के पास कल रहने के लिये घर नहीं था, खाने के लिए अन्न नहीं था, पढ़ने के लिए किताबें और इलाज के लिए पैसे नहीं थे, आज उसी रामू की मेहनत और सच्ची लगन ने उसे सब कुछ दिला दिया और अपनी माँ के साथ खुशी से रहने लगा। इस तरह जो व्यक्ति कठोर परिश्रम और सच्ची लगन से मेहनत करता है उसे सफलता अवश्य मिलती है।

Ekgku oKkfud efgyk D;jh

Ik'kkr dey JhokLro ,o vkj-,l- pkjfl ;k
Hkkdvuli&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

मान्या पराधीन पोलैण्ड की निरीह बच्ची थी। यह छोटी बच्ची जब भी किताब लेकर पढ़ने बैठती तो उसे किसी बात की याद न रहती। उसकी माँ बहुत बीमार रहती थी। इस निरीह बच्ची में वैज्ञानिक खोज करने की इच्छा थी, परन्तु पोलैण्ड में वैज्ञानिक खोज करने की कोई सुविधा न थी। मान्या ने अपनी वैज्ञानिक खोज प्रारम्भ की। वह चाहती थी कि वैज्ञानिक खोज के लिए कोई ऐसा विषय लिया जाए, जिस समस्या का अभी तक कोई हल न निकला हो। मान्या जिस प्रयोगशाला में काम करती थी, उसके अध्यक्ष पियरे क्यूरी थे, जो कि फ्रान्स के एक बड़े वैज्ञानिक थे। मान्या ने जिस विषय पर खोज की, उसने वैज्ञानिकों में बड़ी हलचल मचा दी। उसने एक नयी किरण का पता लगाया। जैसा कि स्वाभाविक था इस किरण के बारे में वैज्ञानिकों को पहले पता नहीं था, कठिनाइयाँ बहुत थी। सबसे बड़ी कठिनाई यह थी कि इस विषय पर पुस्तकें नहीं थीं और न ही इस विषय को कोई अध्यापक पढ़ाता था। बैकवेरल महोदय केवल इतनी मद्द कर सकते थे कि हाँ इस प्रकार की किरण मौजूद है।

बहुत प्रयासों के बाद मान्या को पदार्थ विज्ञान विभाग के अधिकारियों द्वारा विश्वविद्यालय की निचली मंजिल में एक सीलन भरा कमरा मिला। सर्दी में उस कमरे में बहुत ठंडक और गर्मी में बहुत गर्मी होती थी। लेकिन यहाँ मान्या को कोई विघ्न डालने वाला नहीं था। वह एकाग्रचित होकर यूरेनियम के कण-कण की जांच करती।

जितनी तरह की धातुओं का पता था मान्या ने सब की जांच कर ली, अन्ततः मान्या ने पोलोनियम व रेडियम जैसे रेडिओएक्टिव तत्वों की खोज कर ली। 1903, में मान्या को नोबल पुरस्कार से नवाजा गया। संसार में पहली बार किसी स्त्री को इतना यश मिला। यह मान्या, मैरी क्यूरी के नाम से जानी जाती है। इस रेडिओएक्टिव तत्व का मानव जीवन में बहुत उपयोग है।

vk'kk&fujk'kk

vkj-,l- pkjfl;k

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

उम्मीद का महत्व कभी कम नहीं होता, ठीक प्यार की तरह। खुद से उम्मीद रखना और दूसरों की उम्मीदों पर खरा उतरना ही जीवन का ध्येय होना चाहिए। अगर उम्मीदों को परे हटाकर आप *न्यूट्रल गियर* में जीवन गुजार रहे हों, तो तय है कि आप अपने काम को चलाऊ तरीके से ही करेंगे।

उम्मीद किन चीजों से करनी चाहिए? इरविंग बैलेस अपनी पुस्तक *'द बुक ऑफ लिस्ट्स'* में लिखते हैं कि हर व्यक्ति तीन चीजों की आशा जरूर लगाए रखता है- प्रियतम का सहचर्य, अतुल संपत्ति और अमरता। वह कहते हैं कि ये चीजें मिलें न मिलें, लेकिन जिंदगी के मायने यही हैं। दार्शनिक सिसरो तो यहाँ तक कहते हैं कि जहाँ जिंदगी है, वहाँ आशा है और अगर आप आशा नहीं रखते हैं, तो इस जीवन का क्या अर्थ?

आधुनिक तत्व-ज्ञानियों ने भी माना है कि विचार से अधिक विश्वास की शक्ति है और जिस चीज का हमें विश्वास हो, उसकी हम आशा करते हैं। डेल कारनेगी कहते हैं कि यथास्थितिवाद बहुत से लोगों का स्वभाव बन जाता है। वे अभाव से छुटकारा पाने का प्रयत्न हीं नहीं करते। ऐसा स्वभाव धीरे-धीरे शरीर का अंग बन जाता है और उसे छोड़ना कठिन हो जाता है। वह कहते हैं कि निराशा सबसे पहले साहस व सामर्थ्य कम करती है और फिर हमारे व्यक्तित्व को संदेहशील और आशंकित बना डालती है। लेकिन इन बातों से हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि निराशा बिल्कुल फिजूल की चीज है। जीवन में यह भी जरूरी है। बिल्कुल थोड़ी ही सही, लेकिन एक अंतराल पर इसका होना जरूरी है। हम यह नहीं भूल सकते कि आशा ने हवाई जहाज का आविष्कार किया, पर दुर्घटना होने की सोच ने, जो निराशा का प्रतिफल है, पैराशूट का निर्माण करवाया। निराशा हो, पर जरूरी है कि वह रचनात्मक हो। उसका ध्येय जीवन को खुशबूदार बनाना होना चाहिए।

cVh cpkvk] cVh i<kvk

dyçhr flg

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

एक लड़का (मोहन) जो कि मीरा नामक लड़की से बहुत प्रेम करता था और दोनों ने घर वालों की असहमति से प्रेम विवाह कर लिया और एक दूसरे से वादा किया कि हमारे घर वाले शादी के खिलाफ है, तो हम लोग कभी भी अपने घर वालों (माता-पिता) से कोई रिश्ता नहीं रखेंगे तथा न कभी अपने घर का दरवाजा उनके लिए खोलेंगे। इसी प्रकार दिन बीतते गये और कुछ समय बाद मोहन के माता-पिता घर पर आते हैं और दरवाजे की घंटी बजती है। मोहन और मीरा घर पर हैं पर मोहन ने अपने माता-पिता के लिए घर का दरवाजा नहीं खोला। क्योंकि मोहन और मीरा एक दूसरे से वादा किए हुए हैं कि जो हमारे विवाह के लिए राजी नहीं हुआ उनसे हम कोई संबंध नहीं रखेंगे और मोहन के माता-पिता घंटी बजा-बजा कर परेशान हो गये पर मोहन ने दरवाजा नहीं खोला। फिर कुछ समय बाद मीरा के माता-पिता आए। मोहन और मीरा घर पर ही थे दोनों घंटी बजा रहे थे, पर मीरा गेट नहीं खोल रही थी। कुछ समय बाद मीरा घर के अंदर रोने लगी। मोहन से उसका रोना देखा नहीं गया और मोहन ने उसे दरवाजा खोलने के लिए कहा और कुछ समय बाद दोनों को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। उसके कुछ समय बाद उनको एक और पुत्र हुआ। दो पुत्र होने के बाद भी मोहन को खुशी नहीं थी जैसे वह मन ही मन कुछ असंतुष्ट था और कुछ वर्ष बीतने के बाद उन्हें एक पुत्री की प्राप्ति हुई जिसके बाद मोहन को अपार खुशी प्राप्त हुई और उसने अपने गाँव में सबसे बड़ा समारोह आयोजित किया और दिल खोल के खर्च किया परन्तु मीरा के चेहरे पर इतनी खुशी नहीं थी और उसके मन में प्रश्न चल रहा था कि दो पुत्र हुए पर फिर भी जश्न नहीं किया मगर एक पुत्री होने पर लाखों खर्च कर दिए। समारोह खत्म होने के बाद मीरा ने मोहन से प्रश्न किया कि पुत्र होने पर तुमने जश्न नहीं किया और न ही खुश हुए और पुत्री होने पर तुमने लाखों रुपये खर्च कर दिए। मोहन ने बस एक ही उत्तर दिया कि यही पुत्री एक दिन हमारे लिए दरवाजा खोलेगी अर्थात पुत्री कहीं भी हो, माता-पिता का निरंतर ख्याल रखती है पुत्र अगर भाग्य से मिलता है तो पुत्री सौभाग्य से मिलती है। इतनी बातें सुनकर मीरा के आंखों में आँसू आ गये और मीरा भी मोहन की बातों से सहमत हो गई।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

ekVh dh ;kn vnHkqn xkFkk

vke iadk'k

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

जीवन का आधार ये मिट्टी, ऊर्जा का संचार ये मिट्टी।
छाती पर सब वहन है करती, देश का दुलार ये मिट्टी।
सर्दी, गर्मी हो या वर्षा, खुशियों की बौछार ये मिट्टी।
अन्न, फूल, फल से संजोयी, सब जीवों का उपहार ये मिट्टी।
खनिज रत्न सब छुपे हैं इसमें, कुम्हारों का सहारा ये मिट्टी।
बड़े-बड़े वीर इस पर जन्में, शहीदों पे न्योछावर ये मिट्टी।
राम कृष्ण भी इस धरती के, बड़े-बड़े संस्कार ये मिट्टी।
प्रलय, अकाल, भूकम्प दिखाकर देती हाहाकार ये मिट्टी।
स्वस्थ रखे और रक्षा करे सबकी, करें शपथ हुंकार ये मिट्टी।
जन्में इसकी कोख में हम सब, मरण गोद उपसंहार ये मिट्टी।
सारे देव व सारी दुनिया, के चरणों को ध्याती है ये मिट्टी।
हम भी मिट्टी, तुम भी मिट्टी, जिंदगी का है नाम ये मिट्टी।
सारी दुनिया रहती मिट्टी में, सबको आशियाना देती ये मिट्टी।
नीर भरा है, माटी की गागर में, उसमें शीतलता बढ़ा देती ये मिट्टी।
निर्भय कुम्हार की थापी से, कितने रूपों में कुटी-पिटी ये मिट्टी।
बार-बार बिखेरी गई, किन्तु मिट्टी फिर भी रहती है मिट्टी।
फसलें उगती, फसलें कटती, लेकिन फिर भी है स्थिर व उर्वर ये मिट्टी।
मिट्टी से धन धान्य उपजता, हीरा, सोना देती ये मिट्टी।
सबकी परमपूज्य वंदित, मधुर सलोनी है ये मिट्टी।
मिट्टी में ही पैदा हुआ सबकुछ, जन्म-जन्म तक नाता रखती ये मिट्टी।
समस्याग्रस्त भूमि भी फूले-फले, कृषकों के घर धन-धान्य बढ़े।
कृषकों की हर मनोकामना हो पूरी, तथा इक्षु परिवार का सम्मान बढ़े।।

e'nk lj{k.k

cã iadk'k

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

एक ओर जहाँ विकास के नाम पर हो रही वृक्षों की अन्धाधुंध कटान।
वहीं अन्य ओर आवास के नाम पर हो रही खेतिहर भूमि की कटान।।
रसायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों के प्रयोग पर जहाँ किसानों का है जोर।
बंजर धरती की तरफ बढ़ते कदम, ले जा रहे हमें विनाश की ओर।।
कुल भूमि में खेती का हिस्सा रह गया है मात्र फीसदी पाँच।
उसमें भी दो तिहाई भूमि पर आ रही मृदा प्रदूषण की आँच।।
एक सेन्टीमीटर मिट्टी बनने में जहाँ लगे पाँच सौ वर्ष का काल।
पर दो-ढाई घण्टे की भारी वर्षा ही, बन जाती है उसका काल।।
मृदा क्षरण को रोकने के लिए आवश्यक है मृदा का संरक्षण।
खेतों की मेड़बंदी के साथ ही बढ़ाना होगा पौधों का रोपण।।
मृदा में मिले ठोस, द्रव व गैस ही होते हैं सभी के जीवन का मूल आधार।
इनके बगैर जीव जन्तुओं के जीवन का, हो नहीं सकता स्वप्न साकार।।
मृदा में जा रहे रसायन इनके रसायनिक गुणों पर डाल रहे प्रतिकूल प्रभाव।
कारखानों के वायु प्रदूषण कम करके ही, अप्रभावित रख सकते मृदा का स्वभाव।।
जीवाश्म, केंचुआ व प्लेसला करें, उर्वरा शक्ति को बनाए रखने का काम।
पर डी.डी.टी., गैमेक्सीन व एल्ड्रिन दवाएं करें उपयोगी जीवाणुओं का काम तमाम।।
उत्पादन बढ़ाने हेतु कृषक को लगता रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग आसान।
पर धरती की सेहत के साथ-साथ, मानव शरीर को भी ये पहुँचाते हैं नुकसान।।
रसायनिक उर्वरक व कीटनाशी रसायनों से जहाँ एक ओर धरती होती बर्बाद।
मृदा में इनके प्रतिकूल प्रभाव रोकने में सक्षम हैं केवल जैविक एवं हरी खाद।।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

oDr ugh

vkj-,l- pkjfl;k

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

हर खुशी है लोगों के दामन में,
पर एक हंसी के लिए वक्त नहीं।
दिन रात दौड़ती दुनिया में,
जिन्दगी के लिए वक्त नहीं।।

सारे रिश्तों को तो हम मार चुके,
उसे दफनाने के लिए वक्त नहीं।
सारे नाम मोबाइल में हैं,
पर दोस्ती के लिए वक्त नहीं।
गैरों की क्या बात करें,
जब अपनों के लिए वक्त नहीं।।

आँखों में है नींद भरी,
पर सोने का ही वक्त नहीं।
दिल है गमों से भरा हुआ,
पर रोने के लिए वक्त नहीं।।

पैसों की दौड़ में ऐसे दौड़े,
कि थकने का भी वक्त नहीं।
पराए एहसानों की क्या कद्र करें,
जब अपने ही सपनों के लिए वक्त नहीं।।

तू बता ऐ ज़िन्दगी,
इस ज़िन्दगी का क्या होगा।
कि हर पल मरने वालों को,
जीने के लिए भी वक्त नहीं।।

xUus dk ikS/kk

lquhy dqekj feJk

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

मैं गन्ने का पौधा हूँ, खेतों में लहराता हूँ।
मैं लाठी जैसा होता हूँ, फिर भी मीठा होता हूँ।।
अगर मुझमें ज्यादा रस भर जाए, तो मैं फट जाता हूँ
वैसे ही प्रभुता को पाकर हर इंसान इतराता है।
मानव धर्म छोड़कर, खुद का भला ही सोचता हूँ।।
मैं गन्ने का पौधा हूँ, खेतों में लहराता हूँ.....
अगर मुझमें कीड़े लग जाएं, तो मैं भी सूख जाता हूँ।
कीड़े की दवा खेतों में डालकर मुझे किसान बचाता है।।
मैं गन्ने का पौधा हूँ, खेतों में लहराता हूँ......
इस नश्वर दुनिया में भईया काहे का अहंकार है।
खाली हाथ आए हैं हम सब, खाली हाथ ही जाना है।।
कर्म करो ऐसा भईया जो नाम अमर हो जाय।।
मैं गन्ने का पौधा हूँ, खेतों में लहराता हूँ......

आमोद-प्रमोद प्रभाग

uxj jkt Hkk"kk dk;kZUo;u lfefr ¼dk;kZy;&3½] y[kuÅ

Nekgh çxfr

संस्थान में दिनांक 23 जून, 2018 को इस वित्तीय वर्ष की द्वितीय नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास) बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक में लखनऊ स्थित नराकास (कार्यालय-3) के 61 सदस्य कार्यालयों प्रमुख एवं उन कार्यालयों के हिंदी विद्याजनों ने भाग लिया। साथ ही संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों ने भी भाग लिया। इस बैठक की अध्यक्षता नराकास (कार्यालय-3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक, डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने की। इस अवसर पर डॉ. ए.के. साह संस्थान के राजभाषा प्रकोष्ठ के प्रभारी एवं सचिव नराकास (कार्यालय-3) भी उपस्थित थे। इस बैठक में जुलाई 2017 से मार्च 2018 के बीच हिंदी प्रस्तुतिकरण प्रतिवेदन की समीक्षा करने के उपरांत उनका प्रस्तुतिकरण डॉ. ए.के. साह द्वारा किया गया। प्रस्तुतिकरण के उपरांत हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने हेतु 10 कार्यालयों को पुरस्कृत किया गया। साथ ही 3 संस्थानों को राजभाषा पत्रिका हेतु सम्मानित किया गया। इसके उपरांत नराकास (कार्यालय-3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने संस्थान द्वारा हिंदी के कार्यों के बारे में किए जा रहे कार्यों को बताया। इस बैठक में कार्यालयी कार्यों एवं राजभाषा पत्रिका हेतु प्रथम एवं द्वितीय स्थान पाने वाले कार्यालय अध्यक्षों ने भी अपने विचारों को रखा। इस बैठक में विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री अजय मलिक, उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, गाजियाबाद तथा डॉ. ए.के. साह, सचिव, नराकास, (कार्यालय-3) उपस्थित थे। राजभाषा विभाग से आए श्री अजय मलिक ने अपना विचार रखे तथा हिंदी में अधिक प्रभावी कार्य शैली को बढ़ावा देने के लिए मार्गदर्शन दिए। बैठक का संचालन, श्री अभिषेक कुमार सिंह, तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने किया। साथ ही कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत दस कार्यालयों एवं पत्रिका हेतु पुरस्कृत चार कार्यालयों को अध्यक्ष महोदय द्वारा स्मृति चिह्न प्रदान किए गए। साथ ही इस दौरान जिन 31 कार्यालयों ने हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया था उनको प्रमाण पत्र दिए गए।

कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

Ø-l-	dk;kZy; dk uke	LFkku
1	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	I
2	सीएसआईआर–भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	II
3	पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु. बल, बिजनौर, लखनऊ	III
4	क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, लखनऊ	IV
5	पुलिस उप महानिरीक्षक, केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल, रेंज लखनऊ, बिजनौर, लखनऊ	IV
6	क्षेत्रीय कार्यालय, केन्द्रीय रेशम बोर्ड, लखनऊ	V
7	कार्यालय पुलिस महानिरीक्षक, मध्य सेक्टर, के.रि.पु. बल, प्लाट सं–टी.सी.–विभूति खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ	VI
8	अनुसंधान अभिकल्प और मानक संगठन (रेल मंत्रालय), लखनऊ	VII
9	जगजीवन राम रेलवे सुरक्षा बल अकादमी, लखनऊ	VIII
10	केन्द्रीय विद्यालय, आर.डी.एस.ओ., मानक नगर, लखनऊ	IX

पत्रिका हेतु पुरस्कृत कार्यालय एवं पत्रिका का नाम

Ø-l-	dk;kZy; dk uke	LFkku
1	मत्स्य लोक : भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	I
2	पराक्रम : पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु. बल, बिजनौर, लखनऊ	II
3	सारंग : मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	III
4	प्रगति : मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	IV

'kCn dk"k

A

Aerial	हवाई, एरियल, आकाशी
Aerial survey	हवाई सर्वेक्षण
Aerodrome	हवाई अड्डा
Aerogramme	हवाईपत्र
Aeronautical	वैमानिक
Aeroplane	विमान, हवाई जहाज
Aesthetic sense	सौंदर्य बोध
Affairs	कार्य, मामले
Affect	प्रभाव डालना, प्रभावित करना
Affidavit	शपथपत्र, हलफनामा
Affiliate	संबद्ध करना
Affiliated college	संबद्ध महाविद्यालय
Affiliating university	संबंधक विश्वविद्यालय
Affiliation	संबंधन
Affinity	अनुरक्ति, विवाह संबंध
Affirmation	अभिपुष्टि, प्रतिज्ञान (विधि)
Affirmative	सकारात्मक
Affirmative action	सकारात्मक क्रिया
Affirmative recruitment	सकारात्मक भर्ती, अभिपुष्ट भर्ती
Affix	लगाना
Afford	प्रदान करना, देना
Afforestation	वन–रोपण
Affranchise	मताधिकार
Aforesaid	पूर्वोक्त
Afresh	नये सिरे से
Afternoon	अपराह्न, दोपहर बाद
Afterwards	तत्पश्चात्

B

Banking facilities	बैंकिग सुविधाएँ
Banking hours	बैंक का कार्य–समय
Bank operations	बैंक कार्य
Bearer cheque	वाहक चेक
Beat guard	गश्ती गारद
Beauty spot	रमणीक स्थल
Bedding	बिस्तर, बिछौना
Bed strength	शय्या–संख्या
Bee keeping	मधुमक्खी पालन
Before cited	पूर्व–कथित
Before hand	समय से पहले
Behaviour	व्यवहार
Belated claims	विलंबित दावे
Belief	विश्वास
Bell hop	नौकर
Below par	अवमूल्य पर
Bench	खण्डपीठ
Benchmark	तल चिन्ह
Bend	मोड़
Beneficiary	लाभार्थी
Benefit	लाभ
Benefit of doubt	संदेह लाभ
Benefit period	हित लाभ की अवधि
Benevolence	हितकारिता
Benevolent fund	हितकारिता निधि
Bequeath	वसीयत करना
Bequest	वसीयत
Bereaved	शोक संतप्त
Best endeavours	पूरा प्रयास
Betray	विश्वासघात करना
Better living	उन्नत जीवन–स्तर
Betterment	खुशहाली
Betterment tax	खुशहाली कर
Better title	बेहतर हक
Beverage	पेय

C

Cheating	छल करना
Chasis number	चेसिस संख्या
Chain	जंजीर
Clause	खण्ड
Clue	संकेत
Coastal	तटवर्ती
Coach	डिब्बा

D

Descending order	अवरोही क्रम
Designation	पदनाम
Despatch	रवानगी
Despatcher	भेजने वाला
Detailed	विस्तृत
Devaluation	अवमूल्यन
Development authority	विकास प्राधिकरण
Deviation	अंतर, विचलन
Diamond jubilee	हीरक जयंती
Diary register	डायरी रजिस्टर
Dictation	श्रुतलेख
Dies non	अकार्य दिवस
Dignity	गरिमा
Diplomat	राजनयिक
Diplomatic	कूटनीतिक
Direct recruitment	सीधी भर्ती
Direction	निदेशन, नियन्त्रण, दिशा
Directory	निदेशिका

E

Entrant	प्रवेशी
Entrust	सौंपना

Entry	प्रविष्टि
Entry level job	प्रवेश स्तर कार्य
Entry permit	प्रवेश अनुज्ञा
Enumeration	गणना, गिनना
Environment	पर्यावरण
Envoy	दूत
Ephemeral file	अल्पकालिक मिसिल
Ephemeral roll	अल्पकालिक पंजी
Establishment	स्थापना
Estimate	प्राक्कलन
Evaluator	मूल्यांकक
Evidence	साक्ष्य

F

Financial legislation	वित्तीय–विधान
Financial obligation	वित्तीय दायित्व
Financial provisions	वित्तीय प्रावधान
Fiscal	राजकोषीय
Fixed pay	नियत वेतन
Forecast	पूर्वसूचना, पूर्वानुमान
Foreign affairs	विदेशी मामले
Forthcoming	आगामी
Fortnight	पक्ष, पखवाड़ा
Forward	अग्रवर्ती, अग्रेशित करना
Foreman	फोरमैन
Forenoon	पूर्वाह्न, दोपहर से पहले
Format	आरूप
From (in letters)	प्रेषक

G

Goodwill	सदभाव
Governing body	शासी निकाय
Government	सरकार
Grading scale	श्रेणीकरण मापक्रम
Grand total	महायोग
Grantee	अनुदानग्राही
Grantor	अनुदाता
Gratuity	उपदान
Grievance	शिकायत
Gross	सकल
Gross pay	सकल वेतन
Group insurance	समूह बीमा

H

Higher authority	उच्च प्राधिकारी
Higher education	उच्च शिक्षा
Highest bid	उच्चतम बोली
High flier	अतिसफल (व्यक्ति), महत्वाकांक्षी
High-grade	उच्च कोटि
Holding	जोत
Holiday	अवकाश
Holiday resort	अवकाश सदन

I

Index	अनुक्रमणिका
Index card	सूचक कार्ड
Indication	संकेत
Indicator	संकेतक
Indifference	उदासीनता
Indistinct	अस्पष्ट
Indorsement	पृष्ठांकन
Industrialist	उद्योगपति
Ineffective	निष्प्रभावी
Inflation	स्फीति, मुद्रास्फीति
Infringement	अतिलंघन, उल्लंघन

J

Joint supervision	संयुक्त पर्यवेक्षण
Joint tenants	संयुक्त किराएदार
Joint venture	संयुक्त उद्यम
Journal	दैनिकी, पत्रिका, जर्नल
Journalist	पत्रकार, संवाददाता
Journey	यात्रा
Journey time	यात्रा समय

K

Knowingly	जानबूझकर
Knowledgeable	जानकार

L

Letter box	पत्र पेटी
Letter card	लेटर कार्ड, पत्र
Letter head	पत्रशीर्ष
Letter pad	पत्र–पैड
Level	स्तर
Leverage	प्रभावन क्षमता
Levy	उदग्रहण, चन्दा, उगाही
Lexicography	कोशविज्ञान
Lexicon	कोश

M

Misbehaviour	दुर्व्यवहार
Miscellaneous	विविध, फुटकर
Mission	मिशन
Mobility	गतिशीलता
Mobilization	जुटाव
Mode	ढंग

N

Non-acceptance	अस्वीकृति
Non-adherence	अपालन
Non-advertised	अविज्ञापित
Non-age	अवयस्कता
Non-agricultural	गैर–कृषिगत
Non-appearance	पेश न होना
Non-consent	असम्मति
Non-continuous service	विच्छिन्न सेवा

Non-contributory	गैर–अंशदायी
Non-contributory pension scheme	गैर–अंशदायी पेंशन योजना
Non-delivery	अवितरण
Non-directive interview	अनिर्दिष्ट साक्षात्कार
Non-drawal	अनाहरण
Non-earning	अनर्जक

O

Oral	मौखिक
Oral admission	मौखिक अभिस्वीकृति
Oral consultation	मौखिक परामर्श
Oral evidence	मौखिक साक्ष्य
Orally	मौखिक रूप से
Oral warning	मौखिक चेतावनी
Order	आदेश
Order cheque	आदेश चेक
Order of reservation	आरक्षण–क्रम
Order of appointment	नियुक्ति आदेश
Order of merit	गुणानुक्रम
Order of priority	प्राथमिकता क्रम
Order of seniority	वरिष्ठता–क्रम
Order of precedence	पूर्वता–क्रम
Ordinance	अध्यादेश

P

Positive	निश्चयात्मक
Post-facto sanction	कार्योत्तर मंजूरी
Posthumous	मरणोपरांत
Poultry farming	कुक्कुट पालन
Pre- receipted bill	रसीद सहित बिल
Precedence	प्रधानता, वरीयता
Pretest	पूर्व परीक्षण
Presents	विलेख, उपहार, भेंट
Premature	समयपूर्व
Premises	परिक्षेत्र
Preservation	परिरक्षण
Press	मुद्रणालय
Prevention	निवारण
Price list	कीमत सूची
Primary education	प्राथमिक शिक्षा
Principal	प्राचार्य
Priority	प्राथमिकता
Privacy	एकांत
Privilege	विशेषाधिकार
Pro-rata	यथानुपात
Pro-rata quota	यथानुपात कोटा
Protection	संरक्षण

Q

Quit	छोड़ना
Quote	उद्धरण, हवाला

R

Reliable	विश्वसनीय
Reliever	भारमुक्त करना
Remark	उक्ति कहना
Remedial	उपचारी
Remit	प्रेषण करना
Remote	दूरवर्ती
Removal	स्थानान्तरण, हटाना
Remuneration	मेहनताना
Replacement	प्रतिस्थापन
Reprimand	फटकार
Reprint	पुनः प्रकाशित करना
Reproduction	पुनरुत्पादन
Representation	प्रतिनिधित्व
Requisition	मांग
Reservation	आरक्षण
Reshuffle	फेरबदल
Residual	अवशिष्ट
Resignation	त्यागपत्र
Resist	प्रतिरोध करना
Resource person	ज्ञान स्रोत व्यक्ति
Responsibility	जिम्मेदारी
Restricted	प्रतिबंधित
Restoration	पुनः स्थापन
Restriction	रोक
Resume	सार वृत्त
Retain	प्रतिधारित करना
Return	वापस करना
Revalidation	पुनःवैधिकरण
Revenue	राजस्व
Revenue stamp	रसीदी टिकट
Review	समीक्षा
Revise	संशोधन करना
Revision	पुनरीक्षण, संशोधन

S

Smooth	निर्विघ्न
Social work	समाज कार्य
Soil	मिट्टी
Sole agency	अभिकरण
Solemn affirmation	सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान
Solemnly	सत्यनिष्ठापूर्वक
Solvency	शोधन क्षमता
Source of income	आय श्रोत
Souvenir	स्मारिका
Specialist	विशेषज्ञ
Specimen	नमूना
Spouse	पति या पत्नी

T

Technical data	तकनीकी आंकड़े

Technical post	तकनीकी पद
Technical qualifications	तकनीकी अर्हता
Technical skill	तकनीकी कुशलता
Technical term	परिभाषिक शब्द
Technical training	तकनीकी प्रशिक्षण
Technician	तकनीकविद्
Technique	तकनीक
Technocracy	प्रविधिज्ञ तंत्र
Technocrat	प्रविधिज्ञ
Techno-economic study	तकनीकी–आर्थिक अध्ययन
Technological	प्रौद्योगिक
Technologist	प्रौद्योगिकीविद्
Technology	प्रौद्योगिकी
Telebanking	दूर–बैंकिंग
Telegram	तार
Telegraphic address	तार पता
Telegraphy	तार–संचार

U

Unrealizable sum	पप्राप्य राशि
Unreasonable	अयुक्तियुक्त
Unrecorded	अनभिलिखित
Unregistered document	अपंजीकृत दस्तावेज
Unregistered firm	अपंजीकृत फर्म
Unregistered vacancy	अनारक्षित रिक्त पद
Unsafe	संरक्षित
Unsatisfactory	असंतोषजनक
Unsecured	असुरक्षित
Unsecured loan	अप्रतिभूत कर्ज
Unserviceable	बेकार

V

Vocational	व्यवसायिक
Voluminous	विशालकाय
Voluntary	स्वैच्छिक
Vote of thanks	धन्यवाद प्रस्ताव
Vow	व्रत
Voyage	समुद्री यात्रा

W

Waybill	मार्गपत्रक
Ways	तरीके
Ways and means	अर्थोपाय, राजस्व धन
Ways and means committee	अर्थोपाय समिति
Wealth	धन
Wear and tear	टूट–फूट
Weather	मौसम
Weathering	अपक्षय
Weeding (of records)	अभिलेखों की छटाई
Weekly arrear statement	साप्ताहिक बकाया विवरण
Weekly off reserve	साप्ताहिक छुट्टी रिजर्व
Weekly report	साप्ताहिक रिपोर्ट
Weight	भार
Weigh	तोलना
Weightage	महत्व
Weigh bridge	धर्मकाँटा
Weighted check list	भारित चिह्नांकन सूची
Weight machine	तोल मशीन
Weightment charges	तुलाई
Welcome	स्वागत
Welcome address	स्वागत भाषण
Welfare	कल्याण
Welfare state	कल्याणकारी राज्य
Well behaved	शिष्ट
Well-paid	सुप्रदत्त
Well-qualified	सुअर्ह
Well-versed	सुप्रवीण
Wet lease	सकार्मिक पट्टा
Wharf	घाट
Wharfage	घाट–भाड़ा
Whereabouts	ठौर–ठिकाना
Whereas	जबकि
Whimsical	सनकी, झक्की
Whip	सचेतक
Whisper	कानाफूसी
White paper	श्वेत पत्र
Whitewashing	सफेदी
Whizz-kid	युवा–सुव्यवसायी
Wholesaler	थोक व्यापारी
Whole-time	पूर्णकालिक

X

X-Ray Technician	एक्सरे तकनीशियन

Y

Young	नौजवान
Youth	युवा

Z

Zonal council	आंचलिक परिषद्
Zonal council secretariate	आंचलिक परिषद् सचिवालय
Zonal office	आंचलिक कार्यालय

lkdyu % vfHk"kd dekj flg ,o cã idk'k

आपके पत्र

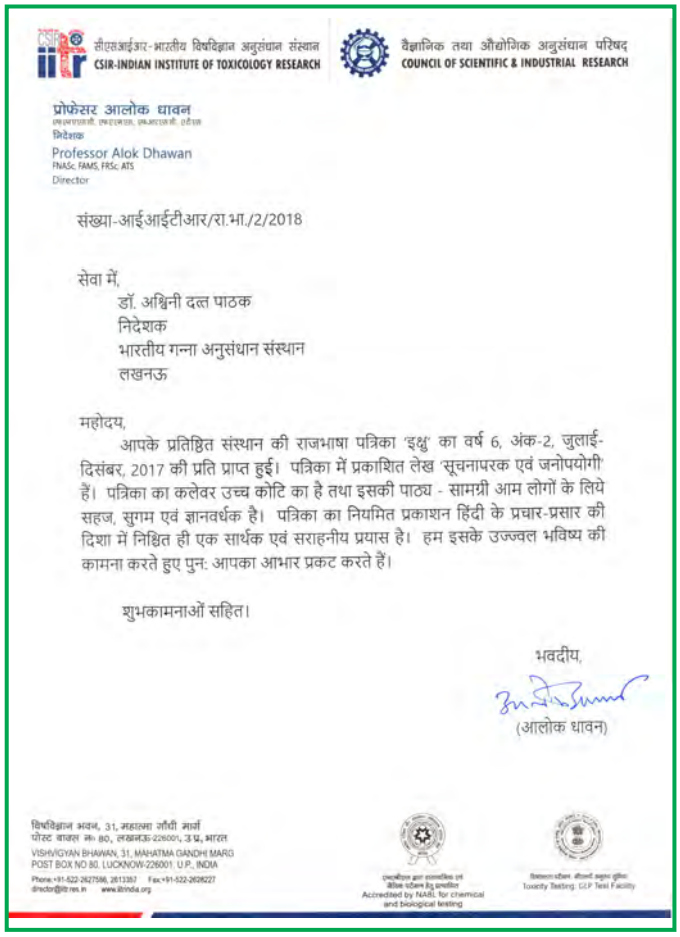

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
CSIR-INDIAN INSTITUTE OF TOXICOLOGY RESEARCH

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद
COUNCIL OF SCIENTIFIC & INDUSTRIAL RESEARCH

प्रोफेसर आलोक धावन
निदेशक
Professor Alok Dhawan
FNASc, FAMS, FRSc, ATS
Director

संख्या-आईआईटीआर/रा.भा./2/2018

सेवा में,
डॉ. अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

महोदय,

आपके प्रतिष्ठित संस्थान की राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' का वर्ष 6, अंक-2, जुलाई-दिसंबर, 2017 की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका में प्रकाशित लेख 'सूचनापरक एवं जनोपयोगी' हैं। पत्रिका का कलेवर उच्च कोटि का है तथा इसकी पाठ्य - सामग्री आम लोगों के लिये सहज, सुगम एवं ज्ञानवर्धक है। पत्रिका का नियमित प्रकाशन हिंदी के प्रचार-प्रसार की दिशा में निश्चित ही एक सार्थक एवं सराहनीय प्रयास है। हम इसके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए पुन: आपका आभार प्रकट करते हैं।

शुभकामनाओं सहित।

भवदीय,
(आलोक धावन)

विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बाक्स नं० 80, लखनऊ-226001, उ.प्र., भारत
VISHVIGYAN BHAWAN, 31, MAHATMA GANDHI MARG
POST BOX NO 80, LUCKNOW-226001, U.P., INDIA
Phone: +91-522-2627586, 2613357 Fax: +91-522-2628227
director@iitr.res.in www.iitrindia.org

Accredited by NABL for chemical and biological testing

Toxicity Testing: GLP Test Facility

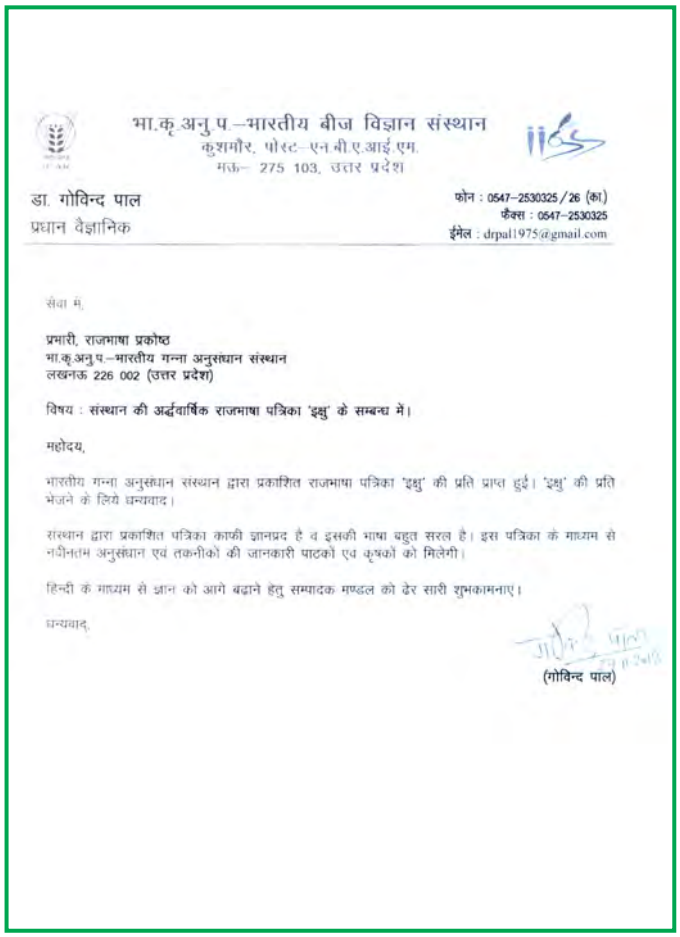

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय बीज विज्ञान संस्थान
कुशमौर, पोस्ट–एन.बी.ए.आई.एम.
मऊ– 275 103, उत्तर प्रदेश

डा. गोविन्द पाल
प्रधान वैज्ञानिक

फोन : 0547–2530325 / 26 (का.)
फैक्स : 0547–2530325
ईमेल : drpal1975@gmail.com

सेवा में,

प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ 226 002 (उत्तर प्रदेश)

विषय : संस्थान की अर्द्धवार्षिक राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' के सम्बन्ध में।

महोदय,

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' की प्रति प्राप्त हुई। 'इक्षु' की प्रति भेजने के लिये धन्यवाद।

संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका काफी ज्ञानप्रद है व इसकी भाषा बहुत सरल है। इस पत्रिका के माध्यम से नवीनतम अनुसंधान एवं तकनीकों की जानकारी पाठकों एवं कृषकों को मिलेगी।

हिन्दी के माध्यम से ज्ञान को आगे बढ़ाने हेतु सम्पादक मण्डल को ढेर सारी शुभकामनाएं।

धन्यवाद,

(गोविन्द पाल)

समाचार प्रभाग

लखनऊ, शनिवार, 17 फरवरी 2018 दैनिक जागरण

लखनऊ

स्थापना दिवस पर कर्मचारी सम्मानित

कर्मचारी अभिषेक को सम्मानित करते मुख्य अतिथि डॉ. आर के सिंह व निदेशक अश्विनी पाठक

जागरण संवाददाता, लखनऊ : गन्ने के खेतों में ही बंदगोभी, फूलगोभी व चने की खेती जैसी फसलों का उत्पादन कर किसान अपनी आय को दोगुनी कर सकते हैं। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान का किसानों की आय बढ़ाने का प्रयास सराहनीय है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहायक महानिदेशक डॉ. आरके सिंह शुक्रवार को बतौर मुख्य अतिथि बोल रहे थे।

रायबरेली रोड स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के स्थापना दिवस पर आयोजित संगोष्ठी के दौरान उन्होंने कहा कि गन्ना किसानों के हित के लिए कम लागत में अधिक उत्पादन का लक्ष्य सामने रखकर काम करना चाहिए। इससे पहले संस्थान के निदेशक डॉ.अश्विनी कुमार पाठक ने पिछले 66 साल कर उपलब्धियों और किसान हित में किए गए कार्यों के बारे में विस्तार से जानकारी दी। संस्थान के प्रवक्ता डॉ.एके साह ने बताया कि संस्थान की स्थापना 1952 में स्थापना में की गई थी और वैज्ञानिक प्रयासों से इसमे बढ़ोतरी हो रही है। मुख्य अतिथि संस्थान के कर्मचारी अभिषेक को सम्मानित किया तो कैदी अशर्फीलाल और परमिंदर के अलावा किसान आदित्य नाथ सिंह,अब्दल हादी, अवधेश वर्मा,

---

हिन्दुस्तान

लखनऊ • शनिवार • 17 फरवरी 2018

यूपी देश का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक राज्य

गन्ना संस्थान

लखनऊ | निज संवाददाता

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के 66 वर्ष के अथक प्रयास का नतीजा है कि आज यूपी देश का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक राज्य बन गया है। संस्थान ने गन्ना क्षेत्र में 2.55, गन्ना उत्पादन में 4.06, गन्ना उपज में 1.82 तथा चीनी परता में 1.11 फीसदी की वृद्धि दर्ज की गई है। गन्ना किसानों की आय दोगुना करने के लिए संस्थान को गन्ना उत्पादकता को 72.3 टन प्रति हेक्टेयर से बढ़ाकर 78.8 टन प्रति हेक्टेयर एवं चीनी परता 10.61 से बढ़ाकर 11 टन प्रति हेक्टेयर करने की जरूरत है। यह बातें शुक्रवार को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के 67 वें स्थापना दिवस समारोह में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहायक महानिदेशक डॉ. आरके सिंह ने कहीं।

गन्ना खेती में उपलब्धि के लिए किसान सम्मानित : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के 67वें स्थापना दिवस के मौके पर उत्पादकता व सहयोग के लिए किसानों व कर्मचारियों को सम्मानित किया गया। इस मौके संस्थान के महानिदेशक डॉ. आरके सिंह ने संस्थान के प्रसार कार्यक्रम के तहत गन्ना खेती में सराहनीय उपलब्धि के लिए सीतापुर तीन कृषकों तथा लखनऊ के दो किसानों को प्रमाण पत्र एवं स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया। साथ ही विभिन्न श्रेणियों के संस्थान में कार्यरत 10 कर्मचारियों को सम्मानित किया। संस्थान में मजदूरी करने वाले आदर्श कारागार के दो कैदियों परमिंदर और अशर्फीलाल को सम्मानित किया।

संस्थान के प्रसार प्रभारी डॉ. एके शाह ने किसानों को नई तकनीकि और मशीनों के बारे में जानकारी दी। नाली विधि द्वारा बुवाई एवं गन्ना बीज उत्पादन करने वाले सीतापुर के खंभापुर निवासी आदित्य नाथ सिंह, बिसवां सीतापुर के अब्दुल हादी को को गन्ना के साथ सह-फसलों की उन्नत खेती के लिए व बिसवां सीतापुर के अवधेश वर्मा को गन्ना के साथ सब्जियों की उन्नत खेती के लिए, मदरपुर लखनऊ के ब्रजेश वर्मा को मधुमक्खी पालन द्वारा 300 टन शहद का उत्पादन करने के लिए तथा मटेरा, लखनऊ के होश राम वर्मा को समन्वित फसल पद्धति के अंतर्गत मधुमक्खी पालन एवं दुग्ध उत्पादन के लिए सम्मानित किया गया।

...म्स। नई दिल्ली/लखनऊ। बुधवार,18 जुलाई 2018

आईआईएसआर को मिला राजश्री टंडन राजभाषा पुरस्कार

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री राधा मोहन सिंह ने किया सम्मानित।

■ एनबीटी, लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर) के वैज्ञानिकों को उनके शोध क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के स्थापना दिवस पर दिल्ली में विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। परिषद ने बड़े और छोटे संस्थानों की कैटिगरी में अलग-अलग पुरस्कार रखे। जिसमें बड़े संस्थानों की श्रेणी में आईआईएसआर को वर्ष 2016-17 राजश्री टंडन राजभाषा के प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस दौरान भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री गजेंद्र सिंह शेखावत और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शीर्ष अधिकारी भी मौजूद रहे।

आईआईएसआर लखनऊ की ओर से यह पुरस्कार संस्थान के निदेशक डॉ. अश्विनी दत्त पाठक और अभिषेक कुमार सिंह ने हासिल किया। संस्थान के कृषि अभियंत्रण विभाग के दो वैज्ञानिक डॉ. अखिलेश कुमार सिंह और डॉ. सुखबीर सिंह को वर्ष 2017 में कृषि यंत्रों में नवप्रवर्तन और शोध के लिए नासी.आईसीएआर पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वहीं, संस्थान के जैव नियंत्रण केंद्र, प्रवरानगर, अहमदनगर के वैज्ञानिक डॉ. एसके होल्कर को वर्ष 2017 में कृषि और

दैनिक जागरण लखनऊ, 18 जुलाई 2018

गन्ना संस्थान को राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार

उपलब्धि

जागरण संवाददाता, लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान को राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री ने संस्थान के वैज्ञानिकों को उनके शोध क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के स्थापना दिवस पर सम्मानित किया। इस मौके पर कृषि एवं किसान कल्याण राज्यमंत्री गजेंद्र सिंह शेखावत व अन्य शीर्ष अधिकारी उपस्थित थे।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान को वर्ष 2016-17 में राजभाषा में सर्वाधिक कार्य करने के लिए राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार के प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार संस्थान के निदेशक डॉ.अश्विनी दत्त पाठक तथा हिन्दी अधिकारी अभिषेक कुमार सिंह ने प्राप्त किया।

संस्थान के कृषि अभियंत्रण विभाग के वैज्ञानिक डॉ. अखिलेश कुमार सिंह, प्रधान वैज्ञानिक डॉ.सुखबीर सिंह को वर्ष 2017 में कृषि यंत्रों में नवप्रवर्तन एवं शोध के लिए नासी-आइसीएआर पुरस्कार से सम्मानित किया गया। संस्थान के जैव नियंत्रण केंद्र, प्रवरानगर, अहमदनगर के वैज्ञानिक एवं प्रभारी डॉ.एसके होल्कर को वर्ष 2017 में कृषि एवं संबंधित विज्ञान में उत्कृष्ट डॉक्टोरल थीसिस के लिए जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

अमर उजाला

लखनऊ
शनिवार, 17 फरवरी 2018

अधिक गन्ना उत्पादन से ही दोगुनी होगी किसानों की आय

लखनऊ। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर) ने शुक्रवार को अपना 67वां स्थापना दिवस मनाया। इसमें भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सहायक महानिदेशक डॉ. आरके सिंह ने कहा कि गन्ना उत्पादन बढ़ा कर किसानों की आय दोगुनी की जा सकती है। डॉ. सिंह का कहना था कि गन्ना किसानों की आय को दोगुना करने के लिए उत्पादकता को 72.3 टन से बढ़ाकर 78.8 टन प्रति हेक्टेयर एवं चीनी परता 10.61 से बढ़ाकर 11 टन प्रति हेक्टेयर करना होगा।

आईआईएसआर के निदेशक डॉ. एडी पाठक ने बताया कि चीनी उद्योग की समस्याएं दूर करने की हम पूरी कोशिश कर रहे हैं। इस बीच दैनिक श्रमिकों के रूप मे संस्थान में काम कर रहे दो कैदियों परमिंदर और अशर्फी लाल को उत्कृष्ट सेवा के लिए सम्मानित किया गया। गन्ना की खेती के लिए सीतापुर के आदित्यनाथ सिंह, गन्ना के साथ सह फसल मक्का, चना, मूंगफली उगा क ज्यादा कमाई करने के लिए अब्दुल हादी और अवधेश वर्मा को सम्मानित किया गया। लखनऊ के ब्रजेश वर्मा और होशराम वर्मा मधुमक्खी पालन केलिए सम्मानित हुए। ब्यूरो

---

the pioneer

LUCKNOW I SATURDAY I FEBRUARY 17, 2018

'India has become self-reliant in sugar production'

Lucknow (PNS): ICAR-Indian Institute of Sugarcane Research (IISR) celebrated its 67th Foundation Day on Friday. Speaking at the inaugural function, Dr RK Singh, ADG (commercial crops), ICAR, informed newspersons that the area, production and productivity of sugarcane and sugar recovery in India had increased by 2.55, 4.06, 1.82 and 1.11 times, respectively during the past 66 years as a result of which it had become self-reliant in sugar production by producing 28 million tonnes of it.

In this accomplished scenario the IISR has contributed considerably. But to double the income of the sugarcane farmers, the present productivity of sugarcane has to be enhanced from the present level of 72.3 to 78.8 tonnes per hectare and sugar recovery from 10.61 to 11.00 tonnes per hectare. At the inaugural function three farmers of Sitapur which included Aditya Nath Singh, Avadhesh Verma and Abdul Hadi and two farmers of Lucknow viz Brajesh Verma and Hosh Ram Verma were awarded for their innovative and scientific farming. On the occasion 10 employees of the Institute were also honoured by being given the best worker award in different categories. Two jail inmates, Asharfi Lal and Parminder, were also honoured for their arduous services in the Institute. Four publications of the Institute were also released on the occasion. Awareness and training of farmers on PPV and FRA by KVK of IISR and a technology and machinery demonstration mela were also organised on the occasion. About 400 farmers from various districts of Uttar Pradesh participated in the training and mela. Director of ICAR-IISR AD Pathak highlighted the achievements they had made during last year. Pathak said that the large-scale adoption of IISR technologies i.e. improved cane varieties, three-tier seed production technique, STP, trench method of planting, intercropping with sugarcane, bio-intensive management of top borer and red rot, sugarcane machines, training module for cane managers etc had helped UP in emerging as the largest sugar-producing state of the country. Due to the adoption of IISR technologies the farmers were now earning an additional profit of Rs 2,000 crore every year, he said. Dr Pathak also reminded the commitment of IISR to address the emerging challenges in sugarcane and the sugar sector. During Technology and Machinery Demonstration Mela the farm machinery developed at the Institute for mechanisation of sugarcane agriculture was exhibited and live demonstrations were also performed in front of the farmers.

NBT
नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स। नई दिल्ली/लखनऊ। शनिवार,17 फरवरी 2018

'गन्ना उत्पादन में 2022 तक नम्बर-1 होगा भारत'

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने 67वां स्थापना दिवस मनाया

गन्ना किसानों और उत्कृष्ट सेवा देने वाले वैज्ञानिकों को सम्मानित किया गया।

■ एनबीटी, लखनऊ : गन्ना उत्पादन के क्षेत्र मे विश्व मे भारत को जनक माना जाता था, लेकिन वक्त के साथ प्रौद्योगिक विकास की रफ्तार धीरे पड़ने से ब्राजील जैसे देश ने पहला पायदान हासिल कर लिया है। इस चुनौती से निपटने के लिए भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्था के वैज्ञानिकों ने भारत को 2022 तक गन्ना उत्पादन क्षेत्र मे प्रथम दर्जा हासिल करने का लक्ष्य रखा है।

तेलीबाग इलाके मे भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने शुक्रवार को अपने 67वें स्थापना दिवस के मौके पर गन्ना किसानों और उत्कृष्ट सेवा देने वाले वैज्ञानिकों को सम्मानित किया गया। इस मौके पर विशिष्ट अतिथि के रूप मे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के असिस्टेंट डायरेक्टर आरके सिंह ने किसानों को संबोधित किया। उन्होंने कहा कि ब्राजील ने खेती प्रौद्योगिक मे तेज से विकास किया है। इसे देखते हुए गन्ना अनुसंधान संस्थान भी अपने गन्ना किसानों तक हाईटेक मशीनों को पहुंचाना चाहता है। इसके लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के साथ ही प्रशिक्षण दिया जा रहा है। संस्थान के डायरेक्टर एडी पाठक ने बताया कि, नई बीज किस्मों पर हमारे साइंटिस्ट रिसर्च तो कर ही रहे हैं, पर साथ ही वह अब इंजीनियरिंग की मदद से गन्ना खेती से जुड़े तकनीक को बेहतर करने का प्रयास कर रहे हैं।

कार्यक्रम मे नहीं पहुंचे कृषि मंत्री: भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने यूपी के कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही को बतौर मुख्य अतिथि के रूप मे आमंत्रित किया था। लेकिन यूपी बजट 2018-19 के विधानसभा मे पेश होने के कारण कृषि मंत्री कार्यक्रम मे नहीं पहुंच सके।

ट्रेंड गन्ना किसानों की बन रही पेन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान किसानों को आत्मनिर्भर बनाने लिए खुद ही उन्हें वैज्ञानिक विधि से खेती करने का प्रशिक्षण दे रहा है। इसके तहत संस्थान ने सीतापुर जिले में ब्लाक स्तर पर कुछ किसानों को टेक्निकल तरीके से खेती करने की विधि सिखाई है। ट्रेंड हुए किसान इसका लाभ क्षेत्र के अन्य गन्ना किसानों तक पहुंचा रहे हैं। संस्थान के प्रधान वैज्ञानिक एके शाह ने बताया कि जो किसान संस्था की विधि से खेती करना सीख जाते हैं, जिसके बाद खुद में ही साइंटिस्ट के तौर पर अपनी पहचान कायम कर लेते हैं।

इस विधि से करें खेती, मिलेगा ज्यादा लाभ

किसान से साइंटिस्ट अब्दुल हादी का कहना है कि क्षेत्र के दूसरे किसानों को उन्नत गन्ना खेती के लिए नाली विधि से गन्ना खेती करनी चाहिए। जहां एक फीट चौड़ी मेड़ बना उसकी दो पंक्तियों में उन्नत बीज किस्मों की बुवाई करवाई जाती है। साथ ही गन्ने की फसल में खाद से लेकर पानी की मात्रा तक की जानकारी दे रहे हैं। संस्थान का दावा है कि, आने वाले वक्त में गन्ना बेल्ट वाले क्षेत्रों में और भी साइंटिस्ट किसान खड़े किए जाएंगे, जिससे प्रदेश में उन्नत गन्ना किसानों को बढ़ावा मिल सके।

लखनऊ, 13 फरवरी 2018 दैनिक जागरण

जिंदगी की 'कड़वाहट' में खोज ली 'मिठास

जितेंद्र उपाध्याय • लखनऊ

उन्नाव के रहने वाले अशर्फी लाल को कोर्ट से.आजीवन कारावास की सजा सुना दी। जिला जेल से उत्कृष्ट चाल चलन और व्यवहार से उन्हें राजधानी के आदर्श कारागार में भेज दिया गया। वर्ष 2005 से अब वह भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में गुड़ बनाने वाली इकाई में काम करते हैं। जिंदगी की 'कड़वाहट' में 'मिठास' बांटने का उनका कार्य अनवरत जारी है। उनकी कार्यशैली से प्रभावित होकर संस्थान की ओर से स्थापना दिवस पर उन्हें सम्मानित किया जाएगा। उनके साथ कन्हैया लाल भी जेल में आजीवन कारावास की सजा काटते हैं और यहां गुड़ बनाने का कार्य भी करते हैं। आदर्श कारागार में सजायाफ्ता ऐसे 105 कैदी रायबरेली रोड स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में काम करके गन्ने के विकास के साथ किसानों की पैदावार बढ़ाने में सहयोग कर रहे हैं। जिला जेल गोसाईगंज के पास स्थापित आदर्श कारागार अपनी तरह की इकलौती जेल है जहां प्रदेशभर के सजायाफ्ता कैदी रखे जाते हैं। जिनका चालचलन सबसे अच्छा होता है, वह कैदी आनंद नगर में अपनी दुकान भी चलाते हैं और कमाई जेल प्रशासन के माध्यम से अपने घर वालों को भी भेजते हैं।

कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही करेंगे सम्मान

डॉ.एके साह

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के प्रवक्ता डॉ.एके साह ने बताया कि 16 फरवरी को संस्थान का स्थापना दिवस मनाया जाएगा। कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही मुख्य अतिथि होंगे। 100 से अधिक किसानों के साथ ही वैज्ञानिकों की ओर से गोष्ठी का आयोजन होगा। कृषि मंत्री की मौजूदगी में कर्मचारियों के साथ ही उत्कृष्ट कार्य करने वाले कैदियों को भी सम्मानित किया जाएगा।

हर दिन बनता है एक क्विंटल गुड़

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के गुड़ इकाई के प्रभारी और वरिष्ठ सुनील कुमार मिश्रा ने बताया कि हर दिन एक क्विंटल गुड़ का निर्माण होता है। आधुनिक मशीनों से रसायनमुक्त गुड़ का निर्माण होता है। कैदियों के साथ ही पूर्व कर्मचारी नजीर अहमद भी गुड़ बनाने में योगदान करते हैं।

- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान मे बना रहे कैदी
- 16 को स्थापना दिवस कर्मचारियों के साथ कैदियों का भी होगा सम्मान

राजधानी की आदर्श जेल मे प्रदेशभर के सजायाफ्ता कैदी ही रखे जाते है। चालचलन अच्छा होने पर ही उन्हें जिला जेलों से यहां भेजा जाता है। जेल के साथ ही वह जेल के बाहर काम करते हैं। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के साथ ही कई कैदी जेल के बाहर अपना स्वयं का कारोबार भी कर रहे हैं।

वीके जैन, अपर महानिरीक्षक कारागार

क्षेत्रीय प्रजनक संगोष्ठी : 19 जनवरी, 2018

संयुक्त बैठक : 19 अप्रैल, 2018

स्थापना दिवस : 16 फरवरी, 2018

स्थापना दिवस : 16 फरवरी, 2018

हिंदी कार्यशाला : 12 जून, 2018

नराकास बैठक : 26 जून, 2018

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ना उत्पादन एवं सुरक्षा पर मूल, नीतिगत एवं अनुकूलक शोध करना तथा देश के उपोष्ण क्षेत्रों के लिए गन्ना किस्मों के प्रजनन पर कार्य करना।
- उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर प्रयुक्त शोध का समन्वयन एवं अनुश्रवण।
- प्रौद्योगिकी का प्रसार एवं क्षमता निर्माण

एक कदम स्वच्छता की ओर

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333